चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

www.chauthiduniya.com

1986 से प्रकाशित | दिल्ली, 13 फरवरी-19 फरवरी 2012 | मूल्य 5 रुपये

सत्ता की वसीयत सियासत की विरासत

पेज-3

रिश्ता वोट से विकास से नहीं

पेज-4

राजनीतिक दलों का दलित प्रेम दिखावा है

पेज-5

साई की महिमा

पेज-12

सेनाध्यक्ष की जन्मतिथि का मामला

सरकार की प्रक्रिया दुर्भावना से ग्रस्त है

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

एक वरिष्ठ मंत्री ने निजी तौर पर बताया कि यह मामला गंभीर राजनीतिक परिणाम ला सकता है. कुछ मंत्रियों ने ख़ुद को ग़ैर संवैधानिक अथॉरिटीज वाले कॉकस के आगे बेबस बताया. समझने वाली बात यह है कि हाल के दिनों में जितने भी घोटाले और षड्यंत्र देखने को मिले हैं, उन सब में इसी ग़ैर संवैधानिक अथॉरिटीज वाले कॉकस का प्रभाव रहा है. सरकार ने शुरू में धमकी देकर काम निकालने की सोची. जब ऐसा नहीं हुआ, तब लालच दिखाया. कई दूतों को भेजकर जनरल को यह संदेश दिलवाया कि रिटायरमेंट के बाद उन्हें अन्य सुविधाएं दी जाएंगी. जब इससे भी सरकार जनरल को नहीं ख़रीद पाई, तब कुछ मध्यस्थों के सहारे समझौता कराने की कोशिश की गई, लेकिन बीच-बीच में मीडिया ने इस मामले में कुछ ऐसे पर्दाफ़ाश किए, जिनसे सरकार की मुश्किलें बढ़ गईं.

मनीष कुमार

सुप्रीम कोर्ट के बाहर मीडिया का हुजूम और अंदर खचाखच भरी अदालत में भारत के इतिहास के एक अजीबोग़रीब मामले की सुनवाई हुई. यह मामला थल सेनाध्यक्ष की जन्मतिथि का है. एक तरफ़ भारत सरकार और दूसरी तरफ़ एक ईमानदार सेनाध्यक्ष, जिसे एक साज़िश के तहत ज़लील करने की कोशिश की गई. बीती 3 फरवरी को जब सुनवाई शुरू हुई तो थोड़ी ही देर में जजों के सवालों से सरकार की ऐसी किरकिरी हुई कि सरकारी वकील को कोर्ट से वक़्त मांगना पड़ा. थल सेनाध्यक्ष वी के सिंह की जन्मतिथि के मामले में सरकार को करारा झटका लगा है. इस मामले में चौथी दुनिया ने सबसे पहले सरकार की करतूतों के सबूत पेश किए थे. पिछले कई महीनों से चौथी दुनिया ने इसके अलग-अलग पहलुओं को आपके सामने रखा. चौथी दुनिया इस मामले से जुड़े षड्यंत्र, घोटाले, भ्रष्टाचार, उत्तराधिकारी चयन और हथियारों की ख़रीद-बिक्री का पर्दाफ़ाश कर चुका है. सुप्रीम कोर्ट ने जो सवाल उठाए, उनका ख़ुलासा चौथी दुनिया में पहले ही हो चुका है. सच्चाई यह है कि सारे सबूत और दस्तावेज़ बताते हैं कि जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि सिर्फ़ 10 मई, 1951 है.

सुनवाई के दौरान ऐसे कई सवाल उठे, जिनका जवाब सरकार ईमानदारी से नहीं दे सकती. सुप्रीम कोर्ट ने सरकार की उस प्रक्रिया पर ही सवाल उठा दिया, जिसके ज़रिए रक्षा मंत्रालय ने यह तय किया था कि जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1950 है. सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सरकार इस मामले में नेचुरल जस्टिस और क़ानून के सिद्धांतों के ख़िलाफ़ है. अदालत ने यहां तक कह दिया कि सरकार ने जनरल वी के सिंह के मामले में जिस तरीक़े से उनकी वैधानिक शिकायत को ख़ारिज किया, वह दुर्भावना से ग्रस्त लगता है. रक्षा मंत्री ए के एंटनी ने बीते 30 दिसंबर को एक आदेश जारी किया था, जिसमें जनरल सिंह की उस वैधानिक शिकायत को ख़ारिज कर दिया गया था, जिसमें कहा गया था कि सेना के रिकॉर्ड में उनकी जन्मतिथि 10 मई, 1950 नहीं, बल्कि 10 मई, 1951 है. न्यायमूर्ति आर एम लोढ़ा एवं न्यायमूर्ति एच एल गोखले की पीठ ने सरकार से कई सवाल पूछे. कोर्ट का मानना था कि रक्षा मंत्रालय का 21 जुलाई, 2011 का वह आदेश अटॉर्नी जनरल की राय पर आधारित था, जिसमें जन्मतिथि 10 मई, 1950 मानी गई थी. कोर्ट ने पूछा कि क्या सरकार 30 दिसंबर का अपना आदेश वापस लेना चाहेगी. अटॉर्नी जनरल जी ई वाहनवती ने कहा कि वह इस मुद्दे पर सरकार के निर्देश प्राप्त करेंगे. सरकार की निर्णय लेने की प्रक्रिया पर प्रश्न खड़ा करते हुए कोर्ट ने कहा कि जितनी चिंता निर्णय को लेकर नहीं है, उतनी निर्णय लेने की प्रक्रिया को लेकर है, जो कि दुर्भावना से ग्रस्त है, क्योंकि 21 जुलाई का आदेश अटॉर्नी जनरल की राय पर विचार करके दिया गया और जब 30 दिसंबर को सेनाध्यक्ष की ओर से दी गई वैधानिक शिकायत पर निर्णय किया गया, तब भी अटॉर्नी जनरल की राय पर विचार विमर्श किया गया. कोर्ट ने सवाल उठाया कि सरकार ने दोनों बार अटॉर्नी जनरल की राय क्यों ली.

जब यह मामला सुप्रीम कोर्ट पहुंचा, तो भारत सरकार ने कहा कि न्यायालय बिना उसका पक्ष जाने कोई फ़ैसला न करे. सरकार के पास जनरल वी के सिंह के ख़िलाफ़ प्रमाण ही प्रमाण हैं, लेकिन वे प्रमाण ऐसे हैं, जिन्हें सरकार ने ख़ुद ही बनाया है, उनका कोई क़ानूनी आधार नहीं है. सरकार के पक्ष में कपिल सिब्बल, चिदंबरम, सलमान ख़ुर्शीद एवं अभिषेक मनु सिंघवी हैं, जो सुप्रीम कोर्ट के बड़े वकील हैं और जिनकी राय से भारत सरकार चल रही है. फिर वाहनवती हैं, जो सच को झूठ और झूठ को सच करने की कला में माहिर हैं. यह हम इसलिए कह रहे हैं, क्योंकि क़ानून मंत्रालय ने अपने ही द्वारा दी गई राय को बिना कोई क़ानूनी आधार बताए बदल दिया. इसके अलावा सरकार के पक्ष में पत्रकारों की एक बड़ी फ़ौज है, जो अपने प्रोफेशन की इज़्ज़त की परवाह किए बिना अख़बारों में सरकार के पक्ष में रोज़ झूठी कहानियां छाप रही है और टेलीविजन में कुछ ऐसे महान दलाल क़िस्म के संपादक हैं, जो राज्यसभा में राष्ट्रपति द्वारा नॉमिनेट होने की लालसा में सरकार के पक्ष में बेशर्म जुगाली कर रहे हैं. हम भी चाहते हैं कि सरकार का समर्थन करें, लेकिन हमारा ज़मीर कहता है कि हम सच का साथ दें और सच तो पूर्ण रूप से तभी साबित होगा कि जब सुप्रीम कोर्ट अपना फ़ैसला सुनाएगा. हमारे पास सरकार द्वारा छुपाए हुए तथ्य सामने आए हैं, जिन्हें हम भारत के सर्वोच्च न्यायालय के सामने जीवित प्रमाण की तरह पूरी ज़िम्मेदारी से रख रहे हैं. रक्षा मंत्रालय 1996 में भी ऐसा ही एक कमाल कर चुका है. उसने झूठ को सच और सच को झूठ उस समय भी बताया था. यह घटना सुप्रीम कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट के सुप्रीम कोर्ट यानी आप यानी भारत की जनता के लिए न केवल आंख खोलने वाली है, बल्कि यह बताती है कि पर्दे के पीछे किस तरह का अप्रिय, अभद्र और ग़ैर क़ानूनी काम होता है. एक कर्नल रमेश चंदर जोशी हैं. उन्हें मिलिट्री सेक्रेटरी यानी एमएस ब्रांच से रिटायरमेंट के लिए एक आदेश पत्र मिला. यह पत्र इस आधार पर जारी किया गया था कि उनकी जन्मतिथि 22 सितंबर, 1944 दर्ज है. हालांकि एडजूटेंट ब्रांच में स्पष्ट रूप से उनकी जन्मतिथि 25 नवंबर, 1945 दर्ज थी. कर्नल जोशी ने इस बारे में एमएस ब्रांच को पत्र भेजकर संपर्क किया, लेकिन उनके पत्र का कोई जवाब नहीं आया. आदेश के मुताबिक़ कर्नल जोशी को 30 सितंबर, 1996 को रिटायर होना था. जब उनके पास कोई विकल्प नहीं बचा, तब उन्होंने आर्मी चीफ से सीधे संपर्क किया. उसके बाद जल्द ही उन्हें एक संदेश आया. हेडक्वार्टर से आए इस संदेश में पहले भेजे गई पत्र के आदेश को निरस्त करने की बात थी. साथ ही कहा गया था कि उनकी जन्मतिथि अब 25 नवंबर, 1945 मान ली गई है और वह अगले आदेश तक अपनी सेवा जारी रखें. इसी तरह का केस जनरल सिंह का भी है. उनके यूपीएससी फॉर्म में जन्मतिथि ग़लत भरी गई थी, जिसे बाद में यूपीएससी द्वारा

(शेष पृष्ठ 2 पर)

झूठ को सच बनाने की नाकाम कोशिश

सरकार की एक और दलील है कि 10 मई, 1950 के आधार पर ही आर्मी चीफ के प्रमोशन हुए हैं और प्रमोशन से जुड़े मामले देखने वाली आर्मी की मिलिट्री सेक्रेटरी (एमएस) ब्रांच के दस्तावेज़ों में भी जनरल सिंह की यही जन्मतिथि अंकित है, लेकिन एक अख़बार ने एक सनसनीख़ेज़ जानकारी दी है कि ख़ुद एमएस ब्रांच के एक अहम दस्तावेज़ में जनरल वी के सिंह के प्रमोशन के संदर्भ में बतौर जन्मतिथि 10 मई, 1951 का ही ज़िक्र है. हैरानी की बात यह है कि एमएस ब्रांच के एक अहम दस्तावेज में बतौर जन्म वर्ष 1951 का ज़िक्र होने के बावजूद इस विसंगति को दूर करने की कोशिश नहीं की गई. यह कहानी शुरू होती है 25 फरवरी, 2011 से, जब आर्मी की एजी ब्रांच ने एक आदेश जारी करके एमएस ब्रांच से कहा कि वह अपने दस्तावेज़ों में सुधार करते हुए जनरल सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1951 अंकित कर ले. एमएस ब्रांच ने 16 मार्च, 2011 के एक पत्र में रक्षा मंत्रालय के सक्षम अधिकारी से इस आशय की स्वीकृति लेने का अनुरोध किया. 30 मार्च, 2011 को कंट्रोलर डिफेंस अकाउंट (सीडीए-ओ) ने एजी ब्रांच के सवाल के जवाब में इस बात की पुष्टि कर दी कि उसके दस्तावेज़ों में भी जनरल सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1951 है. ख़ास बात यह है कि आर्मी लिस्ट में हुई प्रविष्टियां सीजीडीए के ज़रिए ही प्रमाणित की जाती हैं और सीडीए-ओ सीधे इसके दायरे में आता है. इसके बाद सामने आया एमएस ब्रांच द्वारा एक जुलाई, 2011 को जारी वह मेमो, जिसमें साफ़ लिखा है कि पिछले सेलेक्शन बोर्ड के रिकॉर्डों की पड़ताल कर ली गई है और विभिन्न रैंकों के प्रमोशन पर विचार करते वक़्त तैयार की जाने वाली मास्टर डेटा शीट में जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1951 ही अंकित है यानी जनरल वी के सिंह के प्रमोशन पर ग़ौर करते समय भी 10 मई, 1951 की जन्मतिथि पर विचार किया गया था. अब सवाल उठता है कि सरकार से इतनी बड़ी ग़लती हुई कैसे, क्या वह किसी स्कूली बच्चे की जन्मतिथि का विवाद सुलझा रही थी, जो उसने इतनी बड़ी भूल को ऐसे ही जाने दिया या फिर रक्षा मंत्रालय में बैठे अधिकारी इतने ताक़तवर हो गए हैं कि वे जो चाहें, कर सकते हैं. क्या सरकार इस बात को समझ नहीं सकी है कि इस विवाद की वजह से सेना के जवानों के हौसले पर असर पड़ रहा है. जब एमएस ब्रांच के दस्तावेज़ों में भी जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1951 है तो इस बात को सरकार अब तक क्यों छुपाती रही. आख़िर इतने दस्तावेज़ों के बावजूद रक्षा मंत्रालय ने जनरल वी के सिंह का पक्ष सुने बिना ही उनका दावा कैसे ख़ारिज कर दिया. अब यह सवाल उठने लगेगा कि सरकार की ज़िद की वजह क्या है, उसने पूरे देश को क्यों गुमराह किया, देश के एटॉर्नी जनरल ने बिना तहक़ीक़ात किए सरकार को अपनी राय क्यों दी, सरकार ने अब तक रक्षा मंत्रालय के अधिकारियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई क्यों नहीं की. सरकार की दूसरी दलील ख़ारिज हो गई है, अख़बार में छपी इस रिपोर्ट से सरकार की मुसीबतें बढ़ गई हैं.

कपार्ट में काम करने वाले अधिकारियों को भोजन के लिए मुफ्त कूपन दिया जाता था, जिससे वे होटल में जाकर खाना खाते थे.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

प्रसार भारती की परेशानी

पंजाब के चुनाव के बाद सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के बाबुओं को किसी तरह की कार्रवाई की उम्मीद है. सूचना एवं प्रसारण मंत्री अंबिका सोनी का मंत्रालय में आना-जाना बढ़ गया है. प्रसार भारती के अंदर उच्चाधिकारियों के बीच झगड़ा भी बढ़ता जा रहा है. जो लोग यह समझ रहे थे कि बी एस लाली के मामले के बाद इस विभाग में सब कुछ ठीक हो जाएगा, वे ग़लत सोच रहे थे. 1974 बैच एवं नगालैंड कैडर के आईएएस अधिकारी ए के जैन प्रसार भारती के सदस्य (वित्त) हैं और उन्हें अब यहां परेशानी हो रही है. वह अपने गृह कैडर में वापस जाना चाहते हैं. ग़ौरतलब है कि ए के जैन ही वह अधिकारी हैं, जिन्होंने बी एस लाली के समय हुए भ्रष्टाचार को प्रकाश में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी. पिछले महीने बी एस लाली सेवानिवृत्त हो गए हैं. इसके बाद जैन को लगता है कि अब परेशानी उन्हें होने वाली है. अब देखना यह है कि प्रसार भारती में क्या होता है. उसकी स्थिति में सुधार होता है या फिर उसे अभी कुछ दिनों तक इंतज़ार करना पड़ेगा.

कब ख़त्म होगा इंतज़ार

यूपीए सरकार कुछ महत्वपूर्ण विभागों में वरिष्ठ अधिकारियों को नियुक्त करने में असफल रही है. इसलिए वहां रिक्तता की स्थिति उत्पन्न हो गई है. उदाहरण के तौर पर नागरिक उड्डयन विभाग को देख सकते हैं. इस विभाग के महानिदेशक पद पर किसी स्थायी अधिकारी की नियुक्ति नहीं हो सकी है. पिछले नवंबर माह में भारत भूषण का कार्यकाल समाप्त हो गया था, लेकिन उन्हें तब तक के लिए रोक लिया गया है, जब तक किसी उपयुक्त अधिकारी की खोज पूरी नहीं हो जाती. अब सरकार यह विचार कर रही है कि इस विभाग में नियुक्ति के लिए निर्धारित अनुभव संबंधी योग्यता कम कर दी जाए. यह विचार किया जा रहा है कि इस पद के लिए निर्धारित 12 साल का अनुभव कम करके 5 साल कर दिया जाए. ग़ौरतलब है कि जब बी रवि नागरिक उड्डयन मंत्री थे, तब उन्होंने इसे तीन साल करने की बात की थी. अजीत सिंह अभी नागरिक उड्डयन मंत्री हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश के चुनाव के कारण इस ओर ध्यान देने का समय उनके पास नहीं है. अब देखना यह है कि भारत भूषण को ही स्थायी बना दिया जाता है या फिर किसी अन्य की नियुक्ति की जाती है. संयुक्त महानिदेशक के पद पर काम कर रहे ए के शरण को भी नियुक्त किया जा सकता है. पता नहीं, कब तक इस विभाग में असमंजस की स्थिति बनी रहेगी.

जयराम रमेश और बाबू

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश के कार्यक्षेत्र में किसी बाबू को अब मुफ्त का भोजन नहीं मिलेगा. जयराम रमेश के इस फ़ैसले से उनके मंत्रालय एवं उससे जुड़े विभाग के ख़र्चे कम हो जाएंगे. उनका पहला ध्यान कपार्ट (काउंसिल फॉर एडवांसमेंट ऑफ पीपुल्स एक्शन एंड रूरल टेक्नोलॉजी) की ओर है, जो इंडिया हैबिटेट सेंटर और भारत के अन्य क्षेत्रों में काम कर रहा है. सूत्रों का कहना है कि जयराम रमेश अपने मंत्रालय में जिस प्रकार के सुधार की बात कह रहे हैं, उसकी शुरुआत वह कपार्ट से करने वाले हैं. कपार्ट में काम करने वाले अधिकारियों को भोजन के लिए मुफ्त कूपन दिया जाता था, जिससे वे होटल में जाकर खाना खाते थे. जयराम रमेश ने इस प्रकार के कूपन दिए जाने पर प्रतिबंध लगा दिया है. उनका कहना है कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वैसे ही मंत्रालय पर ज़्यादा बोझ है, इससे धन की बचत हो जाएगी. इसमें कोई शक नहीं है कि रमेश के इस क़दम से धन की बचत होगी, लेकिन इससे अधिकारियों के बीच खलबली मचना तय है. यही नहीं, बाबुओं को इससे अधिक चिंता इस बात की है कि रमेश ने यह योजना बनाई है कि कपार्ट के 9 क्षेत्रीय केंद्रों को बंद कर दिया जाए. ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा उठाए जा रहे इस तरह के क़दमों से बाबुओं की परेशानी बढ़ना लाज़िमी है.

dilipcherian@gmail..com

साउथ ब्लॉक

अनिल कुमार को अतिरिक्त प्रभार

1976 बैच के आईएएस अधिकारी अनिल कुमार को सचिव-पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास का अतिरिक्त प्रभार दिया गया है. वह अभी सचिव-आयुष हैं. उन्हें यह कार्यभार जयति चंद्र की सेवानिवृत्ति के कारण मिला है.

सुभाष कैबिनेट सचिवालय गए

1983 बैच के आईएएस अधिकारी सुभाष चंद्र गर्ग को तारादत्त की जगह कैबिनेट सचिवालय में संयुक्त सचिव बनाया गया है. तारादत्त को उनके गृह कैडर उड़ीसा भेज दिया गया है. सुभाष कृषि एवं सहकारिता मंत्रालय में संयुक्त सचिव थे.

दो अधिकारियों की प्रोन्नति

1989 बैच के दो आईएएस अधिकारियों पवन कुमार एवं देवानंद कटारिया को प्रोन्नत करके संयुक्त सचिव बनाया गया है.

प्रमोद साहा निदेशक और चित्तरंजन जेएस बने

1998 बैच के आईसीएएस अधिकारी प्रमोद कुमार साहा को उच्च शिक्षा विभाग में निदेशक बनाया जाएगा. वह रमेश तिवारी की जगह लेंगे. इसी तरह 1987 बैच के आईएएस (सीजी) अधिकारी चित्तरंजन कुमार खेतान को शहरी विकास मंत्रालय में संयुक्त सचिव बनाया गया है. वह शैलेष कुमार सिंह की जगह लेंगे, जिन्हें कोयला मंत्रालय में संयुक्त सचिव बनाया गया है.

अनिल गुप्ता की विदाई

1979 बैच के आईएएस अधिकारी अनिल कुमार गुप्ता को उनके गृह कैडर उत्तर प्रदेश भेज दिया गया है. वह कृषक भारती को-ऑपरेटिव लिमिटेड (कृभको) में सीवीओ के पद पर काम कर रहे थे.

सरकार की प्रक्रिया दुर्भावना से ग्रस्त है

पृष्ठ एक का शेष

और फिर नेशनल डिफेंस अकादमी द्वारा सुधार लिया गया था. कर्नल जोशी इस बात पर आश्चर्य व्यक्त करते हैं कि जब उनके केस में सुधार हो गया, तब जनरल सिंह के केस में क्यों नहीं हो रहा है.

रक्षा मंत्रालय ने सेना की एजी ब्रांच को यह निर्देश दिया है कि हर दस्तावेज़ों में जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1950 कर दी जाए. साथ ही पत्र में आदेश के अनुपालन की रिपोर्ट मंत्रालय को भेजने के लिए कहा गया है. सेना प्रमुख के दावे को ठुकराते हुए रक्षा मंत्रालय ने 21 जुलाई के अपने पहले आदेश में एजी ब्रांच से कहा था कि वह जनरल सिंह का जन्म वर्ष 1950 दर्ज करे. इस निर्देश से विवाद ने एक नया मोड़ ले लिया है. वैसे चीफ ऑफ द आर्मी स्टाफ जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि के विवाद में हर दिन एक नया ट्विस्ट आ जाता है. सरकार की ज़िद है कि वह जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1950 मनवा कर ही छोड़ेगी. मामला सुप्रीम कोर्ट के सामने है, लेकिन सरकार हर दिन कुछ न कुछ नया ज़रूर कर देती है. पहला सवाल यह है कि क्या सरकार को सुप्रीम कोर्ट की बुद्धि और विवेक पर भरोसा नहीं है. अगर भरोसा है तो सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई से पहले रक्षा मंत्रालय ने यह रुख़ क्यों अपनाया. इस निर्देश में सेना की एडजूटेंट जनरल ब्रांच से कहा गया है कि रिकॉर्ड को दुरुस्त कर उसमें जनरल वी के सिंह का जन्म वर्ष 1950 दर्शाया जाए, जबकि जनरल वी के सिंह ने इस बात का सबूत पेश किया है कि उनकी जन्मतिथि 10 मई, 1951 है. वैसे यह विवाद बिल्कुल साधारण है. किसी भी व्यक्ति की जन्मतिथि तय करने के लिए हाई स्कूल का प्रमाणपत्र पर्याप्त होता है. इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि किसी व्यक्ति ने किसी फॉर्म में क्या भरा है. दूसरी बात यह है कि सरकार का दावा है कि सेना की दो शाखाओं में जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि अलग-अलग है. सरकार कहती है कि सैन्य सचिव ब्रांच यानी एमएस ब्रांच में उल्लिखित तिथि ही सही है. एमएस ब्रांच ने जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1950 मानी है, लेकिन सेना की ऑफिशियल रिकॉर्ड कीपर यानी एडजूटेंट जनरल (एजी) ब्रांच में जनरल सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1951 ही दर्ज है. यह बात सामने आ चुकी है कि रक्षा मंत्रालय ने एमएस शाखा द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर यह फ़ैसला किया, जबकि जन्मतिथि निर्धारित करने का अधिकार इस शाखा के पास नहीं है. सरकार की तरफ़ से न सिर्फ़ आधिकारिक निर्देश दिए जा रहे हैं, बल्कि मीडिया के ज़रिए भ्रम भी फैलाया जा रहा है. कुछ दिन पहले यह भी ख़बर आई थी कि जनरल वी के सिंह और सरकार में समझौता हो गया है. सरकार ने जनरल वी के सिंह की जन्मतिथि 10 मई, 1951 मान ली है और जनरल वी के सिंह भी इस साल रिटायर होने के लिए राज़ी हो गए हैं. यह ख़बर झूठी थी, जिसे सरकार की तरफ़ से मीडिया में लीक किया गया. देश वैसे ही ख़राब दौर से गुज़र रहा है. ऐसे में सरकार को कई सवालों के जवाब देने हैं. इतिहास में पहली बार सरकार और सेना सुप्रीम कोर्ट में आमने-सामने हैं. इस विवाद को गंभीरता के साथ सुलझाने की ज़रूरत है, लेकिन सरकार अपनी ज़िद पर अड़ी है.

ऐसी भी फुसफुसाहट है कि राजनीति, राजनीतिक चंदे, आर्म्स लॉबी, बिजनेस माफिया और अंतरराष्ट्रीय खिलाड़ी भी इस पूरे मामले में शामिल हैं. क्या कोई इस मसले का हल निकालने के लिए आगे आएगा, ताकि हमारी सेना हमारी राज्य व्यवस्था की सेवा का निर्वाह बेहतर ढंग से कर सके. जनरल वी के सिंह के मामले में तो हद हो गई. सरकार ने सारे हथकंडे अपना लिए. गुप्त रूप से प्रायोजित मीडिया के ज़रिए भी जनरल सिंह को अदालत जाने से रोकने और इस्तीफ़ा दिलवाने के लिए अभियान चलाया गया. इस बात का भी भय दिखाया गया कि सुप्रीम कोर्ट जनरल सिंह की याचिका पर सवाल उठाएगा और इसे आर्म्ड फोर्स ट्रिब्यूनल में ले जाने के लिए कहेगा. दरअसल, कुछ कारणों से आर्म्ड फोर्स ट्रिब्यूनल के पक्ष में माहौल बनाने की कोशिश की गई. ज़ाहिर है, जनरल सिंह की जन्मतिथि का मसला व्यक्तिगत नहीं रह गया. कई ऐसी सिस्टमैटिक चीज़ें थीं, जिनके प्रभाव में यह मसला यहां तक पहुंच गया. इस बात की जांच होनी चाहिए कि वे कौन सी ऐसी अंदरूनी और बाहरी बातें थीं, जिनसे यह मसला यहां तक पहुंचा. ऐसे कौन से बाहरी प्रभाव या दबाव थे. उन सबकी जांच होनी चाहिए. भारतीय सेना को नुक़सान पहुंचाने वाली ऐसी कौन सी ताक़तें हैं, जिन्होंने एक व्यक्तिगत मसले को इतना बड़ा बना दिया. आख़िर ऐसा क्यों हुआ? इस सबकी भी जांच की जानी चाहिए. ज़्यादातर सैन्य अधिकारियों का मानना है कि इस मामले में विवाद के लिए जगह ही नहीं है. एमएस ब्रांच इस मसले को बहुत आसानी से हल कर सकती थी. 36

फोटो-प्रभात पाण्डेय

वर्षों तक लगातार जनरल सिंह की वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट में उनकी जन्मतिथि 10 मई, 1951 ही दर्ज होती रही है. मिलिट्री सेक्रेटरी ब्रांच इसे स्वीकार कर इसमें सुधार कर सकती थी. आर्मी लिस्ट में इस तरह के कई मामले हैं, जहां जन्मतिथि या आईसी नंबर या नाम ग़लत दर्ज हो जाता है. कई अधिकारी लेफ्टिनेंट जनरल के पद पर रहते हुए रिटायर हो गए, सिर्फ़ आर्मी लिस्ट में ग़लत आईसी नंबर दर्ज होने की वजह से. यदि मिलिट्री सेक्रेटरीज सचमुच मेन ऑफ ऑनर हैं तो उन्हें अपनी ग़लतियां स्वीकार करनी चाहिए और एमएस ब्रांच की कार्यप्रणाली सुधारनी चाहिए. आर्मी को जानने वालों के बीच ऐसी चर्चा भी है कि ये जेंटलमैन कम से कम दो सेनाध्यक्षों के साथ मिलकर इस षड्यंत्र में शामिल हो चुके थे. इन्होंने जानबूझ कर जनरल सिंह की जन्मतिथि नहीं ठीक की और आर्मी लिस्ट को हथियार बनाकर जनरल सिंह को ब्लैकमेल किया. सेना के क़रीब 90 फ़ीसदी अधिकारी बिना आर्मी लिस्ट देखे रिटायर हो जाते हैं. सेना में ऐसा कहा जाता है कि आर्मी लिस्ट को सिर्फ़ धोखेबाज़ या अपने करियर को लेकर सतर्क लोग ही देख पाते हैं. सवाल यह है कि जनरल सिंह ने 1950 को अपना जन्म वर्ष किन परिस्थितियों में स्वीकार किया.

सरकार कहती है कि कोर कमांडर बनाते वक़्त जब एमएस ब्रांच ने उनसे कहा था, तब जनरल वी के सिंह ने यही जन्मतिथि मान ली थी. जनरल वी के सिंह के ख़िलाफ़ यह दलील दी जा रही है कि वह अपनी जन्मतिथि 10 मई, 1950 मान चुके हैं. यही दलील सरकार और जनरल वी के सिंह के विरोधियों का सबसे बड़ा हथियार है. सिर्फ़ स्वीकार कर लेने से किसी की जन्मतिथि वह नहीं हो जाती और न उससे किसी का ड्राइविंग लाइसेंस या पासपोर्ट बन जाता है. यहां तो आर्मी चीफ का सवाल है. कोई स्वीकारोक्ति बिना डिमांड के नहीं हो सकती और जनरल सिंह के मामले में तो ब्लैकमेल की भी आशंका है. कोई भी सभ्य अधिकारी इस तरह की भाषा का इस्तेमाल नहीं करेगा, जिस तरह की भाषा का इस्तेमाल संबंधित मिलिट्री सेक्रेटरीज ने उस व्यक्ति के साथ किया, जो अगला सेना प्रमुख बनने जा रहा था. 21 जून, 2008 को लिखे गए एक पत्र में मिलिट्री सेक्रेटरी जनरल सिंह से कहते हैं कि हम लोग आपकी आधिकारिक जन्मतिथि 10 मई, 1950 मेंटेन करने के लिए मजबूर हैं और यही रिकॉर्ड एजी ब्रांच में भी मेंटेन करने के लिए बोल दिया गया है. जबकि किसी अधिकारी के व्यक्तिगत विवरण से संबंधित मामले में एमएस ब्रांच के पास एजी ब्रांच को आदेश देने का अधिकार नहीं है. 21 जनवरी, 2008 को लिखे एक अन्य पत्र में मिलिट्री सेक्रेटरी ने कहा कि हमने आपकी आधिकारिक जन्मतिथि 10 मई, 1950 मेंटेन की है और आपके सभी रिकॉर्ड में यही मेंटेन होगा. आप सुनिश्चित करें कि आप इसे स्वीकार कर रहे हैं. इसके बाद बारी आती है धमकी की. 24 जनवरी, 2008 को लिखे एक पत्र में मिलिट्री सेक्रेटरी ब्रांच ने कहा कि 21 जनवरी, 2008 को लिखे पत्र के पैरा 5 में उल्लिखित जन्मतिथि स्वीकार करने के संबंध में यदि आप अपना जवाब 25 जनवरी, 2008 के दस बजे तक नहीं देते हैं तो फिर उपयुक्त कार्रवाई की जाएगी. कोई भी इज़्ज़तदार व्यक्ति इस तरह की भाषा और सीधे-सीधे ब्लैकमेल को नहीं स्वीकार सकता. इन सबसे निपटने का जो सही और प्रतिष्ठित रास्ता हो सकता था, वही रास्ता जनरल सिंह ने अपनाया. उन्होंने पहले चार पूर्व मुख्य न्यायाधीशों की राय ली. एक दोषी व्यक्ति क्या ऐसा करता? न ही कोई दोषी व्यक्ति सुप्रीम कोर्ट में जाएगा. सिर्फ़ एक प्रतिष्ठित एवं ईमानदार आदमी ही अपने करियर के अंतिम समय में ऐसा करेगा. ऐसे में जो लोग जनरल सिंह के इस क़दम को दस महीने का कार्यकाल और पाने के लिए उठाया गया क़दम बता रहे हैं, वे दरअसल अपने नैतिक विचार और आचरण को खो चुके हैं. रक्षा मंत्रालय ने अपने आर्मी चीफ की वैधानिक शिकायत पर निर्णय लेने में चार महीने से ज़्यादा का समय लगाया, जबकि यह तय समय सीमा से ज़्यादा था. इस बीच रक्षा मंत्रालय की तरफ़ से कहा गया कि वह किसी तय समय सीमा से नहीं बंधा है. ऐसा इसलिए किया गया, ताकि समय बीतता रहे और इस बीच सक्सेशन प्लान के तहत नए आर्मी चीफ की घोषणा किए जाने में कोई परेशानी न हो. अगर रक्षामंत्री एक आर्मी चीफ की वैधानिक शिकायत के निपटारे में चार महीने का वक़्त लगा सकते हैं तो भारतीय सेना के एक जवान की शिकायत का क्या होगा, इसका अंदाज़ा लगाया जा सकता है. इसके बाद एक प्रोपेगेंडा किया गया कि सक्सेशन प्लान को ख़ारिज करने के लिए जनरल अपना इस्तीफ़ा दे सकते हैं. कुछ अधिकारियों से संपर्क करने पर उन्होंने बताया कि जनरल को इस्तीफ़ा भी नहीं देने दिया जाएगा, क्योंकि वह राष्ट्रपति की कृपा से काम करते हैं.

सेना का सिपाही पैसे के लिए नहीं जीता-मरता, वह अपनी आन-बान-शान के लिए जीता और मरता है, मारता भी है. अगर सेना के जवानों को मालूम हो जाए कि सरकार यह सोचती है कि सेना पैसे के लिए काम करती है, तो हमारी सेना पाकिस्तान की सेना हो जाएगी, हमारा लोकतंत्र पाकिस्तान का लोकतंत्र हो जाएगा. हम सेना के बारे में ऐसी सोच पैदा करके देश के लोकतंत्र को ख़तरे में डाल रहे हैं. नॉर्थ ब्लॉक और साउथ ब्लॉक के कमरों में बैठे लोग सेना की जांबाज़ी से परिचित नहीं हैं. सेना का हर सिपाही देश की ख़ातिर जान देने के लिए हमेशा तत्पर रहता है.

manish@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

वर्ष 3 अंक 49
दिल्ली, 13 फरवरी-19 फरवरी 2012
RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

संपादक समन्वय
डॉ. मनीष कुमार

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
प्रथम तल, विराट कॉम्प्लेक्स के पीछे, सरदार पटेल पथ, कृष्णा अपार्टमेंट के नज़दीक, बोरिंग रोड, पटना-800013
फोन : 0612 2570092, 9431421901

ब्यूरो चीफ (लखनऊ)
अजय कुमार
जे-3/2 डालीबाग कॉलोनी, हजरतगंज, लखनऊ-226001
फोन : 0522-2204678, 9415005111

प्रबंध संपादक
श्रीनिवास गुप्ता (ठाकुर) (उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)
सी-20, ट्रांस यमुना, एनएच-2, आगरा
फोन : 0526-4064901, 9837082462

प्रबंध संपादक (महाराष्ट्र)
प्रवीण महाजन
मुरलीधर कॉम्प्लेक्स, बुटीवाडा के सामने होटल गणराज के बाजू में टेम्पल बाजार रोड, सीताबर्डी, नागपुर-440012
फोन नं : 0712-2544988, 2549846

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-4783999/011-23418962
0120-6450888, 0120-6452888
0120-6451999
विज्ञापन व प्रसार +91 120-4783999
+91 9266627366
फैक्स न. 0120-2544378

पृष्ठ-16+4 (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड एवं महाराष्ट्र)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

कांग्रेस की परिपाटी भी लोकतांत्रिक देश में राजशाही वाली है, लिहाज़ा तमाम इल्ज़ामों को झेलते हुए भी आम कार्यकर्ताओं एवं नेताओं को मौक़ा देने की बजाय वंशवाद को तरजीह दी जा रही है.

सत्ता की वसीयत सियासत की विरासत

रूबी अरुण

हिंदुस्तान में अब विरासत की ही सियासत होगी. वंशवाद की ही राजनीति होगी. इस सियासी दुनिया में आम आदमी के लिए जगह पाना तो पहले भी मुश्किल था, अब तो नामुमकिन सी बात होगी. हां, अगर राजनीति में आपका कोई माई–बाप है, तब तो आप सपने संजोने की क़ाबिलियत रखते हैं. अगर नहीं है तो आपको राजनीति में रहने का कोई हक़ नहीं है. यह हम नहीं कह रहे, बल्कि कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी एवं उनके सलाहकारों द्वारा कांग्रेस को युवा तेवर और चेहरा देने की ख़ातिर तैयार किया गया ब्लू प्रिंट कह रहा है. हालांकि राहुल गांधी अभी उत्तर प्रदेश के चुनावी महासमर में अपनी क़िस्मत आज़मा रहे हैं. वह जीत का दावा तो कर रहे हैं, पर मतदाताओं की बेरुख़ी से परेशान भी हैं. हाड़ तोड़ मेहनत के बाद भी राहुल को नहीं पता कि उत्तर प्रदेश के मतदाताओं ने उनके मुस्तक़बिल के लिए क्या तय कर रखा है. जीत का सेहरा या हार का गुबार. बावजूद इसके राहुल ने भविष्य की योजनाएं भी तय कर ली हैं. मसलन यह कि आने वाले सालों में देश के विभिन्न राज्यों में जो विधानसभा चुनाव होने हैं, उनमें किन चेहरों को बतौर मुख्यमंत्री पेश किया जाएगा. राहुल गांधी द्वारा बनाई गई इस टीम में युवा चेहरे तो हैं, पर सभी ख़ानदानी सियासतदां हैं और बरसों से उनके बाप–दादा कांग्रेसी होने की परिपाटी निभा रहे हैं, महज़ एक को छोड़कर, वह हैं बिहार से राजद सांसद रहे और अब कांग्रेस के फ़रमाबरदार बने साधू यादव.

अभिजीत मुखर्जी

चौथी दुनिया को राहुल के सलाहकारों की टीम से जो जानकारी मिली है, उसके मुताबिक़, उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री के तौर पर प्रोजेक्ट बेनी प्रसाद वर्मा की ज़बरदस्त मुख़ालफ़त होने के बाद अब चुपके से केंद्रीय मंत्री जितिन प्रसाद को मुख्यमंत्री पद के दावेदार के रूप में सामने लाने की तैयारी की जा रही है. फ़िलहाल वक़्त और मौक़े का इंतज़ार किया जा रहा है. हरियाणा का चुनाव अभी दूर है, पर इस बार मुख्यमंत्री के रूप में भूपेंद्र सिंह हुड्डा के बेटे दीपेंद्र सिंह हुड्डा को पेश करने की तैयारी है. पंजाब में परमजीत कौर का नाम सामने है. दिल्ली में भी इस बार मुख्यमंत्री की बदली हुई शक्ल देखने को मिल सकती है, पर वह भी शीला दीक्षित के वंशज ही होंगे यानी संदीप दीक्षित. राजस्थान में राहुल गांधी अशोक गहलोत को फिर से पार्टी का चेहरा बनाने के मूड में नहीं दिख रहे, लिहाज़ा उन्होंने अपने वफ़ादार रहे और काम से ज़्यादा चाटुकारिता में यक़ीन रखने वाले सी पी जोशी को चुना है. जीवनपर्यंत कांग्रेस का लबादा ओढ़े रहे मोती लाल वोरा के सुपुत्र अरुण वोरा को राहुल ने इस बार छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री के तौर पर पेश करने का मन बना रखा है. आंध्र प्रदेश के लिए राहुल की पसंद एन रघुवीरा रेड्डी हैं. मध्य प्रदेश की कमान कांग्रेस महासचिव दिग्विजय सिंह यानी दिग्गी राजा के बेटे जयवर्द्धन सिंह को सौंपने की तैयारी कर ली गई है. पश्चिम बंगाल में, हालांकि अभी यह दूर की कौड़ी है, फिर भी वित्त मंत्री प्रणब मुखर्जी के बेटे अभिजीत मुखर्जी को ममता बनर्जी के मुक़ाबले उतारने की तैयारी चल रही है. झारखंड में बालमुचू के दिन फिर सकते हैं, उन्हें कांग्रेस का दारोमदार सौंपा जा सकता है. आख़िर में आता है बिहार, जहां राहुल गांधी की नज़र पिछड़ी जमात से आने वाले नेता साधू यादव पर है. हालांकि साधू यादव का कोई माई–बाप कांग्रेस में नहीं है और उनका सीधा मुक़ाबला अपने बहनोई लालू यादव से ही है, बावजूद इसके साधू बिहार में कांग्रेस के लिए एक मज़बूत स्तंभ का काम कर सकते हैं.

साधू यादव

मौजूदा समय में बिहार के कांग्रेसियों के बीच ज़बरदस्त कलह चल रही है. जिन भूमिहार और मुस्लिम नेताओं को कांग्रेस ने प्रदेश की कमान सौंपी थी, उन्होंने दल का बंटाधार करने में कोई कसर नहीं छोड़ी. कांग्रेस के पास कहने को भी कोई ऐसा नेता नहीं बचा, जो उसके वजूद को बचाए रख सके. ऐसे में साधू यादव कांग्रेस की मजबूरी बन चुके हैं. तमाम विवादों और आरोपों से घिरे रहने वाले साधू यादव की राह आसान नहीं है, पर युवा एवं पिछड़े होने, राजनीति में विधायक एवं सांसद के रूप में लंबे अनुभव और सभी जाति–बिरादरी में अच्छी पैठ रखने की वजह से उनका ग्राफ राहुल गांधी की नज़र में ऊंचा नज़र आ रहा है. वह भी इसलिए, क्योंकि बिहार के किसी दिग्गज कांग्रेसी की कोई औलाद इस क़ाबिल नहीं है कि उसे प्रदेश की कमान सौंपने के बारे में सोचा भी जा सके. ऐसा नहीं है कि कांग्रेस में युवा नेताओं का अकाल है या उन्हें माकूल सियासी ज़मीन नहीं दी जा सकती, पर मसला यह है कि अब राजनीति कोई मिशन नहीं, बल्कि सामाजिक वर्चस्व और आर्थिक ताक़त पाने का एक सहज ज़रिया बन चुकी है. एक बार हासिल कर लेने के बाद कोई भी राजनेता इसे आसानी से छोड़ना नहीं चाहता. इसलिए अपनी औलादों के ज़रिए वह अपनी सियासी ज़मीन पकड़े रहना चाहता है. आज कहने को संसद में तमाम युवा नेता मौजूद हैं, पर उनमें से ज़्यादातर किसी न किसी क़द्दावर नेता की संतान हैं. कांग्रेस और राहुल की कशमकश यह है कि पार्टी में जो दिग्गज नेता हैं, वे नाकाम हो चुके हैं या फिर जनता से उन्हें बेरुख़ी मिल रही है. कांग्रेस उन्हें निकाल बाहर भी नहीं कर सकती, क्योंकि बग़ावती सुर उठ सकते हैं. डर यह भी है कि अगर एन डी तिवारी की तरह इन तथाकथित दिग्गजों ने अलग पार्टी बना ली तो कांग्रेस में अंदर ही अंदर कई धड़े हो जाएंगे. ज़ाहिर है, यह हालत कांग्रेस की सेहत पर विपरीत असर डालेगी. ऐसे में सांप मर जाए और लाठी भी न टूटे वाला मुहावरा कांग्रेस के लिए मजबूरी बन चुका है. कांग्रेस की परिपाटी भी लोकतांत्रिक देश में राजशाही वाली है, लिहाज़ा तमाम इल्ज़ामों को झेलते हुए भी आम कार्यकर्ताओं एवं नेताओं को मौक़ा देने की बजाय वंशवाद को तरजीह दी जा रही है.

देखने और ग़ौर करने वाली बात यह भी है कि क्या जनता इस वंशवाद का बोझ ढोने को तैयार है? क्या अवाम राहुल गांधी और अन्य दूसरी पार्टियों द्वारा थोपी जा रही इस विरासत की सियासत के तले दबने और घुटने को राज़ी है? शायद नहीं. इसके तमाम उदाहरण हैं हमारे सामने. वर्ष 2010 में बिहार चुनाव के ठीक पहले लालू यादव और रामविलास पासवान ने अपने–अपने बेटों को राज्य की जनता के सामने पेश किया, पर हुआ क्या? नीतीश कुमार एवं सुशील मोदी जैसे नेताओं को जीत हासिल हुई, जिन्होंने अपने परिवारीजनों को सियासत से दूर रखा. तमिलनाडु के मतदाताओं ने भी करुणानिधि की वह अपील ख़ारिज कर दी, जिसमें उन्होंने लोगों को यह याद दिलाने की कोशिश की थी कि उनके परिवार द्वारा दशकों और पीढ़ियों से तमिलनाडु की सेवा की जा रही है. उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी की कमज़ोर हो रही स्थिति के बारे में भी राजनीतिक विश्लेषकों का यही अनुमान है कि जबसे मुलायम सिंह यादव ने अपने बेटे अखिलेश को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया, तबसे लोगों का उनसे मोह भंग होने लगा. नरेंद्र मोदी, जयललिता, नवीन पटनायक एवं ममता बनर्जी के पीछे जो अपार जन समर्थन है, उसकी वजह यही बताई जाती है कि इन नेताओं ने ख़ुद को वंशवाद से दूर रखा है. आम लोगों को यह लगता है कि ये नेता चूंकि भाई–भतीजावाद से दूर हैं, इसलिए जनता और देश के हित में ये बेहतर काम कर सकते हैं. यह अलग बात है कि इन नेताओं ने अपनी प्रभुत्ववादी शक्तियों का परिचय दिया है और इसके लिए विवादास्पद भी रहे हैं. विडंबना यह भी है कि पांच राज्यों में हो रहे विधानसभा चुनाव में भाजपा, सपा एवं बसपा जैसी पार्टियां कांग्रेस के ख़िलाफ़ वंशवाद को मुद्दा तो बना रही हैं, पर इस लाइलाज बीमारी से वे भी अछूती नहीं हैं. बहुदलीय भारतीय लोकतंत्र में जिस भी पार्टी को जिताऊ उम्मीदवार या युवा नेतृत्व की ज़रूरत होती है, उसकी तलाश अपने ही घर से शुरू होकर घर में ही खत्म हो जाती है. यही कारण है कि पंद्रहवीं लोकसभा में तक़रीबन आधे चेहरे ऐसे हैं, जिन्हें पारिवारिक कारणों से टिकट मिला. केंद्र में एक दर्जन से ज़्यादा मंत्री भी किसी न किसी बड़े राजनीतिक घराने का प्रतिनिधित्व करते हैं.

दीपेंद्र सिंह हुड्डा

राहुल गांधी ने जब सियासत में क़दम रखा था, तब उन्होंने कांग्रेस की युवा इकाई से परिवारवाद, संरक्षणवाद और धन बल की राजनीति का ख़ात्मा करने का अपना सपना सबके साथ साझा किया था, लेकिन उसके बाद के अपने राजनीतिक सफ़र में राहुल ने कांग्रेस की युवा इकाई में जितने उम्मीदवारों का चयन किया, वे तमाम चेहरे किसी न किसी कांग्रेसी नेता के रिश्तेदार या उनकी सरपरस्ती में पलने वाले, धन बल पर सियासत में अपनी पैठ रखने वाले लोग ही थे. ऐसे में यह एक कोरी कल्पना ही लगती है कि राहुल गांधी अपने सपने को पूरा करने की दिशा में कोई क़दम भी उठा पाएंगे या फिर कांग्रेस वंशवाद की परंपरा से उबर पाएगी. राहुल तो ख़ुद ही इस परंपरा की सबसे मज़बूत कड़ी हैं. मनमोहन सिंह ने तब तक अमानत के तौर पर देश की गद्दी संभाल रखी है, जब तक राहुल राजकाज में प्रवीण नहीं हो जाते. ज़ाहिर है, ऐसे में राहुल वंशवाद की मानसिकता से बरी कैसे रह सकते हैं. लिहाज़ा उनका नया ब्लू प्रिंट न सिर्फ़ उनकी सोच की हिमायत करता है, बल्कि केंद्र के साथ–साथ राज्यों को भी विरासत की सियासत की बेड़ी में जकड़ने की साज़िश भी रचता है.

जयवर्धन सिंह

एन. रघुवीर रेड्डी

उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी की कमज़ोर हो रही स्थिति के बारे में भी राजनीतिक विश्लेषकों का यही अनुमान है कि जबसे मुलायम सिंह यादव ने अपने बेटे अखिलेश को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया, तबसे लोगों का उनसे मोह भंग होने लगा. नरेंद्र मोदी, जयललिता, नवीन पटनायक एवं ममता बनर्जी के पीछे जो अपार जन समर्थन है, उसकी वजह यही बताई जाती है कि इन नेताओं ने ख़ुद को वंशवाद से दूर रखा है. आम लोगों को यह लगता है कि ये नेता चूंकि भाई-भतीजावाद से दूर हैं, इसलिए जनता और देश के हित में ये बेहतर काम कर सकते हैं.

ruby@chauthiduniya.com

उत्तर प्रदेश के चुनावों में मुसलमानों का वोट हासिल करने में कांग्रेस और समाजवादी पार्टी जी जान से जुटी है.

उत्तर प्रदेश

क्या मुस्लिम विधायकों की संख्या बढ़ेगी

मुस्लिम वोटों को लेकर सियासी दलों के बीच जंग चलती है और लोक–लुभावन घोषणाएं की जाती हैं, लेकिन इसका फ़ायदा मुसलमानों को होता है, इस पर सवालिया निशान लगाए जा सकते हैं. मगर मुसलमानों को इसका एक यह फ़ायदा तो ज़रूर हुआ है कि अब सियासी दलों की लिस्ट में पहले की तुलना में मुस्लिम उम्मीदवारों की संख्या धीरे–धीरे बढ़ रही है. ज़ाहिर है, इससे विधानसभा में मुस्लिम प्रतिनिधित्व बढ़ने की संभावना है. मुस्लिम समाज अब न तो राजनीतिक दलों के हाथों की कठपुतली नहीं बने रहना चाहता और न ही वह किसी सियासी पार्टी का वोट बैंक. इस सच को अब सियासी दल भी समझने लगे हैं. नतीजतन सियासी दलों की यह मजबूरी बन गई है कि वे लुभावने वादों के साथ–साथ मुस्लिम समाज के लोगों को ज़्यादा से ज़्यादा टिकट भी दें. सूबे की लगभग 20 फ़ीसद आबादी को रिझाने के लिए सभी पार्टियां जी–जान से जुटी हैं. क़रीब 144 विधानसभा क्षेत्र ऐसे हैं, जहां मुस्लिम मतदाताओं की अच्छी ख़ासी संख्या है. 16वीं विधानसभा के लिए हो रहे चुनाव में सपा और कांग्रेस की सफलता के लिए मुसलमान वोट अहम साबित होंगे. सूबे के रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, सहारनपुर, बरेली, मुज़फ्फ़रनगर, मेरठ, बहराईच, बलरामपुर, सिद्धार्थनगर, ज्योतिबाफुले नगर, श्रावस्ती, बाग़पत, बदायूं, ग़ाज़ियाबाद, लखनऊ, बुलंदशहर, वाराणसी, अलीगढ़, पीलीभीत जैसे ज़िलों की कुल 144 विधानसभा सीटों पर मुस्लिम मतदाता निर्णायक भूमिका में हो सकते हैं. यहां इनकी आबादी 20 से 49 फ़ीसद है.

अगर मुसलमानों का 30 प्रतिशत वोट भी किसी एक दल के पास पहुंच गया तो वह अहम हो सकता है. यही वजह है कि सूबे के तीन बड़े राजनीतिक दलों ने चुनाव में अच्छी ख़ासी संख्या में मुस्लिम उम्मीदवारों को टिकट दिया है. बसपा ने 85, सपा ने 78 और कांग्रेस ने 58 मुस्लिम प्रत्याशी मैदान में उतारे हैं. उत्तर प्रदेश विधानसभा में मुस्लिम विधायकों की संख्या जहां 1977 में 49 थी, वहीं 1993 में 25 हो गई. लेकिन 2002 में यह बढ़कर 47 और 2007 में 56 हो गई थी. ज़ाहिर है, अब कोई भी दल सत्ता के लिए मुस्लिम आबादी को लुभाने और भुनाने में पीछे नहीं दिख रहा है. इस बार के चुनाव में मुस्लिमों को टिकट वितरण में सियासी दलों ने काफ़ी अहमियत दी है. इस बार विधानसभा चुनाव में 222 मुसलमानों को प्रत्याशी बनाया गया है, जबकि 2007 में यह संख्या सिर्फ़ 174 थी.

मुस्लिम मतों की महत्ता 1989 से ख़ासी बढ़ी है. 1989 में 38 मुस्लिम विधायक जीते, जिसमें 10 विधायक कांग्रेस के थे. 1993 में 25 मुस्लिम विधायक थे. इसमें कांग्रेस का एक विधायक शामिल था. 1996 में अन्य दलों ने भी मुस्लिम प्रत्याशियों पर ध्यान दिया और 33 उम्मीदवार जीतकर विधानसभा पहुंचे. इसमें सबसे ज़्यादा 19 विधायक समाजवादी पार्टी के थे. वहीं बसपा के 8 और कांग्रेस के तीन उम्मीदवार विजयी हुए. 2002 में 47 मुस्लिम उम्मीदवार जीते, जिसमें सपा के 23, बसपा के 14 और कांग्रेस के 4 उम्मीदवार थे. 2007 में मुस्लिम विधायकों की संख्या बढ़कर 56 तक पहुंची. इसमें बसपा के 28, सपा के 22 और रालोद के 3 मुस्लिम विधायकों ने विधानसभा में उपस्थिति दर्ज कराई. वहीं दो निर्दलीय और एक यूपीडीएफ का मुस्लिम विधायक विधानसभा की चौखट लांघने में सफल रहा. ज़ाहिर है, इस बार मुस्लिम उम्मीदवारों की संख्या बढ़ी है. जिस तरह से सियासी दलों ने टिकट बांटे हैं, उससे यह उम्मीद की जा सकती है कि इस बार विधानसभा में पहुंचने वाले मुस्लिम विधायकों की संख्या 56 से ज़्यादा होगी. मुस्लिम समाज को भी इस सच को समझना होगा कि अगर राजनीति में उनकी भागीदारी नहीं बढ़ी तो उसे हर बार किसी न किसी सियासी पार्टी पर निर्भर रहना पड़ेगा. उसे अपने वोट को अपनी ताक़त बनाना होगा, राजनीति में अपनी भागीदारी बढ़ानी होगी. मुस्लिम समाज के लिए यह चुनाव एक बेहतर मौक़ा बनकर आया है और उसे इस मौक़े को गंवाना नहीं चाहिए.

लखनऊ ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विधानसभा में मुस्लिम विधायकों की संख्या

वर्ष	संख्या
1977	49
1980	47
1985	49
1989	38
1993	25
1996	33
2002	47
2007	56

वर्ष 2007 में विभिन्न दलों के मुस्लिम विधायक

बसपा	28
सपा	22
रालोद	03
अन्य	03

चार बड़े राजनीतिक दलों के 2012 के मुस्लिम प्रत्याशी

बसपा	85
सपा	78
कांग्रेस	58
भाजपा	01

पूर्वांचल के बुनकरों का दर्द

रिश्ता वोट से, विकास से नहीं

देश को आज़ाद हुए साढ़े छह दशक हो गए, लेकिन देश के लाखों बुनकरों की समस्याएं और उनकी ग़रीबी दूर होने की बजाय बढ़ती ही चली गई. साहित्यकार अब्दुल बिस्मिल्लाह ने अपने उपन्यास झीनी–झीनी बीनी चदरिया के ज़रिये लोगों को बनारस समेत समूचे पूर्वांचल के हज़ारों बुनकरों की ग़रीबी, आर्थिक शोषण और उनकी अंतहीन पीड़ा को समझाया. बुनकर पहले भी क़र्ज़दार थे और आज भी क़र्ज़ उनका पीछा नहीं छोड़ रहा. अब तो हालत यह हो गई है कि ग़ुरबत में जीने वाले बुनकर विदर्भ के किसानों की तरह आत्महत्याएं करने को मजबूर हैं. उत्तर प्रदेश में विधानसभा के चुनाव हो रहे हैं, नेताओं की ओर से बुनकरों को लुभाने की तमाम कोशिशें की जा रही हैं, लेकिन बुनकरों की हालत में कोई सुधार नहीं हो रहा है. यही वजह है कि अपनी बची–खुची ज़मीन और हथकरघे को गिरवी रख हज़ारों बुनकर महानगरों की ओर पलायन करने लगे हैं.

अभिषेक रंजन सिंह

केंद्र की यूपीए सरकार से पूर्वांचल के लगभग ढ़ाई लाख बुनकरों को काफ़ी उम्मीदें थीं. बुनकरों के लिए करोड़ों रुपये के बजट का ऐलान सुनते ही बुनकरों को यक़ीन हो गया कि उनकी हालत अब सुधरने वाली है, लेकिन जब हक़ीक़त सामने आई तो वे ख़ुद को ठगा हुआ महसूस करने लगे. उनकी तमाम उम्मीदों पर पानी फिर गया. दरअसल, पिछले साल जब उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव की सुगबुगाहट हो रही थी, उस वक़्त कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी की पहल पर केंद्र सरकार ने बुनकरों के लिए 6234 करोड़ रुपये का पैकेज घोषित किया था. हालांकि चुनाव आचार संहिता की वजह से इसका कोई लाभ बुनकरों को नहीं मिल रहा है. यहां सवाल यह है कि क्या बुनकरों की समस्या से केंद्र और राज्य सरकारें पहले से वाक़िफ़ नहीं थे. चुनाव क़रीब आने पर ही उन्हें बुनकरों की याद आती है और उनके लिए ख़ज़ाने का मुंह खोल देते हैं, लेकिन चुनाव के समय की जाने वाली ऐसी घोषणाएं अक्सर चुनाव आचार संहिता के दायरे में चली आती हैं और महीना दर महीना गुज़रने पर कई बुनकर भूख और ग़रीबी से अकाल मौत के शिकार हो जाते हैं. वोट की सियासत में इस तरह का ऐलान कोई नई बात नहीं हैं, लेकिन देश में लाखों लोग, जो इस रोज़गार से जुड़े हैं, उनके साथ इस तरह का मज़ाक़ नेताओं को शोभा नहीं देता. पूर्वांचल की राजनीति में बुनकर, उनकी माली हालत और उनका रोज़गार एक अहम मुद्दा होता है. पूर्वांचल के तक़रीबन दर्जन भर ऐसी विधानसभा सीटें हैं, जहां बुनकरों की संख्या ज़्यादा है. चुनाव से पहले राजनीतिक दलों को उनकी फ़िक्र नहीं होती, लेकिन जैसे ही चुनाव की तारीख़ नज़दीक आती है तो उनके साथ फ़रेब करने का सिलसिला भी शुरू हो जाता है. वैसे तो लगभग सभी पार्टियों ने पूर्वांचल के ग़रीब बुनकरों के साथ वादाख़िलाफ़ी की है, लेकिन कांग्रेस पार्टी का इस मामले में कोई जवाब नहीं है. उत्तर प्रदेश में सरकार बनाने का सपना देख रही कांग्रेस ने पिछले साल बुनकरों के लिए करोड़ों रुपये जारी करने की घोषणा की. उस वक़्त यह लगने लगा था कि इसमें बुनकरों का हित कम राजनीतिक हित ज़्यादा है. यहां कांग्रेसनीत यूपीए सरकार से यह पूछा जाना चाहिए कि सात वर्षों में उसे बुनकरों की याद क्यों नहीं आई. क्या सरकार में बैठे लोगों को यह जानकारी नहीं थी कि देश में सैकड़ों बुनकर परिवार क़र्ज़ और ग़रीबी के चलते इस धंधे को छोड़ चुके हैं और जो बचे हुए हैं वे अब आत्महत्या करने की सोच रहे हैं. हालांकि राहुल गांधी से पहले प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी बुनकरों को राहत देने की बात कही थी, लेकिन राहत के नाम पर ग़रीब बुनकरों को एक फूटी कौड़ी भी नसीब नहीं हुई. क़ालीन उद्योग में कभी भदोही कारपेट का नाम दुनिया भर में मशहूर था. वाराणसी और प्रतापगढ़ ज़िले के बीच बसे भदोही की पूरे एशिया में अपनी अलग पहचान थी, लेकिन अब यहां के हज़ारों बुनकरों के लिए अपना धंधा कर पाना मुश्किल हो गया है. आज़मगढ़, चंदौली, मऊ, टाडा, मऊरानीपुर, ललितपुर, वाराणसी, इलाहाबाद और पिलखुआ के बुनकर बदहाली के शिकार हैं. हथकरघा बुनकर मज़दूर बन चुके हैं. सर्वजन हिताय और सर्वजन सुखाय का दावा करने वाली मायावती सरकार में तो बुनकरों की ज़िंदगी और बेज़ार हो गई है. वहीं दूसरी तरफ़ समाजवादी पार्टी का दावा है कि अगर उत्तर प्रदेश में उनकी सरकार बनी तो वह बुनकरों के मुरझाए चेहरे पर मुस्कान लाएंगे. शायद मुलायम सिंह यादव यह भूल रहे हैं कि उत्तर प्रदेश में कई बार उनकी सरकार रही, लेकिन अपनी सरकार में उन्होंने बुनकरों की बेहतरी के लिए कोई ईमानदार प्रयास नहीं किया. यही वजह है कि कड़ी मेहनत करने के बावजूद भी बुनकरों के लिए अपने परिवार का पेट पालना मुश्किल हो गया है.

उत्तर प्रदेश के चुनावों में मुसलमानों का वोट हासिल करने में कांग्रेस और समाजवादी पार्टी जी जान से जुटी है. इन दोनों पार्टियों को लगता है कि अगर मुसलमानों का वोट उनके पाले में आ जाता है तो लखनऊ का ताज उनके सिर पर होगा. ग़ौरतलब है कि क़ालीन और हथकरघा उद्योग में मुसलमानों की संख्या सर्वाधिक है. कांग्रेस और समाजवादी पार्टी को मुस्लिम वोट चाहिए, लेकिन इन दोनों पार्टियां ने अपने–अपने चुनावी घोषणा पत्र में बुनकरों की बेहतरी के लिए कोई ख़ास जगह नहीं दी है.

ग़रीबी के साथ अशिक्षा भी

अगर आप पूर्वांचल के उन इलाक़ों में जाएं, जहां बुनकरों की संख्या ज़्यादा है तो आप पाएंगे कि विकास की राह में यह इलाक़ा कितना पीछे छूट गया है. बजबजाती नालियां और गंदगी के बीच काम कर रहे इन लोगों ने शायद यह मान लिया है कि उनके हिस्से में इससे ज़्यादा कुछ भी नहीं. कड़ी मेहनत करने के बाद भी इन बुनकरों को आज भी न्यूनतम मज़दूरी पर काम करना पड़ रहा है. यहां न तो अच्छी सड़कें हैं और न ही अन्य बुनियादी सुविधाएं. प्रदेश में चुनावी मौसम है, लिहाज़ा नेताओं की गाड़ियों का क़ाफ़िला जब इन गांवों से गुज़रता है तो धूल भरी आंधी चलने लगती है. धूल के इस गुबार को देखने के बाद ऐसा लगता है कि नेताओं के किए गए अब तक के वादे इन्हीं धूल में खो गई हैं. बुनकरों की बस्ती के रूप में मशहूर आज़मगढ़ ज़िले का मुबारकपुर गांव, जहां कई पीढ़ियों से लोग इस धंधे से जुड़े हैं. उनका कहना है कि वे अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज पाते, क्योंकि उनके पास पैसे नहीं हैं. यहां के कई बुनकर टीबी और दमा जैसी बीमारियों के शिकार हो चुके हैं, लेकिन उनके लिए हेल्थ इंश्योरेंस जैसी कोई सुविधा नहीं है.

arsingh@chauthiduniya.com

बसपा सरकार ने पिछले साल 21 नवंबर को जब विधानसभा में भारी हंगामें के बीच प्रदेश को चार हिस्सों में बांटने का प्रस्ताव पारित किया तो लगा कि राज्य विभाजन मुख्य चुनावी मुद्दा बनेगा.

राजनीतिक दलों का दलित प्रेम दिखावा है

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

दलितों की शेष पांच दर्जन से अधिक छोटी-बड़ी जातियों एवं उपजातियों पर बसपा की पकड़ अपेक्षाकृत हल्की मानी जाती है. इसी कमज़ोरी को अपनी ताक़त बनाने के लिए भाजपा, सपा और कांग्रेस ने अपनी नज़र दलित वर्ग की जिन बिरादरियों पर लगाई है, उनमें 8.34 प्रतिशत वाल्मीकि, 3.5 फ़ीसदी पासी, तीन प्रतिशत कोरी, दो-दो फ़ीसदी धोबी एवं सोनकर और एक-एक प्रतिशत धुनिया, खरवार एवं बेलदार प्रमुख हैं.

अजय कुमार

उत्तर प्रदेश में जहां मुस्लिम वोटों के लिए जंग जारी है, वहीं दलों का दलितों के प्रति दुलार जगा है. यही वजह है कि बसपा ने 88, सपा ने 85, भाजपा ने 85 और कांग्रेस ने 87 विधानसभा सीटों पर अपने-अपने दलित प्रत्याशी उतारे हैं. मायावती ने जिन 88 दलितों को उम्मीदवार बनाया है, उनमें से 78 ख़ुद उनकी अपनी जाटव जाति के हैं, जबकि उन्होंने पासियों को 4, धोबियों को 2 और धानुकों, नटों एवं वाल्मीकियों एक-एक टिकट दिया है. दलितों की एक अन्य जाति कोरी भी प्रदेश के कई इलाक़ों में ताक़तवर मानी जाती है, लेकिन मायावती ने उसके एक भी प्रतिनिधि को प्रत्याशी नहीं बनाया. ज्ञातव्य है कि प्रदेश में दलितों की कुल 66 जातियां निवास करती हैं और गाहे-बगाहे उनमें सुगबुगाहट चलती रहती है कि मायावती सिर्फ़ अपनी जाति को आगे बढ़ाने में विश्वास रखती हैं. इसलिए उनकी सरकार में मुश्किल से चार दलित जातियों की ही भागीदारी रहती है. आंकड़ों के अनुसार, प्रदेश में कुल दलित मतदाता 3,51,48,377 हैं. यह प्रदेश की कुल आबादी का 21.15 प्रतिशत है. क़रीब 16.2 प्रतिशत दलित मतदाता गांवों में निवास करते हैं. उत्तर प्रदेश में कांशीराम के दलित उत्थान ने कांग्रेस को बौना बनाकर रख दिया. कांशीराम के बाद दलितों की रहनुमा बसपा नेत्री मायावती बन गईं. उन्होंने दलित महापुरुषों के नाम पर पार्कों की स्थापना की. उनमें उनकी मूर्तियां लगवा कर दलितों के साम्राज्य स्थापना की एक बड़ी लकीर खींच दी. फिर बाद में उन्हीं पार्कों में दलितों को बुलाकर उनके ज़मीर को जगाने का काम किया. अपार भीड़ ने मायावती के हौसले को और बढ़ा दिया, लेकिन बसपा नेत्री यह भूल बैठीं कि केवल महापुरुषों एवं अपनी मूर्तियां लगवाने से किसी दलित का विकास नहीं हो जाता, उसे जमीनी तौर पर विकास की धारा में लाना चाहिए. राजनीतिक पंडित कहते हैं कि मायावती ने सिर्फ़ ख़ुद को विकसित किया है. यहां तक कि उन्होंने अपनी मूर्तियां बनवा कर पार्कों में अपने ज़िंदा रहते लगवा दीं. दो दशकों में मायावती का क़द सौ गुना बढ़ गया.

वर्ष 2007 के चुनाव सोशल इंजीनियरिंग के बल पर जीती बसपा में दलितों में असंतोष का गुबार तब फूटने लगा, जब मायावती ने सत्ता में आते ही अपनी नई ब्राह्मण-दलित सोशल इंजीनियरिंग के तहत अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार निवारण क़ानून पर अमल रोक दिया. उनका तर्क था कि इस क़ानून का बहुत दुरुपयोग हो रहा है. परिणाम यह हुआ कि ख़ास वर्ग, चरित्र वाली प्रदेश पुलिस ने इस तर्क के संकेतों को अपनी ख़ास शैली में समझा और दलितों के विरुद्ध अत्याचारों की प्राथमिकी दर्ज करने से ही परहेज़ शुरू कर दिया. ग़ौरतलब यह भी है कि मायावती ने अपने समूचे कार्यकाल में जिन दर्जनों मंत्रियों को बर्ख़ास्त किया, उनमें एक बड़ी संख्या उनकी रही, जो दलित उत्पीड़न में अपनी संलिप्तता के कारण बदनाम हुए. उनके विरुद्ध कार्रवाई भी मायावती ने अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि बढ़ते दबाव में मजबूर होकर की. अति दलितों में इस बात को लेकर भी नाराज़गी रही कि दलित विधायकों ने उनकी समस्याओं पर क़तई ग़ौर नहीं किया, बल्कि सामंतों की तरह शोषण करते रहे. प्रदेश में ऐसे दलितों की एक बड़ी संख्या है, जो बसपा का नाम लेते ही बिफर पड़ते हैं. वे कहते हैं कि बसपा सरकार ने उन्हें क्या दिया. वे पहले भी लूट का शिकार होते थे, अब भी हो रहे हैं. एक बिस्वा भूमि का पट्टा भी घूस दिए बिना नहीं मिलता. घूस देने पर भी आवास एवं पेंशन न मिलने की शिकायतें आम हैं. उन्हें मनरेगा में सौ दिनों के रोज़गार की गारंटी में घूसखोरों से उलझना पड़ा. राशन की दुकानों से लाल कार्ड की सुविधा नहीं मिली. अंबेडकर और कांशीराम के नाम पर शुरू की गईं विकास योजनाओं से अंबेडकर गांवों में आवासों, सड़कों, स्कूलों, बिजली, सफाई और जलापूर्ति की हालत थोड़ी सुधरी है, लेकिन कोई विशेष लाभ नहीं हुआ.

अनुसूचित वर्ग की आबादी में सबसे अधिक 13 प्रतिशत जाटव हैं, जिन पर बसपा अपना एकछत्र राज मानती है. दलितों की शेष पांच दर्जन से अधिक छोटी-बड़ी जातियों एवं उपजातियों पर उसकी पकड़ अपेक्षाकृत हल्की मानी जाती है. इसी कमज़ोरी को अपनी ताक़त बनाने के लिए भाजपा, सपा और कांग्रेस ने अपनी नज़र दलित वर्ग की जिन बिरादरियों पर लगाई है, उनमें 8.34 प्रतिशत वाल्मीकि, 3.5 फ़ीसदी पासी, तीन प्रतिशत कोरी, दो-दो फ़ीसदी धोबी एवं सोनकर और एक-एक प्रतिशत धुनिया, खरवार एवं बेलदार प्रमुख हैं. दलित बाहुल्य ज़िलों पर नज़र डालें तो उनमें सीतापुर, हरदोई, इलाहाबाद, आज़मगढ़, उन्नाव, रायबरेली, खीरी, गोरखपुर, जौनपुर, आगरा, लखनऊ, बाराबंकी, सुल्तानपुर, कानपुर नगर और बिजनौर हैं, जहां दलितों की संख्या अधिक है. इसी के चलते सभी राजनीतिक दलों की निगाह इन जनपदों के दलित वोटों पर रहती है. बहरहाल सारे विपक्षी दल प्रदेश के दलितों के साथ जुड़ने को तत्पर दिखाई देते हैं, लेकिन मुश्किल इस बात की है कि मायावती द्वारा बनवाए गए पार्कों एवं स्मारकों पर धन के अपव्यय का सवाल उठाती पार्टियों के पास इस सवाल का जवाब नहीं है कि अगर वे सत्ता में आएंगी तो इन पार्कों-स्मारकों का क्या करेंगी? मुलायम सिंह की पार्टी तो उन्हें ढहाकर दलित दुश्मनी की हद तक जाने के लिए तैयार दिखती है. मुलायम सिंह का कहना है कि अगर उनकी पार्टी सत्ता में आई तो पार्कों की जगह अस्पताल खुलेंगे, जबकि कांग्रेस इस बारे में मौन है. एक अकेली भाजपा है, जिसने अपने एजेंडे में दलितों के महापुरुषों को विशेष स्थान दिया है. भाजपा नेता कहते हैं कि अगर उनकी पार्टी सत्ता में आती है तो वह स्मारकों एवं पार्कों में सूरदास, कबीरदास, तुलसीदास, मीरा, मलिक मोहम्मद जायसी एवं संत रविदास की भी मूर्तियां स्थापित करेगी. दलित सियासत का रूप बदलने की कसरत 2007 के विधानसभा चुनाव के बाद शुरू हुई, क्योंकि बसपा ने प्रदेश की 62 आरक्षित सीटों पर क़ब्ज़ा करके अन्य दलों को काफ़ी पीछे छोड़ दिया था. 1991 में 61 आरक्षित सीटों पर केसरिया झंडा फहराने वाली भाजपा मात्र सात सीटों पर सिमट कर रह गई थी. सपा के 11 एवं कांग्रेस के पांच दलित विधायक जीत दर्ज कर सके. कोशिशों का असर वर्ष 2009 में नज़र आया और लोकसभा की सुरक्षित सीटों पर बसपा के एकाधिकार को कड़ी चुनौती मिली थी. प्रदेश के 17 आरक्षित संसदीय क्षेत्रों में सपा के दस और बसपा एवं कांग्रेस के दो-दो प्रत्याशी जीते. दलित सियासत में बदलाव की उम्मीद में भाजपा ने अपना एजेंडा बदलते हुए ग़ैर जाटवों का प्रतिनिधित्व बढ़ाया है. बसपा के वोट बैंक में सेंधमारी करने के लिए एक नए एक्शन प्लान के तहत भाजपा नेतृत्व ने अन्य राज्यों के दलित नेताओं को मैदान में उतारा है. भाजपा अनुसूचित मोर्चा के राष्ट्रीय महामंत्री दिवाकर सेठ का कहना है कि दलितों को बांटने की कोई योजना नहीं है. क्षेत्रीय-जातीय गणित को ध्यान में रखकर ही पार्टी ने उम्मीदवार तय किए हैं. बसपा के कुशासन के ख़िलाफ़ दलितों में भी बेहद नाराज़गी है, जिसका लाभ भाजपा को ही मिलेगा. भाजपा ने 85 आरक्षित विधानसभा सीटों को लक्ष्य करके चुनावी रणनीति तय की है. प्रदेश को तीन जोनों में विभक्त करके केंद्रीय पदाधिकारियों को प्रभारी बनाया गया है.

इंडियन जस्टिस पार्टी के प्रमुख उदित राज का कहना है कि दलितों को आज भी वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है. आज़ादी के बाद से वाक़ई अगर दलितों के लिए प्रयास होते तो यह शब्द ही समाप्त हो गया होता. भाजपा अनुसूचित मोर्चा के राष्ट्रीय अध्यक्ष दुष्यंत गौतम की अध्यक्षता में आयोजित बैठक में वर्ष 1991 का प्रदर्शन दोहराने का संकल्प लिया गया. रामनाथ कोविंद ने दावा किया कि बसपा के तेज़ी से गिरते ग्राफ का लाभ आरक्षित सीटों पर भाजपा को ही मिलेगा. क़रीब 51 आरक्षित क्षेत्रों में भाजपा बेहतर स्थिति में है. सवाल यह है कि दलों का दलितों के प्रति प्रेम तो बढ़ा है, लेकिन दलों की दलित जंग में दलित जाएं तो कहां जाएं.

feedback@chauthiduniya.com

राज्य विभाजन चुनावी मुद्दा नहीं बना

उत्तर प्रदेश के चुनाव में क्या राज्य का बंटवारा मुद्दा है? जो परिदृश्य सामने है, उसे देखकर तो बिल्कुल नहीं लगता, जबकि मुख्यमंत्री मायावती विधानसभा में विभाजन का प्रस्ताव पारित करा चुकी हैं. जातीय समीकरणों और भ्रष्टाचार के आरोपों-प्रत्यारोपों के बीच कहीं से हरित प्रदेश, पूर्वांचल, अवध और बुंदेलखंड की आवाज़ नहीं आ रही है. इस ख़ामोशी की वजह सियासी है या कुछ और. बसपा सरकार ने पिछले साल 21 नवंबर को जब विधानसभा में भारी हंगामे के बीच प्रदेश को चार हिस्सों में बांटने का प्रस्ताव पारित किया तो लगा कि राज्य विभाजन मुख्य चुनावी मुद्दा बनेगा. मायावती इस मुद्दे को उछाल कर सपा, भाजपा, कांग्रेस और रालोद को कठघरे में खड़ा करेंगी. प्रस्ताव पारित हुए दो माह बीत चुके हैं, लेकिन कई सालों से सुलग रही विभाजन की आग जनता में तपिश पैदा नहीं कर सकी. नेताओं के भाषणों में यह मुद्दा ग़ायब है. लगता है कि छोटे राज्यों का गठन चुनावी बयार में कहीं उड़ गया. बुंदेलखंड कांग्रेस ज़रूर इसे गरमाने की कोशिश कर रही है.

पश्चिमी उत्तर प्रदेश (हरित प्रदेश)

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के चुनावी परिदृश्य से छोटे राज्यों का मुद्दा ग़ायब है. प्रदेश विभाजन की मांग करने वाले राष्ट्रीय लोकदल के चुनाव प्रचार में न तो हरित प्रदेश के नारे गूंज रहे हैं और न नेताओं के भाषण में इसका ज़िक्र है. सहारनपुर से आगरा तक होर्डिंग्स, बैनरों, पोस्टरों, दीवारों या पर्चों में कहीं भी हरित प्रदेश का ज़िक्र नहीं है. जयंत चौधरी ने बिजनौर, मुज़फ्फ़रनगर, अलीगढ़, मथुरा एवं आगरा की सभाओं में इस मुद्दे को कोई तवज्जो नहीं दी. बसपा नेता भी राज्य बंटवारे का प्रस्ताव विधानसभा में पारित कराने का श्रेय लेते नहीं दिख रहे हैं. भाजपा एवं सपा नेताओं की ज़ुबान भी ख़ामोश है.

पश्चिमी उत्तर प्रदेश (हरित प्रदेश)

क्षेत्रफल-7,000 वर्ग किलोमीटर
आबादी-क़रीब 6 करोड़
ज़िले-26
प्रति व्यक्ति सालाना आय-13,130 रुपये

बुंदेलखंड

क्षेत्रफल-29,418 वर्ग किलोमीटर
आबादी-क़रीब 1.10 करोड़
ज़िले-13 (सात उत्तर प्रदेश और 6 मध्य प्रदेश के)
प्रति व्यक्ति सालाना आय-6,624 रुपये

पूर्वांचल

क्षेत्रफल-85,844 वर्ग किलोमीटर
आबादी-क़रीब 6 करोड़, 66 लाख
ज़िले-27
प्रति व्यक्ति सालाना आय-4,665 रुपये

अवध

क्षेत्रफल-लगभग 6,000 वर्ग किलोमीटर
आबादी-क़रीब सवा 5 करोड़
संभावित ज़िले-15
प्रति व्यक्ति सालाना आय-9,500 रुपये

पूर्वांचल

पूर्वांचल राज्य बनाओ समिति, पूर्वांचल क्रांति परिषद, पूर्वांचल राज्य स्थापना समिति सहित क़रीब एक दर्जन सामाजिक-राजनीतिक संगठन पिछड़ेपन को दूर करने के लिए अलग राज्य की मांग उठाते रहे हैं. लोकमंच के अध्यक्ष अमर सिंह ने इसके लिए पदयात्रा भी की, लेकिन चुनाव के दौरान पूर्वांचल को पृथक राज्य बनाने की मांग मुद्दा नहीं बन सकी. बसपा महासचिव सतीश चंद्र मिश्रा ने पूर्वांचल की कई सभाओं में कांग्रेस और सपा पर निशाना साधा, लेकिन छोटे राज्यों के सवाल पर उनकी घेराबंदी नहीं की.

बुंदेलखंड

पिछड़ापन बुंदेलखंड में सबसे बड़ा मुद्दा है. सभी दल इसके लिए एक-दूसरे को कठघरे में खड़ा कर रहे हैं, लेकिन अलग राज्य के सवाल पर ख़ामोश हैं. बसपा भी इस सवाल पर मुखर नहीं है. बुंदेलखंड कांग्रेस के अध्यक्ष राजा बुंदेला ज़रूर इस मुद्दे को गरमाए हुए हैं. उनका मुख्य मुद्दा यही है. इसलिए कई जगह अलग बुंदेलखंड के नारे सुनने को मिल जाते हैं. स्थानीय स्तर पर बुंदेलखंड निर्माण मोर्चा, बुंदेली सेना, बुंदेलखंड विकास सेना, बुंदेलखंड लिबरेशन फ्रंट एवं बुंदेलखंड राज्य संघर्ष समिति सरीखे एक दर्जन संगठन भी इस सवाल पर सक्रिय है.

अवध

अवध क्षेत्र के अधिकांश ज़िलों में तमाम दिग्गजों की सभाएं हुईं, लेकिन कहीं भी राज्य विभाजन और अवध प्रदेश का शोर नहीं सुनाई पड़ा. यूं भी आम तौर पर अवध क्षेत्र के लोग राज्य विभाजन के पक्ष में नहीं दिखते. उन्हें लगता है कि विभाजन से राष्ट्रीय राजनीति में उत्तर प्रदेश का महत्व घट जाएगा. यहां के लोग राम और कृष्ण की साझी विरासत से वंचित हो जाएंगे. बसपा भी कहीं प्रदेश गठन का मुद्दा गरमाती नहीं दिख रही है.

अजय कुमार
feedback@chauthiduniya.com

राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत मात्रा से अधिक मार्बल ब्लॉकों का परिवहन या निर्यात राज्य के बाहर नहीं किया जा सकता, लेकिन इस नियम का पालन नहीं किया जा रहा है.

मध्य प्रदेश

अवैध खनन का काला कारोबार

कटनी और जबलपुर देश के उस केंद्रीय भू-भाग में स्थित हैं, जिसे राष्ट्र की हृदयस्थली कहा जाता है. इस इलाक़े को आज रौंदा, नोचा, खसोटा और लूटा जा रहा है. करोड़ों-अरबों की प्राकृतिक संपदा का मुनाफ़ा मुट्ठी भर हाथों में क़ैद हो रहा है. कंपनियां, सरकार, प्रशासन एवं दलाल इस सीमा तक सक्रिय हैं कि शासकीय नियम-क़ानून तो दूर, मानवीय मूल्यों का भी मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है. इन ज़िलों में संचालित हो रही खदानों से निकलने वाला सफ़ेद और रंग-बिरंगा मार्बल महानगरों में लाखों रुपये में बिककर बड़े-बड़े भवनों की शोभा तो ज़रूर बढ़ा रहा है, मगर जहां से उनका खनन हो रहा है, वहां के ज़मीनी हालात बद से बदतर होते जा रहे हैं. शर्मनाक स्थिति यह है कि शासन-प्रशासन इस कार्य में बराबर का सहभागी है. अकेले कटनी ज़िले में ही वित्तीय वर्ष 2011-12 के दौरान 1 करोड़ 6 लाख 70 हज़ार 9 सौ 92 रुपये की रिकॉर्ड राजस्व वसूली का श्रेय लूटकर ज़िले का खनिज विभाग अपनी पीठ ठोंकने में लगा हुआ है. यहां देश के समस्त राज्यों से श्रेष्ठ कोटि का बहुरंगी एवं कलात्मक मार्बल निकलता है, जिसकी मांग विदेशों तक है, लेकिन उसका बाज़ार जबलपुर, कटनी या मध्य प्रदेश न होकर केवल राजस्थान स्थित किशनगढ़, रणथंभौर और चित्तौड़ है, जहां यह मार्बल नहीं पाया जाता. मुख्यमंत्री और मध्य प्रदेश शासन को इस उद्योग-व्यवसाय के अंतर्गत चल रही विभिन्न अनियमितताओं की सूचना दी गई थी, लेकिन किसी प्रकार की कोई पहल नहीं हुई.

राज्य की जनता मध्य प्रदेश सरकार से जानना चाहती है कि आख़िर खनिज मैनुअल की धारा 2 (1) के अनुसार जिन्हें मार्बल खनिज पट्टा या लीज स्वीकृत है, उनके लिए एक वर्ष की अवधि के भीतर मार्बल काटने एवं तराशने की इकाइयां (गेंगसा एवं ग्राइंडर) राज्य में स्थापित करना अनिवार्य क्यों नहीं किया जा रहा है. तय समय सीमा के भीतर मार्बल काटने एवं तराशने की इकाइयां स्थापित न किए जाने पर पट्टे अथवा लीज को निरस्त क्यों नहीं किया जा रहा है, क़ानून का पालन क्यों नहीं कराया जा रहा है? खनिज मैनुअल से संबंधित क़ानून की धारा 2 (2) के अनुसार, खदान से उत्खनित अपरिष्कृत ब्लॉकों (मार्बल खंडों) का राज्य से बाहर परिवहन या निर्यात राज्य सरकार से मात्रा स्वीकृत कराने के उपरांत ही किया जा सकता है. राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत मात्रा से अधिक मार्बल ब्लॉकों का परिवहन या निर्यात राज्य के बाहर नहीं किया जा सकता, लेकिन इस नियम का पालन नहीं किया जा रहा है.

ग़ौरतलब है कि 148 स्वीकृत खनिज लीजों और अनुबंधों में से अनेक की अवधि समाप्त होने के कारण उनके नवीनीकरण हेतु आवेदन शासन के समक्ष प्रस्तुत किए गए हैं. ज़ाहिर है, सरकार को उनका नवीनीकरण करते वक़्त कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर भी ध्यान देना होगा. मसलन, किन-किन लीज होल्डरों द्वारा अनुबंध निष्पादन दिनांक से एक वर्ष के भीतर खनिज मैनुअल की धारा 2 (1) के अनुसार मार्बल ब्लॉकों को काटने एवं तराशने (गेंगसा एवं ग्राइंडर) की इकाइयां स्थापित नहीं की हैं? जिन्होंने खनिज मैनुअल की धारा 2 एवं अनुबंध के प्रावधानों का उल्लंघन किया है, क्या उनकी लीजें स्वयंमेव निरस्त हो गई हैं? यदि उनकी लीजें स्वयंमेव निरस्त हो चुकी हैं, तो उनके द्वारा किया गया खनन अवैध नहीं बन जाता? यदि उनका खनन अवैध है तो क्या वे अपराधी और दंड के भागीदार नहीं बन जाते? ऐसी स्थिति में क्या उनकी लीज का नवीनीकरण किया जाना भी नियम विरुद्ध नहीं माना जाएगा?

इस कारोबार से जुड़ा एक बेहद महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि जबलपुर एवं कटनी ज़िलों की बड़ी-बड़ी एवं उच्च कोटि की दरार विहीन मार्बल खदान के लीज होल्डर प्राय: राज्य के बाहर और अधिकांशत: राजस्थान के हैं, जिनके द्वारा बड़ी-बड़ी ब्लाक कटिंग मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर उत्खनन किया जा रहा है. छोटी खदानें प्राय: जबलपुर एवं कटनी के स्थानीय लोगों की हैं. इन छोटी खदानों के अपरिष्कृत मार्बल ब्लॉक प्राय: दरारयुक्त होते हैं, जिनका मूल्य बहुत कम हो जाता है. बड़ी खदानों के कुछ लीज होल्डरों द्वारा यद्यपि काटने एवं तराशने की इकाइयां स्थापित की गई हैं, लेकिन उनके द्वारा दरार विहीन ब्लॉक की स्लेब कटिंग नहीं की जाती है, अपितु छोटे मार्बल लीज होल्डरों के दरारयुक्त मार्बल ब्लॉक मिट्टी के मोल ख़रीद कर उनकी कटिंग अपनी इकाई में करके जबलपुर-कटनी एवं समीपवर्ती ज़िलों में बेचा जाता है और अपने दरार विहीन ब्लॉकों को राजस्थान के किशनगढ़, चित्तौड़ एवं रणथंभौर आदि के व्यापारियों को ऊंचे मूल्य पर बेचा जाता है, जिन्हें वहां राजस्थानी मार्बल, इंडो-इटालियन मार्बल, पाकिस्तानी एवं ब्राजील मार्बल आदि नामों से उससे भी ऊंची क़ीमत पर बेचा जाता है. जबलपुर, कटनी एवं मध्य प्रदेश के मार्बल को दरारयुक्त और घटिया मार्बल कहकर प्रचारित किया जाता है.

अरविंद वर्मा
feedback@chauthiduniya.com

समाधान क्या है

सरकार द्वारा खनिज मैनुअल का सख्ती से पालन न कराने और मार्बल उद्योग एवं बाज़ार की स्थापना की उपेक्षा करने के कारण राज्य को क्षति उठानी पड़ी है. इसलिए ज़रूरी है कि जबलपुर, कटनी एवं राज्य के अन्य क्षेत्रों में पाई जाने वाली मार्बल संपदा और उसकी गुणवत्ता का परीक्षण कराया जाए. राज्य की मार्बल खदानों हेतु किए गए आवेदनों, लीजों की स्वीकृतियों, अनुबंधों के निष्पादन एवं शर्तों के परिपालन का प्रकरणवार अध्ययन कराया जाए. यह अध्ययन कराया जाए कि किन-किन मार्बल खदानों की लीज की अवधि किन तिथियों में समाप्त हुई और किन तिथियों में उनके नवीनीकरण हेतु आवेदन किया गया. यदि आवेदक द्वारा लीज दिनांक से एक वर्ष की अवधि के भीतर मैनुअल के अनुसार काटने एवं तराशने की इकाई स्थापित नहीं की गई है तो उसे काली सूची में डाल दिया जाए. जिन आवेदकों ने शासन द्वारा निर्धारित सीमा से ज़्यादा शिलाखंड (घनमीटर) का राज्य के बाहर परिवहन या निर्यात किया, अनुमति के विरुद्ध राज्य के बाहर के उद्योगपतियों या व्यापारियों को विक्रय किया, उन्हें काली सूची में डाल दिया जाए. जिन मार्बल खदानों द्वारा लीज अवधि समाप्त होने के बावजूद उत्खनन जारी है, उनके विरुद्ध आपराधिक मुक़दमा दर्ज किया जाए. लीज अवधि समाप्त होने और निर्धारित गहराई तक उत्खनन पूरा हो जाने की स्थिति में मार्बल कचरे को खदान में पाटना सुनिश्चित किया जाए. खनिज मैनुअल की धारा 2 (1) के अनुसार, जिन्होंने लीज स्वीकृति अथवा निष्पादित अनुबंध, जो व्यवहार योग्य हो, की एक वर्ष की अवधि के भीतर मार्बल काटने एवं तराशने की इकाई स्थापित नहीं की है, उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य किया जाए. कटनी एवं जबलपुर ज़िलों के मार्बल को काटने और तराशने के लिए राजस्थान के किशनगढ़, चित्तौड़ एवं रणथंभौर आदि ज़िलों में स्थापित हज़ारों इकाइयां कटनी, जबलपुर और राज्य के अन्य इलाक़ों में स्थानांतरित की जाएं. स्थानीय लोगों के लिए रोज़गार के अवसर बढ़ाए जाएं.

इन बिंदुओं पर जांच हो

मार्बल उद्योग से राज्य को प्रति वर्ष करोड़ों रुपये विक्रय कर मिल सकता है. शासन-प्रशासन ने खनिज मैनुअल और निष्पादित अनुबंध के प्रावधानों की नियमित समीक्षा करके उसका क्रियान्वन कराया होता तो जबलपुर एवं कटनी में मार्बल उद्योग का जाल बिछ गया होता, देश का लोकप्रिय-प्रसिद्ध मार्बल बाज़ार विकसित हो गया होता और कुशल एवं अकुशल श्रमिकों को रोज़गार मिल गया होता. दूसरी ओर शासन को विक्रय कर एवं अन्य करों के रूप में हज़ारों करोड़ रुपये का राजस्व मिल जाता. अभी भी समय है कि शासन अपने खनिज मैनुअल एवं अनुबंध के प्रावधानों का कठोरता से पालन कराए. जांच करे कि किस लीज होल्डर कंपनी ने कुल उत्खनन के विरुद्ध कितने घनमीटर मार्बल की रायल्टी चुकाई है, भुगतान की गई रायल्टी के उपरांत कितने घनमीटर की रायल्टी देय है जो कि रायल्टी चोरी की श्रेणी में आती है. किन खदानों की लीज अवधि समाप्त हो गई है, लीज अवधि समाप्त होने के बावजूद मार्बल ब्लॉकों का उत्खनन क्यों किया गया. अनियमितता और रायल्टी चोरी सिद्ध होने की दिशा में समयावधि शेष रहते अनुबंध की स्थिति क्या होगी और समयावधि पूर्ण हो जाने पर ऐसी लीज का नवीनीकरण कहां तक औचित्यपूर्ण होगा.

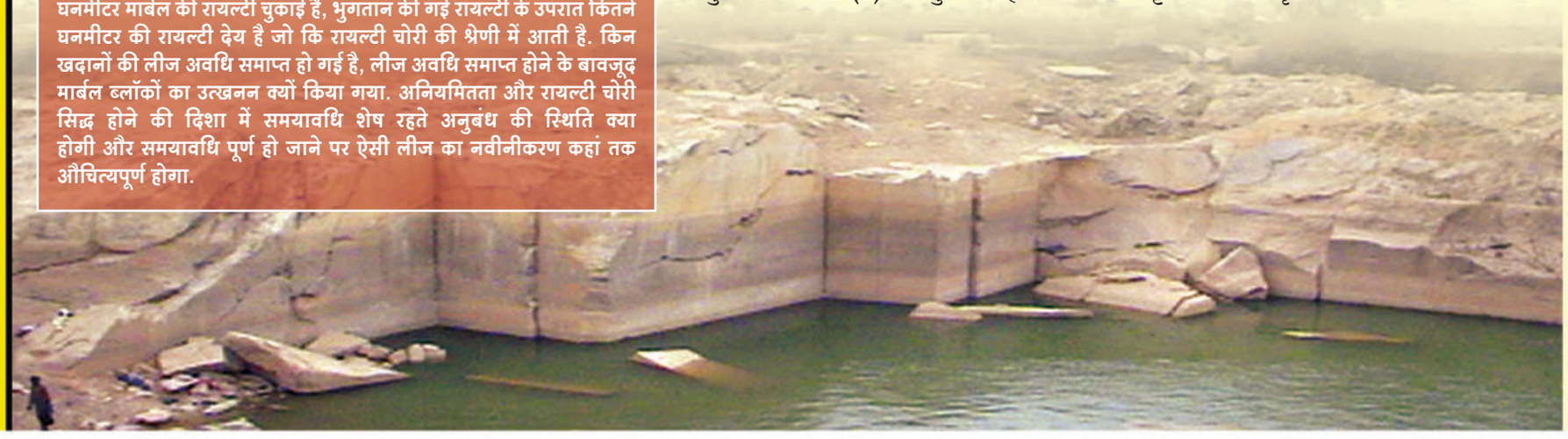

मेरी दुनिया.... रिश्वत न लेने का भ्रष्टाचार !!

मीडिया का नियमन

मॉडलर और ज़मीनी दृष्टिकोण

लगातार जटिल और भ्रामक होते मीडिया परिदृश्य ने भारत में मीडिया नीति के उलझे ईको सिस्टम के सामने नई चुनौतियां खड़ी कर दी हैं. संचार की उन्नत प्रौद्योगिकी ने मूल रूप से उन तौर-तरीक़ों को बदल कर रख दिया है, जिनके माध्यम से सूचनाओं और अर्थों को सम्प्रेषित, संगठित और प्राप्त किया जाता है. इस नई प्रगति ने आज भी उतने ही लोकप्रिय परंपरागत मीडिया के साथ-साथ मीडिया संबंधी वर्तमान नीतिगत दृष्टि पर भी प्रगति के तामझाम को लेकर सवाल खड़े कर दिए हैं. हाल के दशकों में लाए गए अनेक विधेयकों से विभाजित ढांचे को आकार देने में कॉरपोरेट हितों के प्रति भारत सरकार की ढुलमुल समझौतापरक नीति की ही प्रमुख भूमिका रही है. साथ ही साम्राज्यवादी ढांचे पर आधारित शासन का उद्देश्य भी मीडिया पर लगाम कसना है या फिर कुछ खास तत्वों पर निगरानी रखने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करना है. विनियामक प्राधिकरण इस समय अनेक सरकारी विभागों में बंटा हुआ है और संचार संयोजन विधेयक (2001) एवं प्रसारण सेवा विनियम विधेयक (2007) व्यापक एवं तर्कसंगत नीतिगत ढांचे को लागू करने के घोषित उद्देश्यों को पूरा करने में अभी सफल नहीं हुए हैं. इसलिए मीडिया संबंधी नीति पर चर्चा करने के लिए यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण समय है. क्रिश्चियन सैंडविग ने इंटरनेट आर्किटेक्चर के बारे में सही कहा है, आज की उन्नत संचार प्रणाली का उलझा हुआ ढांचा हम पर बोझ नहीं है. यह हमारे लिए कार्रवाई करने का उपयुक्त अवसर है.

सबसे पहले तो नीति निर्माण की शक्ति इस बात में होनी चाहिए कि नवीनतम परिवर्तनों, जिनके कारण कार्यात्मक रूप में संचार क्षेत्र एक ऐसे खुले और मॉडुलर रूप में आ गया है, जहां संचार संबंधी कार्य परस्पर ऑपरेटर करने योग्य मानकों के ज़रिए विभिन्न प्लेटफ़ॉर्मों में बिखर गए हैं, को समझ कर ही उन्हें पूरी तरह लागू किया जाए. इसके विपरीत विषयवस्तु, सेवाएं और पारेषण एक आर्किटेक्चर में बंधकर इकहरे ढांचे में सिमट गए हैं. मीडिया संबंधी नीतिकार मीडिया के विनियमन के लिए विभिन्न स्तरित दृष्टिकोण की वकालत कर रहे हैं, ताकि संचार क्षेत्र में आए परिवर्तनों से लाभ उठाया जा सके और संबंधित समस्याओं का समाधान खोया जा सके. विभिन्न स्तरित दृष्टि के कारण इस बात को मान्यता मिल गई है कि विशेष क़ानून द्वारा विशेष संचार प्रौद्योगिकी के विनियमन के ऊर्ध्वाधर अभिमुखीकरण के परिणामस्वरूप बहुविध इकाइयों एवं प्रौद्योगिकियों के माध्यम से वितरित संचार के विभिन्न कार्यमूलक उपादानों के समाधान के लिए क्षैतिज अभिमुखीकरण का अवसर मिलना चाहिए. इसका अर्थ यह है कि चूंकि इकहरी इकाई से दो स्तरों की ज़रूरतें एक साथ पूरी नहीं की जा सकतीं, इसलिए स्वामित्व नियंत्रण और विनियामक मामलों की जांच संचार के प्रत्येक कार्यमूलक स्तर पर होनी चाहिए. इन स्तरों में सर्वाधिक प्रमुख हैं, विषयवस्तु और भौतिक संरचना. दूसरी बात यह है कि नीति निर्माताओं को चाहिए कि वे नियंत्रण, स्वामित्व और मीडिया अभ्यास, जिन्हें ज़मीनी स्तर पर परंपरागत रूप में और नए मीडिया को तेज़ी से फैलाया जा रहा है, के जटिल स्तरों को मान्यता प्रदान करें. इस प्रकार व्यापक नीति संबंधी दृष्टि को मीडिया संगठन के प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों और ज़मीनी सच्चाई के अनुरूप विकसित करना होगा. इस संगठन में मीडिया के स्वरूप और निहितार्थों के अनुरूप प्रौद्योगिकीय, विधिक एवं नृवंश विज्ञान संबंधी अंतर्दृष्टि का समन्वय होना चाहिए. इसमें उल्लेखित तीनों मुद्दे ऐसे होने चाहिए, जिनसे नीति संबंधी वाद-विवाद उस परिदृश्य की ओर ले जाए जा सकें, जिसमें समाचार मीडिया और सार्वजनिक सेवा प्रसारण को अधिक बल मिले, क्योंकि लोकतांत्रिक राजनीति में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को नियमानुसार ही रखा जाता है.

भारत में तेज़ी से फैलते समाचार माध्यमों के लिए कोई सार्थक नीतिगत प्रयास करने से पहले यह समझना ज़रूरी है कि देश भर में समाचार निर्माण का ढांचा और स्वरूप समान नहीं है. यदि कर्नाटक जैसे कुछ राज्यों में टाइम्स ऑफ़ इंडिया जैसे राष्ट्रीय व्यवसायिक समाचार समूहों के प्रभुत्व को पिछले दो दशकों में अपेक्षाकृत कम प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा है तो तमिलनाडु जैसे राज्यों में समाचार संबंधी अन्य बाज़ारों का ढांचा राजनीतिक पक्षपात के कारण अधिक मज़बूत बना हुआ है. इसका कारण यह है कि टीवी समाचार चैनलों और स्थानीय केबल नेटवर्क का स्वामित्व प्रमुख राजनीतिक दलों के सीधे नियंत्रण में है. कर्नाटक में मुद्रण उद्योग के समेकन के पक्ष में प्रवृत्ति होने के बावजूद समाचार की परिपाटी के क्षेत्र में नृवंश विज्ञान संबंधी जांच से यह बात सामने आई है कि विस्तार का व्यवसायिक तर्क और कई माध्यमों के अभ्युदय का सीधा संघर्ष उन व्यापक सांस्कृतिक तर्क शृंखलाओं से होता है, जो वैज्ञानिक और क्षेत्रीय पूंजी के व्यापक मैट्रिक्स के अंदर समाहित होते हैं. मैसूर की रियासत में मुद्रण सांप्रदायिकता के लंबे अलिखित इतिहास में ग़ैर ब्राह्मण आंदोलन में पत्रकारों की सक्रिय भूमिका के दौर में, बीसवीं सदी की शुरुआत में पत्रकारिता के उभरते स्पष्ट स्वरूप पर निर्मित और उससे भिन्न, दोनों ही रूपों में पत्रकारों एवं समाचारपत्रों के मालिकों में संबंधपरक संबंधों, व्यवसायिक संबंधों और व्यवसायिक नेटवर्क के बीच धूमिल सीमाएं हैं. आम तौर पर बहुविध किस्में जातिगत पहचान में रूपांतरित हो जाती हैं. इसलिए जाति बल, जातीय समीकरण और जाति नेटवर्क पत्रकार समाज के अंत:संबंधीय पहलू बने रहते हैं और यही पहलू जाति आधारित निष्ठाओं से बंधे रहते हैं तथा उन्हें मज़बूत भी करते हैं. भाषागत निष्ठाएं भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें सरकार की उदारीकरण से संबंधित चालू परियोजनाओं के संदर्भ में पुनर्परिभाषित एवं पुनर्निर्मित कर लिया जाता है. अस्थिर एवं संकीर्ण होते हुए भी राजनीति के ये प्रभावी रूप इन तर्कों के ज़रिए एक ऐसे माध्यम में सम्मिलित हो जाते हैं, जिन्हें मैं भाषा माध्यम कहती हूं. ये माध्यम जनता के साथ तार्किक एवं गंभीर संवाद करते हैं. इनमें जनता के विभिन्न वर्गों से जुड़े होने के कारण लोकतांत्रिक क्षमता भी होती है, क्योंकि वे प्रतिक्रियावादी सांस्कृतिक राजनीति बख़ूबी और समान रूप से करते हैं, लेकिन यह आवश्यक नहीं कि कर्नाटक के किसी समाचार क्षेत्र में प्रचलित बहुविध तर्क देश के अन्य समाचार बाज़ारों पर भी उसी रूप में लागू हों.

भिन्न-भिन्न देशों और अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रों की आर-पार तुलना के लिए उत्तरी अमेरिका, यूरोप महाद्वीप एवं भूमध्य देशों में विद्यमान पत्रकारिता के विभिन्न मॉडलों पर डेनियल हैलिनी और पाओलो मंचिनी आदि की महत्वपूर्ण एवं समृद्ध कृतियां सुलभ हैं. भारत में भी इस प्रकार का तुलनात्मक कार्य नीति निर्माताओं के लिए लाभकारी होगा, क्योंकि इससे नियंत्रण, स्वामित्व, मीडिया में प्रचलित परिपाटियों के स्वरूप में भिन्नताओं और समाचार क्षेत्रों के प्रति बहुविध निष्ठाओं का एक बार में ही समाधान किया जा सकेगा. महत्वपूर्ण बात यह कि व्यवसायिक क्षेत्र में विजातीय समाचार परिपाटियों की अंतर्निहित उपस्थिति के कारण एक मज़बूत सार्वजनिक सेवा माध्यम के साथ-साथ सरकारी और सामुदायिक हस्तक्षेप के नवोन्मेषकारी रूपों की आवश्यकता भी बढ़ जाती है. महत्वपूर्ण होते हुए भी समन्वित संचार की कल्पना पर आधारित होने के कारण ऊपर से नीचे का विनियमन एक जीवंत, व्यापक और विचारपूर्ण मीडिया ईको सिस्टम बनाने के लिए काफ़ी नहीं है. अमेरिका में संघीय संचार आयोग (एफसीसी) से की गईं सिफ़ारिशों में एलन गोल्डमैन एवं ऐन चैन ने मीडिया को ठीक मॉडुलर और समन्वित दृष्टि के ज़रिए ही सार्वजनिक सेवा को पुनर्जीवित करने की व्यापक योजना का प्रस्ताव किया था. इन सिफ़ारिशों ने सार्वजनिक माध्यम में हस्तक्षेप के लिए नवोन्मेषकारी परिवेश निर्मित करने में नीति निर्माताओं की मदद करने के बजाय विनियमन के स्तरित मॉडल को सरकार के नियंत्रण के तर्क से बाहर कर दिया. यद्यपि उनकी कई सिफ़ारिशें त्वरित डिजिटीकरण के अमेरिकी अनुभव पर आधारित थीं और कुछ अन्य आकांक्षाओं से भी संबंधित थीं, फिर भी विकसित देशों के मानक से भारतीय संदर्भ में भी कुछ पाठ सीखे जा सकते हैं. इंटरनेट के स्तरित और नेटवर्क संबंधी आर्किटेक्चर के आधार पर उन्होंने प्रस्ताव किया कि विभिन्न प्रकार के संचार साधनों को सार्वजनिक सेवा माध्यमों की उपलब्ध एवं पुनर्जीवित सुविधाओं के ज़रिए जोड़ा, सुधारा और संवारा जा सकता है. उनका विश्वास है कि टेलीविज़न और रेडियो को पूरी तरह सरकारी सहायता पर निर्भर नहीं रहने देना चाहिए. सार्वजनिक सेवा माध्यम को ऐसे विकेंद्रीकृत तंत्र के माध्यम से व्यापक श्रेणी के विषयवस्तु प्रदाताओं एवं सूचनाकर्मियों से जुड़ना चाहिए, जो चारों स्तरों-भौतिक संरचना, संयोजन (सार्वजनिक सेवा माध्यम), संवारना (विषयवस्तु और सार्वजनिक मूल्य की सेवाओं का समर्थन) और निर्माण (ऐसी विषयवस्तु का निर्माण, जिसे बाज़ार नाकाफ़ी और ग़लत तरीक़े से प्रस्तुत करता है) के सरोकारों से संबद्ध हों.

प्रसार भारती का वर्तमान ढांचा भौतिक संरचना के स्तर को मज़बूती से संभालता है, लेकिन मॉडुलर दृष्टिकोण के अन्य पहलुओं को अभी उत्पादक रूप में नियोजित करना बाक़ी है. सार्वजनिक माध्यमों के लिए विषयवस्तु और परिपाटियों के निर्माण के लिए कई प्लेटफॉर्म हैं:-सामुदायिक रेडियो, ग़ैर सरकारी संगठन (एनजीओ), नवोन्मेषकारी समाचार पोर्टल, भ्रष्टाचार विरोधी नागरिक समितियों के प्रहरी और उप-क्षेत्रीय स्तरों के विभिन्न गांवों में फैले कार्यकर्ताओं के समूह. प्रसार भारती को चाहिए कि वह राष्ट्रीय प्रसारण स्टेशनों को क्षेत्रीय स्टेशनों के साथ जोड़ने के हब स्पोक मॉडल पर निर्भर रहने के बजाय इन नेटवर्कों को सक्रिय और बहुपक्षीय रूप में परस्पर जोड़ने, संवारने और उन्नत करने का प्रयास करे, ताकि इससे गहन स्तर पर विचारधारा में परिवर्तन आ सके और प्रौद्योगिकी नीत सरकारी शिक्षाशास्त्र के स्थान पर संचार और सामुदायिक निर्माण का नेटवर्क मॉडल आ जाए. इससे प्रसार भारती को बदलते सरोकारों की राजनीतिक रस्साकशी का शिकार बनने से बचने के लिए कोशिश करने की ज़रूरत नहीं रह जाएगी. दूरदर्शन, आकाशवाणी, मीडिया अकादमियों एवं व्यवसायिक मीडिया संघों को सरकारी सहायता (बहुत कम) मिलती है. ग़ैर मीडिया कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे सार्वजनिक सेवा माध्यम के व्यापक नेटवर्क का अंग बन जाएं, जिसमें ग़ैर व्यवसायिक विषयवस्तु की विभिन्न धाराओं को परस्पर जोड़ दिया जाए और अपने प्रभाव, पहुंच एवं अपील को बढ़ाने के लिए उसे संवारा जाए.

इससे कहीं गहरे में यह संभावना भी जुड़ी हुई है कि इसे मुख्य धारा के मीडिया की विषयवस्तु के साथ सूचना अधिकार अधिनियम के प्रावधानों से जोड़ दिया जाए. विषयवस्तु विनियमन का यह एक ख़तरनाक पहलू होगा, जिसके लिए उद्योग जबर्दस्त संघर्ष कर रहा है. जहां एक ओर कई राष्ट्रीय समाचार चैनलों ने, जिनमें अंग्रेज़ी के चैनल विशेष रूप से शामिल हैं, स्वयं आगे बढ़कर सरकारी हस्तक्षेप से बचने के लिए अपने दैनिक समाचारों में विकास और सकारात्मक समाचार देने की बाध्यता के कारण ऐसे समाचार देने शुरू कर दिए हैं, लेकिन क्षेत्रीय एवं स्थानीय स्तरों पर, जहां समाचार चैनलों और समाचारपत्रों का विस्तार तेज़ी से हो रहा है, बहुत कुछ करने की आवश्यकता है. राजनीतिज्ञों के स्वामित्व में होने या क्षेत्रीय राजनीति में किंगमेकर की भूमिका का निर्वाह करने में गर्व का अनुभव करने वाले अनेक चैनलों के कारण सार्वजनिक सूचनाओं के विस्फोट के बावजूद टीवी समाचार चैनल पूरी तरह जनोन्मुखी नहीं हुए हैं. दूसरी तरफ़ समाचारपत्रों के अनेक पत्रकार सूचना अधिकार अधिनियम के अंतर्गत सूचनाएं पाने के लिए सक्रिय हैं, लेकिन यह सब कुछ पाठकों को मात्र रिझाने के लिए आवश्यक माना जाता है. ये बातें अक्सर संपादकीय नीतियों एवं समाचार कंपनियों की विपणन नीतियों तक सीमित रहती हैं. गंभीर नागरिकों या नागरिक समूहों द्वारा विभिन्न विषयों के बारे में जुटाई गई सूचनाओं को पर्याप्त रूप में प्रसारित नहीं किया जाता, खास तौर पर तब, जबकि उनसे पाठक संख्या बढ़ाने में मदद न मिलती हो. ऐसी स्थिति में सूचना अधिकार अधिनियम के अधीन जुटाई गई सूचनाओं की उपयोगिता नहीं रह जाती और उन पर कार्रवाई करने के लिए तब तक दबाव नहीं पड़ता, जब तक उनका व्यापक प्रचार न हो. सरकार को यह विचार करना चाहिए कि वह मुख्य धारा के मीडिया के लिए राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर आवश्यक कर दे कि सूचना अधिकार अधिनियम के अंतर्गत हासिल की गईं महत्वपूर्ण सूचनाएं अपने दैनिक समाचारों में शामिल करें. यह इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि मुख्य धारा के मीडिया के पास खोजी रिपोर्टिंग के लिए संसाधनों की कमी रहती है और कारोबारी पत्रकारिता में भी खोजी उपादान की कमी रहने लगी है. आख़िरकार अधिकांश सूचनाएं सतर्क नौकरशाहों, प्रतिद्वंद्वी राजनीतिज्ञों, लोकायुक्तों एवं नागरिक समाज के कार्यकर्ताओं के प्रयासों के कारण उजागर हुई हैं. निश्चय ही मीडिया ने इनकी दृश्यता को कई गुना बढ़ा दिया है, लेकिन न तो मुख्य धारा के व्यवसायिक मीडिया संगठनों ने इस बारे में कोई पहल की और न इसे आगे बढ़ाया.

भिन्न-भिन्न देशों और अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रों की आर-पार तुलना के लिए उत्तरी अमेरिका, यूरोप महाद्वीप एवं भूमध्य देशों में विद्यमान पत्रकारिता के विभिन्न मॉडलों पर डेनियल हैलिनी और पाओलो मंचिनी आदि की महत्वपूर्ण एवं समृद्ध कृतियां सुलभ हैं. भारत में भी इस प्रकार का तुलनात्मक कार्य नीति निर्माताओं के लिए लाभकारी होगा, क्योंकि इससे नियंत्रण, स्वामित्व, मीडिया में प्रचलित परिपाटियों के स्वरूप में भिन्नताओं और समाचार क्षेत्रों के प्रति बहुविध निष्ठाओं का एक बार में ही समाधान किया जा सकेगा. महत्वपूर्ण बात यह कि व्यवसायिक क्षेत्र में विजातीय समाचार परिपाटियों की अंतर्निहित उपस्थिति के कारण एक मज़बूत सार्वजनिक सेवा माध्यम के साथ-साथ सरकारी और सामुदायिक हस्तक्षेप के नवोन्मेषकारी रूपों की आवश्यकता भी बढ़ जाती है.

सहाना उड्डपा
feedback@chauthiduniya.com

(लेखिका बंगलुरू स्थित राष्ट्रीय उन्नत अध्ययन संस्थान से डॉक्टरेट कर रही हैं)

चौथी दुनिया

कार्ल मार्क्स स्वयं कोई श्रमिक नहीं था. वह जर्मनी में 1818 ई. में पैदा हुआ था और इंग्लैंड में 1883 ई. में उसकी मृत्यु हुई.

महावीर प्रसाद आर मोरारका

पीड़ित श्रमिक वर्ग

मध्यम वर्ग के संबंध में तो कह चुके. अब लीजिए ग़रीब वर्ग को, जो भूखे हैं, मज़दूर हैं, श्रमिक हैं, भीड़ हैं, चाहे जो कह लीजिए. दुनिया में किसी देश का हो, किसी जाति का हो, स्त्री हो या पुरुष, ऐसा व्यक्ति जिसके पास निज की कोई ज़मीन-जायदाद न हो, न जिसकी कोई पूंजी हो, जिसे अपने जीवन निर्वाह के लिए दूसरों के यहां नौकरी करनी पड़े, काम का मूल्य या भाड़ा लेकर काम करना पड़े, इन सबको सभ्य भाषा में श्रमिक वर्ग कहते हैं. श्रमिक वर्ग का आंदोलन महान क्रांतिकारी कार्ल मार्क्स से प्रेरित हुआ. कार्ल मार्क्स स्वयं कोई श्रमिक नहीं था. वह जर्मनी में 1818 ई. में पैदा हुआ था और इंग्लैंड में 1883 ई. में उसकी मृत्यु हुई. उसने दार्शनिक तौर पर श्रमिक वर्ग का इतनी गहराई से अध्ययन किया, जितना विश्व में शायद उस समय तक किसी ने नहीं किया था. जब उसने यह घोषणा की कि विश्व के श्रमिकों जागो और एक हो जाओ तो उसका साफ मतलब यही था कि सब एकता करके निजी संपत्ति को मिटा दें, हर व्यक्ति को अपने-अपने हिस्से का काम करना पड़े, यह अनिवार्य कर दें. विश्व भर की पैदावार या दौलत पर उन आलसी पूंजीपतियों को कुछ भाड़ा या लगान दिए बिना ही क़ब्ज़ा करें.

श्रमिक वर्ग की हालत जैसी थी, वैसी ही रही. यहां तक कि भारत आज़ाद हुआ, तब तक कई देशी रियासतों या राज्यों में श्रमिक वर्ग से ज़बरदस्ती बेगार ली जाती थी यानी बिना कुछ पारिश्रमिक दिए डंडे के जोर से, कोड़ों की मार से, कठिन से कठिन काम लिया जाता था. वर्तमान स्वरूप जो श्रमिक वर्ग के संगठन का है, वह है अलग-अलग श्रमिक संघ.

उस समय सारे संसार में ही, ख़ास करके उद्योगों में आगे बढ़े हुए पाश्चात्य देशों में मध्यमवर्गीय मालिकों का जोर था. बिना उनके न तो पूंजीवादियों का काम चलता था, न श्रमिकों का. अतएव कार्ल मार्क्स के उपदेशों का विशेष असर नहीं हुआ. मार्क्स की लिखित पुस्तक-दास कैपिटल श्रमिकों की भी बाइबल नहीं बन पाई. मार्क्स स्वयं धनाढ्य यहूदी वकील का लड़का था. जैसा कि हुआ करता है, महान व्यक्तियों की पहचान उनके जीवनकाल में शायद ही हो. कार्ल मार्क्स की भी महानता उनके निधन के 25-30 वर्ष बाद ही संसार में प्रगट हुई. समय परिवर्तित हो चुका था, उद्योग धीरे-धीरे मध्यम वर्ग के हाथ से निकल कर बड़ी-बड़ी कंपनियों के हाथ आ गए, मध्यम वर्ग वाले भी अपने को श्रमजीवी या श्रमिक कहने लग गए. जब 1917 में रूस में क्रांति हुई, तब प्रथम विश्व युद्ध के अंतिम दिन थे. सारा श्रमिक वर्ग संत्रस्त हो चुका था. रूस में तत्समय के सम्राट जार, सम्राज्ञी जारीना और राजगुरु रासपुटिन के अत्याचारों का घड़ा भर चुका था. और भी कई कारण थे, जिससे उस विद्रोह ने, जो पहले राजद्रोह के रूप में था, श्रमिक वर्ग के आंदोलन या क्रांति का स्वरूप ले लिया, वह सफल हो गया और विश्व में एक महान वाद साम्यवाद का श्रीगणेश हुआ.

कार्ल मार्क्स के उपदेशों का असर ग्रेट ब्रिटेन इत्यादि अनेक दूसरे देशों पर भी हुआ. कई देशों में समाजवादी पार्टियां स्थापित हुईं. जर्मनी में राष्ट्रीय समाजवादी पार्टी, जो आगे चलकर विशुद्ध तानाशाही में परिवर्तित हो गई थी, शुरू में समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के लिए ही बनी थी. भारत में तो ख़ैर श्रमिक वर्ग का जागरण होना संभव ही नहीं था. अंग्रेजों के राज्य में जहां व्यक्ति-स्वातंत्र्य ही नहीं था, वहां समाजवाद या श्रमिक आंदोलन की बात करे ही कौन? अखिल भारतीय कांग्रेस के नेतागण जब पूर्ण स्वराज्य के लिए लड़ने को कटिबद्ध हुए, तभी उनके नेताओं ने मज़दूर वर्ग का भी एक संगठन बनाने की योजना की. अखिल भारतीय मज़दूर संघ उसी वक्त खड़ा हुआ. पहले पहल श्रमिकों का संघ बनाकर कुछ आवाज़ उठाई गई. चूंकि मूल उद्देश्य भारत की आज़ादी हासिल करना था, इसलिए श्रमिकों के प्रश्नों का अलग कोई स्थान उस वक़्त नहीं था. उस संगठन का भी उपयोग महात्मा गांधी द्वारा संचालित असहयोग आंदोलन या सविनय अवज्ञा के आंदोलनों में किया गया.

श्रमिक वर्ग की हालत जैसी थी, वैसी ही रही. यहां तक कि भारत आज़ाद हुआ, तब तक कई देशी रियासतों या राज्यों में श्रमिक वर्ग से ज़बरदस्ती बेगार ली जाती थी यानी बिना कुछ पारिश्रमिक दिए डंडे के जोर से, कोड़ों की मार से, कठिन से कठिन काम लिया जाता था. वर्तमान स्वरूप जो श्रमिक वर्ग के संगठन का है, वह है अलग-अलग श्रमिक संघ. हर संघ किसी न किसी राजनीतिक पार्टी से संबंधित है. यह श्रम संगठन पद्धति किसी भी हालत में समाजवाद या साम्यवाद नहीं. यह तो श्रमिक द्वारा नियोजित विशुद्ध पूंजीवाद है. इस परिस्थिति को स्पष्ट करने के लिए स्वतंत्र अध्याय आगे दिया गया है, क्योंकि श्रमिक संघ आजकल बहुत ज़्यादा शक्तिशाली हैं. इन्हें अच्छी तरह समझने के लिए पहले मज़दूर या मज़दूर मार्केट और उनके मोल-भाव आदि को समझना आवश्यक है.

feedback@chauthiduniya.com

महावीर प्रसाद आर मोरारका का जन्म 12 अगस्त, 1919 को नवलगढ़ (झुंझनू) राजस्थान में हुआ था. उद्योगपति, स्वप्नदृष्टा और लेखक से कहीं अधिक वह उदात्त मानवीय मूल्यों के संवाहक थे. उनकी गणना भारत के प्रमुख उद्योगपतियों में की जाती है.

एक सीमावर्ती गांव की असली तस्वीर

भारत को गांवों का देश कहा जाता है, क्योंकि यहां की अधिकतर आबादी आज भी गांव में ही निवास करती है, प्रकृति की गोद में जीवन बसर करती है और प्राकृतिक संसाधनों के माध्यम से जीवन के साधन जुटाती है. शहरी सुख-सुविधाओं से दूर ज़िंदगी कितनी कठिनाइयों से गुज़रती है, इसका अंदाज़ा लगाना बड़े शहरों में रहने वालों के लिए मुश्किल है. शहरों की चमक-धमक गांवों में भी पहुंच रही है, परंतु बुनियादी सुविधाओं की कमी अब भी बरक़रार है. ग्रामीणों का जीवन स्तर सुधारने के लिए बेशुमार सरकारी योजनाएं तो बना दी जाती हैं, जिन्हें विभिन्न नामों से काग़ज़ों और सरकारी वेबसाइटों पर देखा जा सकता है, परंतु उनका लाभ कितने लोगों तक पहुंचता है, इसका अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि प्रत्येक वर्ष मार्च समाप्त होते ही करोड़ों रुपये यह कहते हुए लौटा दिए जाते हैं कि ख़र्च नहीं हो पाए. जब कभी आप गांव का दौरा करेंगे तो यही देखने को मिलेगा कि इन सारी योजनाओं की कितनी आवश्यकता थी. यह एक कड़वी सच्चाई है कि गांव के अधिकतर लोग अशिक्षित होते हैं, उन्हें योजनाओं की कोई विशेष जानकारी नहीं होती है. स्थानीय अधिकारियों द्वारा उन्हें जो भी सिखा-पढ़ा दिया जाता है, वे आंख मूंदकर उस पर विश्वास कर लेते हैं. सरकारी अधिकारी किसी पचड़े में पड़ने से ज़्यादा इस बात की कोशिश में लगे रहते हैं कि किसी तरह मार्च आए कि वे योजनाओं का पैसा लौटा कर फुर्सत पा जाएं.

जम्मू-कश्मीर देश का सीमावर्ती राज्य है जिसकी क़रीब अस्सी प्रतिशत आबादी गांव में निवास करती है. जहां केंद्र और राज्य दोनों ही सरकारों द्वारा विभिन्न विकास योजनाओं के तहत अरबों रुपये ख़र्च करने का दावा किया जाता है और प्रत्येक वर्ष उनके बजट में वृद्धि की जाती है, परंतु सारे पैसे जाते कहां हैं, किन विकास योजनाओं में ख़र्च होते हैं, समझ में नहीं आता. पिछले दिनों मैंने कश्मीर के कई गांवों का दौरा किया, जहां न पीने का साफ़ पानी मुहैया है, न अस्पताल की सुविधा है और न परिवहन की. विजन-2020 मिशन के तहत देश में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रमों की यहां कोई झलक तक नज़र नहीं आती. कश्मीर के इन गांवों में बच्चों के लिए प्राथमिक विद्यालय तक नहीं है. ऐसा ही एक गांव है शेख़ मुहल्ला, जो कश्मीर के सीमावर्ती ज़िले कुपवाड़ा से तक़रीबन 30 किलोमीटर दूर स्थित वारसन इलाक़े का एक हिस्सा है. यूं तो समूचा वारसन बुनियादी सुविधाओं से वंचित है, परंतु जो हालत शेख़ मुहल्ला गांव की है, वह आदिम युग की याद दिलाती है. क़रीब दो सौ से अधिक की आबादी वाला यह गांव 21वीं सदी में भी सड़क संपर्क से पूरी तरह कटा हुआ है. गांव में प्रवेश के लिए कोई सड़क मार्ग नहीं है, बल्कि खेतों की पगडंडियों अथवा पहाड़ों के पथरीले ख़तरनाक रास्तों से होकर गुज़रना पड़ता है. राज्य में बर्फ़बारी तीन-चार महीने तक जारी रहती है, ऐसे में इन रास्तों से गुज़रना किस हद तक ख़तरनाक हो सकता है, इसका सहज अंदाज़ा लगाया जा सकता है.

वार्ड सदस्य गुलाम हसन ने बताया कि जब गांव में कोई बीमार होता है तो हम उसे चारपाई पर डालकर अस्पताल ले जाते हैं, जो क़रीब पांच-सात किलोमीटर दूर है. कभी-कभी मरीज़ की हालत रास्ते में इतनी बिगड़ जाती है कि उसकी मौत हो जाती है और हमें बाद में पता चलता है कि हमारे कंधों पर मरीज़ नहीं, लाश है. आज तक किसी सरकारी अधिकारी अथवा जनप्रतिनिधि ने इस गांव का दौरा नहीं किया, ऐसे में सरकारी योजनाओं की जानकारी हम तक पहुंचने का प्रश्न ही नहीं उठता. यह गांव आज भी बुनियादी सुविधाओं से वंचित है. गांव में एक भी प्राथमिक चिकित्सा केंद्र न होना सरकारी दावों की वास्तविकता बयां कर रहा है. गांव वाले अपने अधिकारों से अनजान हैं. उन्हें यह नहीं मालूम कि सरकार उनके उत्थान के लिए क्या कर रही है, क्या करना चाहती है और उन्हें किस प्रकार फ़ायदा उठाना चाहिए. ये भोले भाले ग्रामीण पंचायत से लेकर लोकसभा तक के चुनाव में इस आशा के साथ वोट डालते हैं कि शायद इस बार शासन उन पर मेहरबान हो जाए.

गांव के लोग अशिक्षित ज़रूर हैं, लेकिन वे नई पीढ़ी को शिक्षा से वंचित नहीं रखना चाहते. अब इसे गांव की नई पीढ़ी की बदक़िस्मती कहिए कि क्षेत्र में एक भी प्राथमिक विद्यालय नहीं है. प्रश्न उठता है कि शिक्षा से वंचित यहां की नई पीढ़ी को जब कोई नौकरी नहीं मिलेगी तो अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए क्या वह कोई ऐसा क़दम नहीं उठा लेगी, जो आगे चलकर नुक़सानदेह साबित होगी. आख़िर पैसों की ज़रूरत सबको होती है. जब शहरी युवा पैसों के लिए अपराध के रास्ते पर चल पड़ते हैं तो क्या यह संभव नहीं है कि रोज़गार से वंचित इन युवाओं को पैसों का लालच देकर देश के दुश्मन अपने जाल में न फंसा लें? सरकार सीमा की रक्षा के लिए अरबों रुपये ख़र्च कर रही है. क्या वह सीमावर्ती लोगों की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ नहीं कर सकती? सीमा तब तक सुरक्षित नहीं हो सकती, जब तक सीमावर्ती क्षेत्रों में रहने वालों का समर्थन नहीं मिलता है और यह समर्थन उसी वक़्त हासिल हो सकता है, जब उन्हें भी शासन में भागीदारी का एहसास हो. यदि हम कश्मीरियों को शासन में भागीदारी का एहसास नहीं करा सके तो यह हमारे तंत्र की कमज़ोरी है. हम तन-मन-धन से यह कहने पर ज़ोर लगा देते हैं कि कश्मीर हमारा है, परंतु क्या हमने कभी यह सोचा है कि कश्मीरी भी हमारे हैं? (चरखा)

इरफान अहमद लोन
feedback@chauthiduniya.com

पाठकों की दुनिया

सर्वश्रेष्ठ पत्र

मानवाधिकारों का हनन करती धाराएं

मानवाधिकार कार्यकर्ता पिछले काफ़ी समय से भारतीय दंड संहिता की धारा-124 (ए) को हटाने की मांग कर रहे हैं. 1951 में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने भी इसे अलोकतांत्रिक बताते हुए हटाने का वादा किया था, जिसे अभी तक पूरा नहीं किया गया है. दरअसल, देश के हर राज्य में आईपीसी की धारा 121, 124 (ए) का दुरुपयोग हो रहा है. जल, जंगल और ज़मीन के लिए आवाज़ उठाने वालों को इन धाराओं के तहत गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया जाता है. ये धाराएं ब्रिटिश शासनकाल में लागू की गई थीं. कई देशों ने अपने यहां से इस तरह की धाराओं को हटा दिया है, लेकिन भारत में हम आज भी इन्हें ढो रहे हैं.

-अनीता मिश्रा, *कानपुर, उत्तर प्रदेश.*

सोच-समझ कर वोट दें

उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव के दौरान कई छोटी सियासी पार्टियां पैदा हो गई हैं. ऐसा अक्सर चुनावों के दौरान होता है. पहले तो ये पार्टियां बड़े सियासी दलों और उनके नेताओं को पानी पी-पीकर कोसती हैं. बाद में जनहित में अपने उम्मीदवार चुनावी मैदान में खड़े करने की बात करती हैं, लेकिन उनका असल मक़सद वोट काटना और प्रभावशाली उम्मीदवारों से अंदरखाने समझौता करके पैसे बटोरना रहता है. इसलिए लोगों को चाहिए कि वे सोच-समझ कर वोट दें, ताकि उनका वोट बेकार न जाए.

-असलम ख़ान, *नई दिल्ली.*

महंगाई की मार

केंद्र और राज्य सरकारें अपने कर्मचारियों को महंगाई भत्ता देती हैं, जिससे उन्हें तो कुछ राहत मिल जाती है, लेकिन जो लोग सरकारी सेवा में नहीं हैं, वे कहां जाएं? सरकार में बैठे और सरकारी नौकरी करने वाले लोग तो मज़े में रहते हैं, लेकिन महंगाई की मार बेचारी आम जनता सहती है. सरकार को उनकी तरफ़ भी ध्यान देना चाहिए.

-जन्नत, *हिसार, हरियाणा.*

कालिख पोतने वालों को सज़ा मिले

किसी पर कालिख पोतने, जूता या चप्पल फेंकने वालों को कड़ी सज़ा मिलनी चाहिए. जिन लोगों के साथ ऐसी घटनाएं होती हैं, वे ख़ुद को महान साबित करने की लालसा में अपराधी को माफ़ करने का ऐलान कर देते हैं, जिससे दूसरे अपराधी मनोवृत्ति वाले और सस्ता प्रचार पाने के इच्छुक लोगों के हौसले बढ़ जाते हैं, इसलिए ऐसे लोगों को माफ़ी नहीं, सज़ा दी जानी चाहिए.

-कुलदीप सहदेव, *ई-मेल से.*

आदिवासियों की उपेक्षा

झारखंड राज्य गठित हुए वर्षों हो गए, लेकिन आदिवासी समाज आज भी शिक्षा से वंचित है. दुनिया भर में आदिवासियों की आबादी 30 करोड़ है, जिसमें से लगभग 8.5 प्रतिशत आबादी भारत में निवास करती है. आदिवासी क्षेत्रों में मूलभूत सुविधाओं की कमी है. बच्चों को पढ़ने के लिए कई किलोमीटर पैदल जाना पड़ता है. राज्य में सरकारी योजनाओं का लाभ सभी को नहीं मिल पा रहा है. इन वंचित लोगों को मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास किया जाना चाहिए, ताकि ये भी उन्नति कर सकें. असमान विकास के कारण नक्सलवाद बढ़ रहा है, जो समाज के लिए घातक है. सरकार को आदिवासियों के विकास की ओर ध्यान देना चाहिए.

-प्रताप नारायण सिंह, *लरूआरा, बिहार.*

परमाणु युद्ध की आशंका

विश्व में जिस तरह परमाणु हथियार बनाने की होड़ चल रही है, उससे निकट भविष्य में भयानक युद्ध होने की आशंका बढ़ गई है. वे राष्ट्र भाग्यशाली हैं, जिन्होंने परमाणु हथियार नहीं बनाए हैं, वे बचे रहेंगे. जिन राष्ट्रों ने परमाणु हथियार बनाए हैं, वे नष्ट हो जाएंगे. जो हथियार के दम पर स्वयं को सुरक्षित समझते हैं, उनकी सुरक्षा को ख़तरा है. अब भी समय है, परमाणु हथियारों का मोह छोड़ देना चाहिए.

-नारायण जी, *छपरा, बिहार.*

पत्रों को ज़्यादा स्थान दें

पत्र-पत्रिकाओं में पाठकों के पत्रों का महत्वपूर्ण स्थान होता है. देश के जाने-माने समाचारपत्र-पत्रिकाएं पाठकों के पत्रों को स्थान देते हैं, जिससे पाठक उनसे जुड़ते हैं और वे उन्नति करते हैं. आपको भी इस ओर ध्यान देना चाहिए. किसी एक लेखक को बार-बार छापने से अच्छा है कि पत्र लेखकों को थोड़ा ज़्यादा स्थान दिया जाए. ऐसा करने से आपका अख़बार और उन्नति करेगा.

-चंद्रशेखर चौधरी, *देवघर, झारखंड.*

अंत में

दिल दुखाया था जो कभी मां का, नादानी में
उम्र गुज़री है, उसी दिन से परेशानी में,
मुझसे ज़रा दूर जो पैसा चला गया
सबके दिलों से प्यार का जज़्बा चला गया.

-शिवकुमार फ़ैज़ाबादी.

राजकमल प्रकाशन समूह
1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-110 002
फोन 011-23274463, 23288769, फैक्स 011-23278144
www.rajkamalprakashan.com Email : info@rajkamalprakashan.com
शाखा : अशोक राजपथ, पटना-800006 फोन 0612-2672280
पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-211001 फोन 0532-3293838, 2427274

लेखन विधा सम्मान 2011
'चौथी दुनिया' में प्रकाशित सप्ताह के सर्वश्रेष्ठ पत्र को दी जानेवाली 700 रुपए की किताबें

देश के जाने-माने पत्रकार एवं 'चौथी दुनिया' के सम्पादक संतोष भारतीय के संपादन में प्रकाशित 'दलित अल्पसंख्यक सशक्तीकरण' के वैश्विक प्रयासों का तथ्यात्मक दस्तावेज। यह पुस्तक प्रमाणित करती है कि दुनिया भर के गरीब, दबे-कुचले और सामाजिक रूप से पिछड़े हुए लोग समूहबद्ध होकर यदि शक्तिसम्पन्न होने का संकल्प लें तो वैश्विक स्तर पर बड़े बदलाव सामने आएँगे।

राजकमल प्रकाशन समूह की किसी भी पुस्तक की समीक्षा चौथी दुनिया को भेजें
हर महीने की सर्वश्रेष्ठ समीक्षा को 1100 रुपए की पुस्तकें दी जाएंगी
हेल्पलाइन : 09311196029

पाठक पूरे नाम, पता व फोन नंबर के साथ अपने स्वतंत्र विचार व प्रतिक्रियाएँ इस पते पर भेजें :
चौथी दुनिया, एफ- 2, सेक्टर-11, नोएडा (उत्तर प्रदेश), पिन - 201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

सरकार इस तरह अपनी ज़िम्मेदारी से मुंह नहीं मोड़ सकती है. यह किसी भी देश के लिए शर्म की बात होनी चाहिए.

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

राष्ट्रीय राजनीति का नया रास्ता निकलने की संभावना

उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव भविष्य का क्या संकेत देंगे, यह तो फ़िलहाल पता नहीं, लेकिन वे एक संकेत तो दे रहे हैं और यह संकेत है कि यूपीए और एनडीए में न भरने वाली दरार पड़ गई है. भारतीय जनता पार्टी ने आख़िरी वक़्त तक शरद यादव एवं नीतीश कुमार को अंधेरे में रखा और वह उनसे यह कहती रही कि आपसे समझौता करेंगे, लेकिन अंत में उसने यह कह दिया कि अब आपसे समझौता नहीं करेंगे. इससे नीतीश कुमार एवं शरद यादव को धक्का लगना स्वाभाविक है और उनका दु:खी होना भी. आख़िरी वक़्त में उन्होंने उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया और ज़ाहिर है कि उन्हें अच्छे उम्मीदवार नहीं मिले. इसके बावजूद नीतीश कुमार उत्तर प्रदेश में अपने उम्मीदवारों के चुनाव प्रचार के लिए आए. जनता दल यूनाइटेड में आज की तारीख़ में नीतीश कुमार एवं शरद यादव दो स्टार प्रचारक हैं और उन्होंने अपने उम्मीदवारों के पक्ष में सैद्धांतिक बातें कहनी शुरू की हैं, पर ये सैद्धांतिक बातें भारतीय जनता पार्टी के किसी सुर के साथ नहीं मिलतीं.

उसी तरह ममता बनर्जी पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री हैं और उन्होंने उत्तर प्रदेश में अपना अलग बिगुल बजाया है. उन्होंने अकेले विधानसभा चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया. उत्तर प्रदेश में ममता बनर्जी की पार्टी तृणमूल कांग्रेस का कोई संगठन ही नहीं है, लेकिन महत्वपूर्ण संगठन नहीं, बल्कि महत्वपूर्ण बात यह है कि आख़िर ममता बनर्जी ने यह फ़ैसला क्यों किया? ममता बनर्जी ने यह फ़ैसला संभवत: इसलिए किया, क्योंकि वह यह संदेश देना चाहती हैं कि कांग्रेस किसी भी समय उन्हें टेकेन फॉर ग्रांटेड के रूप में न ले, जैसा कि वह अब तक करती चली आई है. कांग्रेस या कांग्रेस की सरकार, जिसके मुखिया मनमोहन सिंह हैं, ने हमेशा पहले फ़ैसला किया और उसके बाद उन्होंने उस फ़ैसले की जानकारी ममता बनर्जी को दे दी. यही ममता बनर्जी की नाराज़गी का कारण है. उनका मानना है कि अगर आप गठबंधन में हैं तो आपको उन सब साथियों से बात करनी चाहिए, जो आपकी सरकार चला रहे हैं, जो गठबंधन की वजह से यूपीए का नाम रोशन किए हुए हैं. होना तो यह चाहिए था कि सारे देश में यूपीए या उसकी सबसे बड़ी पार्टी कांग्रेस, जहां भी चुनाव लड़ती, अपने साथ अपने सहयोगी दलों को भी कुछ सीटें देती, लेकिन उसने सीटें नहीं दीं. शायद सीटें इसलिए नहीं दीं, क्योंकि उसे भी वैसा ही गुमान है, जैसा भारतीय जनता पार्टी को गुमान है कि छोटी-छोटी पार्टियां राज्य में कहीं जीतेंगी नहीं और जीतेंगी नहीं तो हम क्यों अपनी सीटें बर्बाद करें.

अगर कांग्रेस यह सोच रही है कि वह उत्तर प्रदेश में 200 से ज़्यादा सीटें जीतेगी तो इसे दिवास्वप्न भी नहीं कह सकते. कांग्रेस के बहुत सारे लोग या कांग्रेस के वे नेता, जो चुनाव प्रचार करते हैं और चुनाव प्रचार का फीडबैक राहुल गांधी एवं सोनिया गांधी को देते हैं, उनका कहना है कि हम सौ सीटें ज़रूर जीतेंगे. हरेक को अच्छे सपने देखने का हक़ है और कांग्रेस को तो बहुत ज़्यादा हक़ है, क्योंकि वह उत्तर भारत में कहीं पर भी अपना वजूद बचा नहीं पाई है. इसलिए अगर वह सपने देखती है तो उसे सपने देखने देने चाहिए. पर सपने की वजह से आप अपने साथ चल रहे साथियों का अपमान करें, उनसे सैद्धांतिक बातों में सलाह न लें, यह समझ में नहीं आता. ममता बनर्जी की छवि है कि वह ग़रीबों, किसानों, मज़दूरों एवं अल्पसंख्यकों विशेषकर मुसलमानों के लिए कुछ करना चाहती हैं. इन सबके लिए उनके मन में करुणा है और पश्चिम बंगाल में उन्होंने सीपीएम के ख़िलाफ़ इसी को अपने प्रचार का प्रमुख मुद्दा बनाया था. पश्चिम बंगाल में इसी वजह से उनकी सरकार आई और लगभग पैंतीस सालों से सत्ता में रही सीपीएम सत्ता से हट गई. अब ममता बनर्जी का यह मानना है कि इन सवालों के ऊपर केंद्र सरकार को जवाबदेह होना चाहिए, केंद्र सरकार जवाबदेह नहीं है.

ममता बनर्जी पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री हैं और उन्होंने उत्तर प्रदेश में अपना अलग बिगुल बजाया है. उन्होंने अकेले विधानसभा चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया. उत्तर प्रदेश में ममता बनर्जी की पार्टी तृणमूल कांग्रेस का कोई संगठन ही नहीं है, लेकिन महत्वपूर्ण संगठन नहीं, बल्कि महत्वपूर्ण बात यह है कि आख़िर ममता बनर्जी ने यह फ़ैसला क्यों किया? ममता बनर्जी ने यह फ़ैसला संभवत: इसलिए किया, क्योंकि वह यह संदेश देना चाहती हैं कि कांग्रेस किसी भी समय उन्हें टेकेन फॉर ग्रांटेड के रूप में न ले, जैसा कि वह अब तक करती चली आई है.

जो संकेत मुझे मिल रहे हैं, वे बताते हैं कि आने वाले दिनों में हो सकता है कि ममता बनर्जी और नीतीश कुमार किन्हीं दो सीटों पर साथ-साथ प्रचार करके सारे देश को एक संदेश दें. वे दोनों सीटें भी मैं अनुभव के आधार पर बता सकता हूं. दोनों ने दो किसान नेताओं को चुनाव मैदान में उतारा है. जनता दल यूनाइटेड ने एक बड़े किसान नेता को उतारा है तो ममता बनर्जी ने भी एक बड़े किसान नेता को चुनाव मैदान में उतारा है. शायद उन दोनों चुनाव क्षेत्रों में दोनों मुख्यमंत्री साथ-साथ प्रचार करें. वह दृश्य देखने वाला होगा कि जब दोनों मुख्यमंत्री एक साथ प्रचार करेंगे और जनता से जुड़े सवालों को, अपने गठबंधन से अलग, लोगों के सामने लाएंगे. पिछले बीस सालों में भारतीय राजनीति की एक मज़ेदार घटना होने वाली है और इस घटना के ऊपर हम सभी की निगाह रहेगी, क्योंकि इस घटना से या तो कुछ नहीं निकलेगा, सिर्फ़ दो मुख्यमंत्रियों का चुनाव प्रचार होगा या फिर इस घटना से भविष्य की राजनीति निकलेगी. अगर इस घटना से भविष्य की राजनीति निकलती है तो मुझे कोई संदेह नहीं कि न केवल कांग्रेस पार्टी, बल्कि भारतीय जनता पार्टी के बहुत सारे सांसद और बहुत सारे कार्यकर्ता इस नई संभावित राजनीति के साथ होंगे.

भारतीय जनता पार्टी में अब कोई ऐसा नेता नहीं है, जो इस विभाजन को रोकने की दिशा में कोई पहल कर सके. सिर्फ़ और सिर्फ़ आडवाणी जी के पास इस बात का अनुभव है और इस बात की समझ भी है, लेकिन आडवाणी जी की अब भाजपा में ज़्यादा नहीं चलती. फ़ैसला नितिन गडकरी को लेना है और नितिन गडकरी के साथी उन्हें यह फ़ैसला लेने देंगे, इस बात में संदेह है. उसी तरह कांग्रेस पार्टी में प्रणव मुखर्जी के अलावा कोई भी ऐसा नेता नहीं है, जिसके पास राजनीतिक समझ हो, लेकिन प्रणव ख़ुद के बार-बार होने वाले अपमान को लेकर क्षुब्ध हैं. इसीलिए कांग्रेस में भी यह नहीं लगता कि कोई ममता बनर्जी को मनाने की कोशिश करेगा. इसीलिए संभावना इस बात की है कि आने वाले बजट सत्र के बाद राष्ट्रीय राजनीति का कोई नया रास्ता निकले, जिसकी पटकथा कुछ लोग अभी लिख रहे हैं. देखते हैं कि उत्तर प्रदेश चुनाव के बाद देश की कोई राजनीतिक दिशा बनती है या नहीं बनती है.

संपादक
editor@chauthiduniya.com

मेघनाद देसाई

क्या हम स्वतंत्रता के लायक़ हैं?

गणतंत्र दिवस और महात्मा गांधी की पुण्यतिथि दोनों एक ही महीने में आते हैं. दोनों के बीच के निचोड़ को किस तौर देखा जाए. पाखंड और अतिश्योक्ति से मुक्ति के लिए किए गए कामों की सुरक्षा की जानी चाहिए या उन्हें केवल दस्तावेज़ों में रखा जाना चाहिए. हमने अहिंसा के नैतिक गुण को अपना लिया है, लेकिन जयपुर में हिंसा होने के डर के कारण जो हुआ, उससे तो यही लगता है कि यह सब कहने की बात है. हमारा गणतंत्र बासठ साल का हो गया है, लेकिन अभी भी हमारी स्वतंत्रता सुरक्षित नहीं दिखाई देती है. 1950 के मध्य में जवाहर लाल नेहरू ने संपादकों की एक प्रेस वार्ता में कहा था, वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता केवल अच्छे संपादकों को नहीं मिलनी चाहिए, बल्कि उन्हें भी मिलनी चाहिए, जिन्हें ख़राब संपादक कहा जाता है. यह कहना आसान है कि संपादकों को अपनी स्वतंत्रता का उपयोग ज़िम्मेदारी के साथ और राष्ट्र हित के लिए करना चाहिए. बेशक ख़राब संपादक ऐसा नहीं करते हैं और वे फूहड़ लेख छापते हैं. सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इसका फ़ैसला कौन करेगा कि कौन संपादक सही है और कौन ग़लत. अगर इसका फ़ैसला सरकार को करना है, फिर तो केवल वही संपादक रह पाएंगे, जो सरकार के चमचे हैं. जो संपादक सत्य लिखते हैं और उनका सत्य सरकार के विरुद्ध होता है, उन्हें ग़लत संपादक क़रार देकर जेल में डाल दिया जाएगा तथा कहा जाएगा कि ये संपादक अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग कर रहे हैं.

नेहरू का यह कथन पहले की अपेक्षा आज ज़्यादा समीचीन मालूम होता है. इस बात की आज पहले से अधिक आवश्यकता है. जस्टिस काटजू ने सलमान रुश्दी को कमज़ोर लेखक कहा और यह भी कहा कि वह अपनी फूहड़ किताब-सैटैनिक वर्सेस के कारण चर्चित हो गए. जस्टिस काटजू के इस कथन से मुझे निराशा हुई. काटजू का यह कथन रुश्दी के भारत आने से रोकने से अधिक महत्वपूर्ण मुद्दा है.

नेहरू का यह कथन पहले की अपेक्षा आज ज़्यादा समीचीन मालूम होता है. इस बात की आज पहले से अधिक आवश्यकता है. जस्टिस काटजू ने सलमान रुश्दी को कमज़ोर लेखक कहा और यह भी कहा कि वह अपनी फूहड़ किताब-सैटैनिक वर्सेस के कारण चर्चित हो गए. जस्टिस काटजू के इस कथन से मुझे निराशा हुई. काटजू का यह कथन रुश्दी के भारत आने से रोकने से अधिक महत्वपूर्ण मुद्दा है. बेशक, प्रत्येक व्यक्ति साहित्यिक मानदंड तय करने के लिए स्वतंत्र है. मैं आशा करता हूं कि जस्टिस काटजू के इस कथन पर बुकर समिति ध्यान दे, उसके बाद वह तुरंत रुश्दी को मिडनाइट्स चिल्ड्रेन के लिए दिए गए बुकर पुरस्कार और बुकर ऑफ बुकर्स को वापस ले ले. लेकिन एक कमज़ोर लेखक को भी लिखने का अधिकार है, जबकि उनकी किताबों को पढ़ा जाता है और उन्हें एक अच्छे लेखक से ज़्यादा तवज्जो दी जाती है. लेखकों एवं पाठकों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को गुणवत्ता के आधार पर सीमित नहीं किया जा सकता है. यह कोई आईआईटी में प्रवेश के लिए होने वाली परीक्षा नहीं है, जिसमें अगर आपके 99 फ़ीसदी नंबर नहीं आए तो आप बेकार हो गए. भारतीय संविधान के निर्माताओं ने लेखकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बिना किसी तरह की साहित्यिक परीक्षा के दी है. उन्होंने संविधान में इस बात का ज़िक्र नहीं किया है कि किसी भी साहित्यकार को पहले एक टेस्ट देना पड़ेगा, जिसमें पास होने के पश्चात ही उन्हें लिखने की स्वतंत्रता मिलेगी. बेशक जितनी स्वतंत्रता पढ़ने के लिए दी गई है, उतनी ही स्वतंत्रता न पढ़ने के लिए भी है. अगर आपको कोई रचना पसंद नहीं है तो आप इस बात के लिए स्वतंत्र हैं कि उसे न पढ़ें. कोई भी आपको उसे पढ़ने के लिए बाध्य नहीं करेगा, लेकिन सभी पाठकों को इस आधार पर कुछ पढ़ने से नहीं रोका जा सकता है, क्योंकि अल्पसंख्यक वर्ग इसे पढ़ने की अनुमति नहीं देता है.

इन बासठ सालों के दौरान भारत ने अपने नागरिकों को उनकी पहचान बनाए रखने के लिए प्रोत्साहित किया है. भारत विविध सांस्कृतिक पहचान बनाए रखने वाला देश रहा है. यहां सभी को अपनी अलग पहचान बनाए रखने का अधिकार है. यह एक अच्छी चीज़ हो सकती है, लेकिन कुछ पहचानों, विशेषकर धार्मिक पहचान को विशेषाधिकृत किया जा रहा है. यह एक विरोधाभास है, क्योंकि भारत एक धर्म निरपेक्ष देश है. भारत की धर्म निरपेक्षता का मतलब है कि यहां के सभी नागरिक अपनी धार्मिक पहचान के साथ रहें और कोई किसी के धार्मिक विश्वास को ठेस न पहुंचाएं अथवा कह सकते हैं कि दूसरे धर्मों की इज़्ज़त करें, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका फ़ैसला कौन करेगा कि कौन-सी बात किसी धर्म के लिए ज़्यादा संवेदनशील है और कौन-सी बात कम. किसे अधिक इज़्ज़त मिलनी चाहिए और किसे कम. कई महत्वपूर्ण मुद्दों को विवाद में ले आना एक बड़ा उद्योग बन गया है. आप किसी हिंदी फिल्म के गाने या किसी समुदाय द्वारा पहने जाने वाले कपड़े या फिर किसी ऐतिहासिक व्यक्ति की जीवनी को उदाहरण के रूप में देख सकते हैं. जनहित याचिका का उपयोग ब्लैकमेल करने के लिए किया जाता है. भीड़ द्वारा हिंसा की धमकी देना या फिर राजनीतिक दलों द्वारा किसी मुद्दे को भड़का देना आज के समय में सरकार की अपनी ज़िम्मेदारी त्यागने का आधार बन गया है.

सरकार इस तरह अपनी ज़िम्मेदारी से मुंह नहीं मोड़ सकती है. यह किसी भी देश के लिए शर्म की बात होनी चाहिए. इसका प्रभाव धार्मिक और जातीय समूहों द्वारा किए जा रहे कट्टरपंथी कार्यों के रूप में देखा जा सकता है. ये लोग सरकार की लचीली स्थिति का फ़ायदा उठाते हैं और मनमानी करते हैं. अगर आप किसी धार्मिक या जातीय समूह में पैदा होते हैं और उसके नियम-क़ानून को अस्वीकार करना चाहते हैं तो आपको सरकार सुरक्षा नहीं दे सकती है. देखा जाए तो गांधी जी को पूरी ज़िंदगी उनके धार्मिक विश्वासों के कारण कट्टर हिंदू संगठनों की आलोचना झेलनी पड़ी. उनकी हत्या भी एक हिंदू द्वारा की गई, जिसे फांसी की सज़ा दी गई. अगर सलमान रुश्दी जयपुर आते और उनकी हत्या कुछ मुस्लिम संगठनों द्वारा कर दी जाती तो क्या पकड़े जाने पर उनके हत्यारों पर मुक़दमा चलाया जाता और अगर उनका अपराध साबित हो जाता तो क्या उन्हें फांसी दी जाती? क्या यह कहने की आवश्यकता है, लोग ख़ुद ही समझदार हैं.

feedback@chauthiduniya.com

वैज्ञानिकों ने गूगल मानचित्र पर एक धब्बे को देखकर वहां जाकर जांच करने का फ़ैसला किया और उसके बाद यह चीज सामने आई.

सूचना का अधिकार जानने का अधिकार जीने का अधिकार चौथी दुनिया की पहल

दूसरी अपील कब और कैसे करें

लोक सूचना अधिकारी आपके आरटीआई आवेदन पर कार्रवाई नहीं करता या आपको पूरी सूचना नहीं देता है, तब आप क्या करते हैं? ज़ाहिर है, आप प्रथम अपील करते होंगे. प्रथम अपील का प्रारूप भी चौथी दुनिया में प्रकाशित किया जा चुका है. केंद्रीय सूचना आयोग में ऑन लाइन अपील कैसे दर्ज कराते हैं, इसके बारे में भी हम आपको बता चुके हैं. बहरहाल, प्रथम अपील के बाद भी अगर आपको संतोषजनक सूचना नहीं मिलती है तो द्वितीय अपील करने की नौबत आती है. राज्य सरकार से जुड़े मामलों में यह अपील राज्य सूचना आयोग और केंद्र सरकार से जुड़े मामलों में यह अपील केंद्रीय सूचना आयोग में की जाती है, लेकिन आरटीआई आवेदक के लिए सबसे बड़ी परेशानी है द्वितीय अपील तैयार करना. दरअसल, द्वितीय अपील का प्रारूप बनाने का काम थोड़ा पेचीदा बना दिया गया है, लेकिन इससे परेशान होने की ज़रूरत नहीं है. इससे पहले के अंक में हमने शिकायत का एक प्रारूप प्रकाशित किया था और बताया था कि शिकायत और अपील में बुनियादी फ़र्क़ क्या है. दरअसल, अपील और शिकायत में एक बुनियादी फ़र्क़ है. कई बार ऐसा होता है कि आपने अपने आरटीआई आवेदन में जो सवाल पूछा है, उसका जवाब आपको ग़लत दे दिया जाता है. आपको पूर्ण विश्वास है कि जो जवाब दिया गया है, वह ग़लत, अपूर्ण या भ्रामक है. इसके अलावा आप किसी सरकारी महकमे में आरटीआई आवेदन जमा करने जाते हैं और पता चलता है कि वहां तो लोक सूचना अधिकारी ही नियुक्त नहीं किया गया है या फिर आपसे ग़लत शुल्क वसूला जाता है. ऐसे मामलों में आप सीधे राज्य सूचना आयोग या केंद्रीय सूचना आयोग में शिकायत कर सकते हैं. ऐसे मामलों में अपील की जगह सीधे शिकायत करना ही समाधान है. इसके अलावा यदि आप मिली हुई सूचना से संतुष्ट नहीं हैं और आपको लगता है कि अधूरी या भ्रामक सूचना दी गई है तो अपील भी कर सकते हैं. इस अंक में हम आपके लिए द्वितीय अपील का एक प्रारूप प्रकाशित कर रहे हैं और उम्मीद करते हैं कि आप सभी लोगों को इससे निश्चित रूप से फ़ायदा होगा.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

यदि आपने सूचना क़ानून का इस्तेमाल किया है और अगर कोई सूचना आपके पास है, जिसे आप हमारे साथ बांटना चाहते हैं तो हमें वह सूचना निम्न पते पर भेजें. हम उसे प्रकाशित करेंगे. इसके अलावा सूचना का अधिकार क़ानून से संबंधित किसी भी सुझाव या परामर्श के लिए आप हमें ईमेल कर सकते हैं या हमें पत्र लिख सकते हैं. हमारा पता है :

चौथी दुनिया

एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा (गौतमबुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश, पिन -201301
ई-मेल : rti@chauthiduniya.com

दूसरी अपील का प्रारूप

सेवा में,
केंद्रीय/राज्य मुख्य सूचना आयुक्त
केंद्रीय/राज्य सूचना आयोग
.....
.....

विषय: सूचना अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 19 के तहत अपील

क्रमांक वांछित सूचनाएं आवेदक द्वारा भरा जाए
1. अपीलकर्ता का नाम एवं पता.....
2. (क) लोक सूचना अधिकारी का नाम.
एवं पता, जिसके विरुद्ध शिकायत है.
(ख) आवेदन जमा करने की तिथि.
(ग) लोक सूचना अधिकारी से प्राप्त जवाब की तिथि.
3 (क) प्रथम अपील अधिकारी का नाम एवं पता (यदि अपील की हो तो).
(ख) प्रथम अपील जमा करने की तिथि.
(ग) प्राप्त जवाब की तिथि.
4. आदेशों का विवरण, यदि कोई हो.
5. अपील किए जाने से पहले तक के तथ्यों का संक्षिप्त विवरण
6. यदि अपील डिम्ड रिफयजल के विरुद्ध की जानी है तो जिस लोक सूचना अधिकारी के यहां आवेदन किया गया था, उसका नाम, पता, तिथि एवं नंबर सहित आवेदन का संक्षिप्त विवरण दें.
7. आयोग से निवेदन एवं प्रार्थना: लोक सूचना अधिकारी को मेरे आवेदन में मांगी गई सूचना बिना किसी शुल्क के तुरंत सात दिनों में प्रदान करने का आदेश दें. साथ ही आयोग से यह भी निवेदन है कि लोक सूचना अधिकारी के विरुद्ध कानून की धारा 20 (1) के तहत जुर्माना लगाएं और धारा 20 (2) के तहत लोक सूचना अधिकारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए सिफारिश भी करें. आयोग से निवेदन है कि मैं इस मामले की सुनवाई में स्वयं या अपने प्रतिनिधि के माध्यम से उपस्थित रहना चाहता हूं. अत: मुझे सभी सुनवाइयों की अग्रिम सूचना अवश्य प्रदान करें. साथ ही मैं यह भी निवेदन करना चाहता हूं कि इस मामले पर फैसला सुनवाई करने के बाद ही करें.
8. निवेदन एवं प्रार्थना का आधार: लोक सूचना अधिकारी ने सूचनाएं अब तक नहीं उपलब्ध कराई हैं, इसलिए सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 19 के तहत अपील दायर की जा रही है. सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 7 (6) का संज्ञान लेते हुए लोक सूचना अधिकारी को आदेश दें कि सभी सूचनाएं मुफ्त में उपलब्ध कराई जाएं. साथ ही सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 20 (1) एवं (2) के तहत लोक सूचना अधिकारी पर 250 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से जुर्माना लगाएं और अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए सिफारिश भी करें.
9. अन्य सूचनाएं (यदि हैं तो).
10. सत्यापन: उपरोक्त शिकायत के तथ्यों को दिनांक.....को सत्यापित किया गया है. मैं.....सत्यापित करता हूं कि उपरोक्त मामले की सुनवाई किसी अन्य न्यायालय, अधिकरण अथवा प्राधिकरण में नहीं की गई है अथवा विचाराधीन नहीं है. इस अपील में प्रदान की गईं सूचनाएं मेरी जानकारी में सही हैं.

संलग्नक:
1. आवेदन की प्रति.
2. शुल्क रसीद का प्रति.
3. आवेदन पत्र को डाक द्वारा भेजे जाने की रसीद.
4. प्रथम अपील की प्रति (यदि हो).
5. प्रथम अपील को डाक द्वारा भेजे जाने की रसीद (यदि हो).
6. शिकायत की प्रति लोक सूचना अधिकारी एवं प्रथम अपील अधिकारी को भेजे जाने की रसीद (जैसा मामला हो).

नाम:.....
पता:.....
स्थान: .....
तिथि: .....

नोट: (केवल केंद्रीय सूचना आयोग के लिए)
1. शिकायत की एक-एक प्रति लोक सूचना अधिकारी एवं प्रथम अपील अधिकारी को भेजें.
2. शिकायत की दो प्रतियां केंद्रीय सूचना आयोग में भेजनी होंगी. साथ ही एक प्रति आपने पास रखें.

राशिफल

मेष 21 मार्च से 20 अप्रैल

जोखिम न उठाएं, इस वक़्त आपको समय के साथ स्वयं को भी बदलने की कोशिश करनी चाहिए. यदि इन बातों पर ध्यान देंगे तो सप्ताह के मध्य तक करियर में अच्छा मुक़ाम हासिल कर सकते हैं. दूसरों के मामले सुलझाने के बजाय अपनी समस्याओं पर अधिक ग़ौर करें. यदि अपने काम से काम रखें तो सफलता मिल सकती है.

वृष 21 अप्रैल से 20 मई

आपको हर काम सोच-समझ कर करना चाहिए, धीरे-धीरे आगे बढ़ने की कोशिश करनी चाहिए. अगर जल्दबाज़ी में किसी काम को अंजाम देने की कोशिश करेंगे तो बात बिगड़ भी सकती है. सप्ताह के अंत में अगर चाहें तो कुछ महत्वपूर्ण व्यक्तियों को उपहार या पार्टी देकर प्रसन्न कर सकते हैं.

मिथुन 21 मई से 20 जून

परेशानियां ख़त्म होंगी, ऐसा लगेगा जैसे ख़राब समय टल गया. बिगड़े हुए कामों में सुधार आएगा. अपने ही लोगों के बीच में जो हालत आपको झेलनी पड़ रही है, उसके लिए आप अब अधिक शर्मसार नहीं हो सकते. जो कुछ भी आपने दूसरों के लिए किया है, अब वही अच्छा कार्य आपकी तरफ़ लौटकर आ रहा है.

कर्क 21 जून से 20 जुलाई

कुछ धननाशक योग हैं, अत: गतिविधियों को संतुलित रखें. अपने कार्यक्षेत्र या व्यापार में आपको अपनी बेहतर स्थिति और पहचान बनाने के लिए बहुत कड़ी मेहनत करनी पड़ेगी. सिर्फ़ बात करने या ऊंची-ऊंची डींगे हांकने से कोई बड़ा आदमी नहीं बन जाता. बड़ा बनने के लिए कुछ न कुछ ठोस कार्य करके दिखाना पड़ेगा.

सिंह 21 जुलाई से 20 अगस्त

सप्ताह के आरंभ में पथ्य परहेज ज़रूरी है, अन्यथा स्वास्थ्य विकार की संभावना है. जिन घरेलू समस्याओं से आप जूझ रहे हैं, उन्हें हल करने के लिए सामाजिक संपर्कों और लोगों से बातचीत करनी होगी. कुछ काम ऐसे हैं, जो धन-हैसियत के बावजूद बिना दूसरों की मदद के हल नहीं हो सकते.

कन्या 21 अगस्त से 20 सितंबर

सुखद कार्यों का सुखद परिणाम प्राप्त होगा, प्रयास जारी रखें. सामाजिक दायरे में उठने-बैठने से विशेष सम्मान हासिल हो सकता है. दोस्तों के प्रभाव क्षेत्र में रहकर किसी संस्था या क्लब की सदस्यता लेना आपके लिए हितकर होगा.

तुला 21 सितंबर से 20 अक्टूबर

ज्ञान-विज्ञान में वृद्धि होगी. इस समय आपके गिरते स्वास्थ्य पर सबकी नज़र है. सुबह जल्दी उठकर सैरसपाटे या प्रकृति का आनंद लेना आपके लिए लाभप्रद रहेगा. अगर आपका तन-मन स्वस्थ रहेगा तो जीवन भी उमंग से भरा रहेगा.

वृश्चिक 21 अक्टूबर से 20 नवंबर

बौद्धिक क्लेश जारी रहेंगे. संतान पक्ष की चिंता रहेगी. कामकाज संवारने में आप कर्म से ज़्यादा भाग्य पर भरोसा रख सकते हैं. किसी के कहने पर पूजा-पाठ, तंत्र-मंत्र या झाड़-फूंक का सहारा ले सकते हैं, लेकिन यह सब एक अस्थायी उपचार है.

धनु 21 नवंबर से 20 दिसंबर

किसी प्रकार के समझौते के काग़ज़ातों में हस्ताक्षर या सरकारी रजिस्ट्री करने के लिए आतुर रहेंगे. यदि किसी की जमानत दे रहे हों तो उसमें सावधानी ज़रूरी है. किसी ऐसे व्यक्ति की सहायता न करें, जिसे आप पूरी तरह जानते न हों.

मकर 21 दिसंबर से 20 जनवरी

मायूसियां और घरेलू विवाद समाप्त होंगे. कामकाज में आपकी मज़बूत स्थिति और तरक्की के लिए कुछ लोग आपको अपनी ओर खींचने की चेष्टा कर सकते हैं. यदि वर्तमान कार्यक्षेत्र को गंभीरता से लें तो कहीं और जाने-भटकने की ज़रूरत नहीं है.

कुंभ 21 जनवरी से 20 फरवरी

आप अपने अंदर ताज़गी और हल्कापन महसूस करेंगे. काफी समय से चल रहा मानसिक तनाव अब ख़ुद ग़ायब हो रहा है. अपनी मुश्किलों को नज़रअंदाज़ कर मन बहलाव की इच्छा भी जाग सकती है. सप्ताह का अंत आपके लिए काफी आनंददायक रहेगा.

मीन 21 फरवरी से 20 मार्च

सप्ताह के आरंभ में भाग्य आप पर मेहरबान होने वाला है. यदि आप अपने पुराने काम-धंधे को बंद करके कोई नया काम शुरू करना चाह रहे हैं तो आपको अपनी पुरानी संपत्तियां बेचने में भी अच्छा लाभ हो सकता है. कोई भी कुविचार या व्यर्थ का आडंबर मन में लाना घातक साबित हो सकता है.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

डायनासोर का बाप

हाल में हुआ एक अध्ययन चौंकाने वाला है. जीवाश्म वैज्ञानिकों ने एक ऐसे रेंगने वाले हिंसक एवं हमलावर प्रकृति के प्राणी के जीवाश्म खोज निकाले हैं, जिसके बारे में समझा जाता है कि वह डायनासोर के निवास से क़रीब 26 करोड़ 50 लाख साल पहले धरती पर घूमता था. दक्षिणी ब्राजील के रियो ग्रांदे दू सोल में एक खेत से इस विशाल प्राणी की खोपड़ी खोदकर निकाली गई है. वैज्ञानिकों ने गूगल मानचित्र पर एक धब्बे को देखकर वहां जाकर जांच करने का फ़ैसला किया और उसके बाद यह चीज सामने आई. वैज्ञानिकों का मानना है कि कुत्ते के आकार का यह जानवर डायनासोर के आने से पहले धरती पर रहता था और रेंगने वाले ऐसे प्राणियों के परिवार से ताल्लुक रखता था, जिसका बाद में धरती से सफाया हो गया. एक अख़बार में प्रकाशित ख़बर के अनुसार, इस जीव का नाम पम्पाहोनस रखा गया है, जो दिखने में डायनासोर जैसा था, लेकिन डायनासोरों के धरती पर आने से पहले इसका खात्मा हो गया. पहले समझा जाता था कि इस परिवार के जंतु केवल रूस, कजाक्स्तिान, चीन एवं दक्षिण अफ्रीका में ही रहते थे, लेकिन एक ताजा खोज से पता चलता है कि ये धरती के विभिन्न हिस्सों में फैले हुए थे.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

एक और पीसा

आजकल लंदन की एक पहचान कहे जाने वाले बिग बेन टॉवर के भी झुकने की बात सामने आ रही है. बीबीसी के मुताबिक़ , ब्रिटिश सांसदों की एक समिति यह सुनिश्चित करने के लिए उपाय ढूंढ रही है कि आगे यह इमारत झुके नहीं. बिग बेन टॉवर को क्लॉक टॉवर के रूप में भी जाना जाता है. इसका निर्माण 1859 में पूरा हुआ था. लंदन स्थित इंपीरियल कॉलेज के भवन विशेषज्ञ प्रोफेसर जॉन बरलैंड का कहना है कि यह इमारत लंबे वक़्त से झुक रही है. यह पहला मौक़ा नहीं है, जब बिग बेन टॉवर को लेकर समस्या होने की बात सामने आई है. 96 मीटर ऊंची इस इमारत पर एक विशाल घड़ी है, जिसका पेंडुलम 1976 में नीचे गिर गया था. हाल में एक अख़बार द्वारा फ्रीडम ऑफ इंफॉरमेशन रिक्वेस्ट के तहत हासिल की गई वर्ष 2009 की एक रिपोर्ट के मुताबिक़ , 356 फुट ऊंचा टॉवर उत्तर-पश्चिम दिशा की ओर 0.26 डिग्री के कोण पर झुक रहा है. विशेषज्ञों का कहना है कि इसे लेकर घबराने की ज़रूरत नहीं है. इसे पीसा की झुकी हुई मीनार की स्थिति में आने तक हज़ारों साल लगेंगे.

मैच्योर शिशु

फ़िरोज़ाबाद (उत्तर प्रदेश) की रिंकी नामक महिला ने एक ऐसे बच्चे को जन्म दिया, जिसके 32 दांत थे. नवजात शिशु में जन्म के वक़्त 32 दांत होने का यह पहला मामला है. इस बच्चे को देखने के लिए अस्पताल में भीड़ लग गई. चिकित्सक यह अनहोनी घटना देखकर हैरान हैं. चिकित्सा के क्षेत्र में भले ही कितने शोध हो जाएं, लेकिन प्रकृति बीच-बीच में ऐसे कारनामे कर देती है कि वैज्ञानिकों के सारे शोध धरे रह जाते हैं. फ़िरोज़ाबाद शहर के जलेसर रोड पर स्थित एक निजी चिकित्सालय में जन्मे इस बच्चे के मुंह में पूरे 32 दांत थे, हालांकि वे अल्प विकसित थे, लेकिन नवजात के मुंह में दांत देख चिकित्सकों के भी होश उड़ गए. बच्चा एवं मां पूरी तरह स्वस्थ हैं. नवजात के मुंह में दांत देख पहले तो परिवारीजन डर गए, लेकिन जब चिकित्सकों ने उन्हें समझाया तो उनकी घबराहट ख़त्म हुई. कुछ लोगों का कहना है कि यह दैवीय चमत्कार है, वहीं डॉक्टर इस बारे में साफ तौर पर कुछ नहीं कह पा रहे हैं.

वर्ष 2009 में मैडुगुरी की सड़कों पर गोलीबारी हुई और उसमें बोको हराम के सैकड़ों समर्थक मारे गए और हज़ारों लोग शहर छोड़कर भाग गए.

सीरिया

बशर वास्तविकता को स्वीकार करें

राजीव कुमार

सीरिया में मार्च 2011 से राष्ट्रपति बशर अल असद के विरुद्ध आंदोलन चल रहे हैं. संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार, सरकार विरोधी विद्रोह को दबाने के लिए की गई कार्रवाई में अब तक पांच हज़ार लोग मारे जा चुके हैं. हालांकि सीरिया इस आंकड़े को ग़लत बताता है, लेकिन दो हज़ार लोगों के मरने की पुष्टि तो वह भी कर रहा है. अंतरराष्ट्रीय मीडिया पर प्रतिबंध लगाए जाने के कारण वहां की सारी ख़बरें नहीं आ पाती हैं, लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि सीरिया की हालत दिनोंदिन बिगड़ती जा रही है. अरब में 2011 क्रांति का साल रहा है. ट्यूनीशिया, लीबिया, यमन और मिस्र इस क्रांति के गवाह रहे हैं. इन देशों में जिस तरह राजनीतिक सुधार के लिए लोगों ने सरकार के विरुद्ध आंदोलन शुरू किया था, सीरिया की स्थिति उससे अलग नहीं है. सीरिया में भी सत्तर के दशक से एक ही परिवार का शासन है. 1971 में वर्तमान राष्ट्रपति के पिता हाफ़िज़ अल असद यहां के राष्ट्रपति बने थे. इससे पहले यानी 1963 से सीरिया में आपातकाल लागू है. हाफ़िज़ अल असद के समय 1973 में सीरिया को धर्म निरपेक्ष समाजवादी राज्य घोषित किया गया था, जिसमें इस्लाम को बहुसंख्यक लोगों का धर्म बनाया गया था. हाफ़िज़ अल असद की मृत्यु वर्ष 2000 में हुई. उसके बाद यहां के संविधान में संशोधन करके राष्ट्रपति बनने की न्यूनतम आयु 40 साल से घटाकर 34 साल कर दी गई थी. इस संशोधन का उद्देश्य हाफ़िज़ अल असद के पुत्र बशर अल असद को सीरिया का राष्ट्रपति बनाना था. हालांकि बशर को राष्ट्रपति बनाने के लिए जनमत संग्रह का सहारा लिया गया था, जिसमें उन्हें 97.29 फ़ीसदी मत मिलने की बात कही गई थी, लेकिन यह जनमत संग्रह किस तरह कराया गया था, यह बताने की आवश्यकता नहीं है. जिस देश में किसी एक व्यक्ति को फ़ायदा पहुंचाने के लिए संविधान में संशोधन किया जा सकता है, वहां जनमत संग्रह कराया जाना केवल दिखावा ही कहा जा सकता है. इसी वंशवादी परंपरा के विरुद्ध सीरिया के लोगों में आक्रोश है. यह आक्रोश न केवल आम लोगों, बल्कि वकीलों, पत्रकारों, बाथ पार्टी से इतर नेताओं एवं लेखकों में भी है, लेकिन अभी तक यहां सेना का पलड़ा भारी है, जिसके चलते सरकार विरोधी क्रांति सफल नहीं हो पा रही है. सीरिया में चल रहे आंदोलन को दबाने के लिए सरकार ने जिस तरह हिंसक कार्रवाइयां की हैं, उनके चलते अरब लीग इससे अलग हो गया था. इसे अरब लीग की सदस्यता से भी वंचित किया गया, लेकिन बाद में बातचीत द्वारा इस गतिरोध को दूर करने के लिए अरब लीग ने एक प्रेक्षक दल नियुक्ति किया. सीरिया और अरब लीग ने इस संकट के समाधान के लिए एक परियोजना तैयार की, जिसमें देश में सैन्य कार्रवाइयों को तुरंत रोका जाना, नगरों एवं बस्तियों से सेना को वापस बुलाना और सीरिया की जेलों में बंद राजनीतिक क़ैदियों को रिहा किया जाना शामिल था.

औपचारिक तौर पर बशर अल असद ने इस परियोजना की सारी बातें मान लीं और लगभग तीन हज़ार राजनीतिक बंदियों को रिहा भी कर दिया, लेकिन सेना हटाने और सैन्य कार्रवाई रोकने वाले प्रावधान अमल में नहीं लाए गए. अभी भी यहां हिंसक कार्रवाइयां जारी हैं. इसलिए अरब लीग ने प्रेक्षक दल निलंबित कर दिया है. कार्यकर्ताओं का कहना है कि दो दिनों की हिंसक कार्रवाई में 135 लोगों की मौत हो चुकी है. अरब लीग के महासचिव नबील अल अरबी का कहना है कि यह फ़ैसला किया गया है कि सीरिया में अरब लीग का मिशन उस वक़्त तक रोक दिया जाए, जब तक वहां हो रही हिंसा का मामला लीग के सामने नहीं रखा जाता. हालांकि ऐसी उम्मीद है कि इस प्रेक्षक दल का समय और बढ़ाया जाएगा. कई देशों ने अपने प्रेक्षकों को वापस बुला लिया है, लेकिन रूस के विदेश मंत्री सर्गेय लेवरोव ने कहा है कि प्रेक्षकों की संख्या बढ़ाई जानी चाहिए. उनका कहना है कि आख़िरकार इतने महत्वपूर्ण मिशन के साथ इस तरह का रवैया क्यों अपनाया जा रहा है. ग़ौरतलब है कि रूस सीरिया में विदेशी हस्तक्षेप का विरोध करता है. उसने सरकार विरोधी प्रदर्शन कर रहे लोगों पर कार्रवाई के लिए सीरिया की आलोचना संबंधी संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव पर वीटो कर दिया. इस प्रस्ताव पर वीटो करने वाले देशों में चीन भी शामिल था. हालांकि यूरोपीय देशों द्वारा तैयार इस प्रस्ताव में सीरिया पर सीधे तौर पर कोई प्रतिबंध लगाने की बात नहीं की गई थी, क्योंकि इन देशों को पहले से इस बात का डर था कि कहीं इस प्रस्ताव पर वीटो का प्रयोग न हो जाए, लेकिन फिर भी रूस और चीन ने प्रस्ताव पर वीटो कर दिया. चीन का कहना था कि मौजूदा हालात में प्रतिबंध या प्रतिबंध की धमकी से सीरिया की समस्या का हल नहीं हो सकेगा, बल्कि स्थिति और बिगड़ जाएगी.

अब फिर से संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सीरिया के मामले पर चर्चा की गई है. चर्चा में अरब लीग की योजना लागू करने की बात कही गई. अरब लीग का कहना है कि सीरियाई राष्ट्रपति बशर अल असद को सत्ता अपने बाद के दूसरे नंबर के नेता को सौंप देनी चाहिए, ताकि वे सीरियाई राष्ट्रीय एकता की सरकार के साथ काम कर सकें. इस चर्चा पर रूस ने कोई आपत्ति नहीं की, लेकिन उसने प्रस्ताव के कई मुद्दों पर असहमति जताई है. अमेरिका तो शुरू से विद्रोहियों के साथ रहा है. अरब लीग भी प्रस्ताव के समर्थन में बहुमत जुटाने का प्रयास कर रही है. हालांकि इस प्रस्ताव पर बहुमत के लिए आवश्यक नौ देशों की मंज़ूरी की समस्या नहीं है, लेकिन वीटो का प्रश्न अभी भी अटका हुआ है. अगर प्रस्ताव पर रूस या चीन का वीटो आता है तो यह दोबारा गिर जाएगा. दोनों देशों ने पहले भी वीटो किया है. इस बार इनकी आपत्तियां दूर करने की कोशिश की जा रही है. सुरक्षा परिषद में जो भी निर्णय हो, लेकिन जिस तरह की परिस्थितियां सीरिया में उत्पन्न हो गई हैं, उनमें तो यही कहा जा सकता है कि बशर अल असद को अरब लीग की बात मान लेनी चाहिए, ताकि विदेशी हस्तक्षेप की आवश्यकता ही न पड़े. अगर नाटो ने कोई कार्रवाई की तो सीरिया और बशर दोनों के लिए अच्छा नहीं होगा. बशर को राजनीतिक सुधार के लिए तैयार हो जाना चाहिए. यह बात अलग है कि उसके बाद होने वाले चुनाव में बशर फिर से चुनाव जीतकर आते हैं या उन्हें विपक्ष में बैठना पड़ता है. अगर उन्हें ख़ौफ़ है तो वह पहले ही इस बात की गारंटी ले सकते हैं कि विद्रोह के समय उठाए गए क़दमों के लिए उन पर मुक़दमा नहीं चलाया जाएगा. बातचीत और समझौते के ज़रिए समस्या का समाधान हो जाए, यही सीरिया के हित में है, वरना इस ख़ूनी खेल का अंजाम बहुत भयानक हो सकता है.

feedback@chauthiduniya.com

बोको हराम, ख़ून करना काम

राजीव रंजन तिवारी

नाइजीरिया में कट्टरपंथी संगठन बोको हराम ने सिलसिलेवार बम धमाकों से तबाही मचा दी है. बोको हराम सरकार का तख्ता पलट कर नाइजीरिया को इस्लामिक देश में तब्दील करना चाहता है. वह कहता है कि जो भी अल्लाह द्वारा कही गई बातों पर अमल नहीं करता, वह पापी है. वह इस्लाम के उस संस्करण को प्रचलित करता है, जिसमें मुसलमानों को पश्चिमी समाज से संबंध रखने वाली किसी भी राजनीतिक–सामाजिक गतिविधि में भाग लेने से वर्जित किया जाता है. नाइजीरिया में मुस्लिम राष्ट्रपति होने के बावजूद बोको हराम उसे ऐसा देश मानता है, जिसे अल्लाह में विश्वास न करने वाले लोग चला रहे हैं. इस संगठन का आधिकारिक नाम जमाते–एहली सुन्ना लिदावति वल जिहाद है यानी पैगंबर मोहम्मद की शिक्षा एवं जिहाद को फैलाने के लिए प्रतिबद्ध लोग. उत्तर–पूर्वी शहर मैडुगुरी में इस संगठन का मुख्यालय था, जहां रहने वालों ने इसे बोको हराम का नाम दिया. यदि स्थानीय होसा भाषा में इसका मतलब है पश्चिमी शिक्षा लेना वर्जित है. बोको का मूल मतलब है फ़र्ज़ी या नक़ली, लेकिन इसका मतलब पश्चिमी शिक्षा के संदर्भ में समझा जाने लगा, जबकि हराम का मतलब है वर्जित या वे चीज़ें, जिनकी समाज में मनाही है. जबसे 1903 में उत्तरी नाइजीरिया, निजेर एवं दक्षिणी कैमरून के इलाक़े ब्रिटेन के नियंत्रण में चले गए, तबसे वहां मुस्लिम आबादी वाले इलाक़ों में पश्चिमी शिक्षा का विरोध शुरू हुआ. कई मुस्लिम परिवार अब भी अपने बच्चों को उन सरकारी स्कूलों में नहीं भेजना चाहते हैं, जहां पश्चिमी शिक्षा दी जाती है. यह समस्या इसलिए भी बढ़ी, क्योंकि वहां के धनाढ्य वर्ग भी शिक्षा को प्राथमिकता नहीं देते. इसी पृष्ठभूमि में एक मुस्लिम धर्मगुरु मोहम्मद यूसुफ़ ने 2002 में बोको हराम का गठन किया. उन्होंने एक धार्मिक कांप्लेक्स बनाया, जिसमें मस्जिद और इस्लामी स्कूल का भी निर्माण किया गया. नाइजीरिया के ग़रीब मुस्लिम परिवारों के साथ–साथ पड़ोसी देशों के बच्चों ने भी इन स्कूलों में दाख़िले लिए, लेकिन बोको हराम को केवल शिक्षा देने में दिलचस्पी नहीं थी. उसका राजनीतिक मक़सद एक इस्लामिक देश का गठन करना था और यह स्कूल जिहादियों को भर्ती करने का ज़रिया बन गया.

वर्ष 2009 में मैडुगुरी की सड़कों पर गोलीबारी हुई और उसमें बोको हराम के सैकड़ों समर्थक मारे गए और हज़ारों लोग शहर छोड़कर भाग गए. सुरक्षा बलों ने संगठन मुख्यालय पर क़ब्ज़ा करके उसके लड़ाकुओं को धर दबोचा और यूसुफ़ को मार गिराया. यूसुफ़ का शव सरकारी टेलीविजन पर दिखाकर घोषणा की गई कि बोको हराम का ख़ात्मा कर दिया गया. बावजूद इसके यह संगठन नए नेता के नेतृत्व में फिर एकजुट हुआ और 2010 में इसने मैडुगुरी की जेल पर हमला कर अपने सैकड़ों समर्थकों को आज़ाद करा लिया. पुलिस हो या राजनेता, जो इसकी आलोचना करता है, उसे मार दिया जाता है. इसमें अन्य मुस्लिम परंपराओं का पालन करने वाले धर्मगुरु एवं ईसाई उपदेशक भी शामिल हैं. 2010–11 में चर्च सहित कई जगहों पर धमाके हुए. नवंबर 2011 में जारी अमेरिकी कांग्रेस की एक रिपोर्ट के बाद इन हमलों की चर्चा वैश्विक स्तर पर होने लगी. रिपोर्ट में बोको हराम को अमेरिका और उसके हितों के लिए ख़तरा बताया गया और कहा गया कि यह चरमपंथी संगठन अलक़ायदा के साथ संबंध जोड़ने की कोशिश में है. हालांकि संगठन ने इस बात को ख़ारिज कर दिया. ताज़ी घटना नाइजीरिया के दूसरे बड़े शहर कानो की है, जहां बीती 20 जनवरी की रात हुए धमाकों में क़रीब 150 लोग मारे गए और बड़ी संख्या में घायल हुए. लगभग एक करोड़ की आबादी वाले इस शहर में डेढ़–दो हज़ार भारतीय परिवार रहते हैं.

feedback@chauthiduniya.com

देश का पहला इंटरनेट टीवी

हर दिन 50,000 से ज़्यादा दर्शक

- दो टूक-संतोष भारतीय के साथ
- ब्लैक एंड व्हाइट रोज़ाना 1 बजे
- पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ इंडिया
- स्पेशल रिपोर्ट
- नायाब हैं हम-उर्दू के मशहूर शायरों, गीतकारों के साथ मुलाक़ात
- साई की महिमा

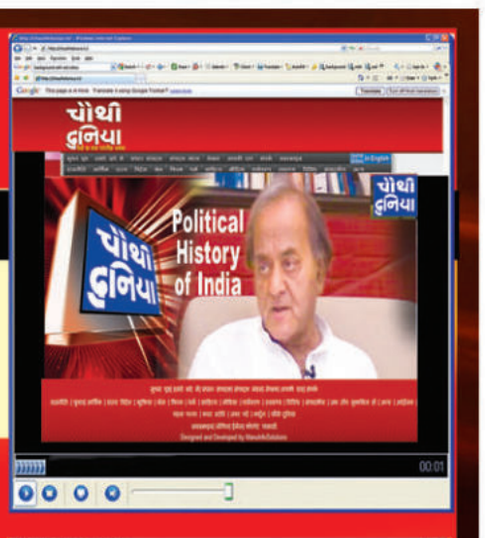

एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा-201301 www.chauthiduniya.tv

चौधरी के पास अपनी ज़मीन है, जिसमें आलू, प्याज, केला और आम के पेड़ लगे हैं. वह अपनी फ़सलों की देखभाल स्वयं करते हैं.

प्रार्थना

अजानुबाहू बनकर आए
विश्व को आशीष देने को,
तीनों लोक ने आशीष पाई
ऐसे अजानुबाहू से,
पूरे विश्व की रक्षा करने
रात-दिन बाबा जागते थे,
अपनी नींद एवं सब कुछ त्याग कर
बहुत ही सेवा करते थे,
शिरडी क्षेत्र में रहकर बाबा ने
विश्व की महान सेवा की,
उनसे बढ़कर महान त्यागी
कोई न विश्व में जन्म लिया,
द्वारकामाई मस्जिद थी
गुरुकुल जैसे ज्ञानाश्रम,
ज्ञानियों का मेला था
हरदम साईश्वर के पास,
देश-विदेश से आकर लोग
ज्ञान एवं भक्ति पाते थे,
पूर्ण ज्ञानी साईश्वर
सबको सब कुछ देते थे,
भगवद्गीता समझाई
डिप्टी कलेक्टर नाना को,
विष्णु सहस्त्रनाम को समझा
काका साहिब दीक्षित ने,
नाथ भागवत को पढ़ते थे
साईश्वर से हेमाडपंत,
दीक्षित जोग एवं बी वी देव ने
ज्ञानेश्वरी का ज्ञान लिया,
गुरुचरित्र का पाठ कराया
श्री साठे से साई ने,
उपनिषदों का अर्थ बताया
निज प्रेमियों को बाबा ने,
कुरान शरीफ़ के तत्व को समझा
अब्दुल्लाह ने साई से,
साई प्रेमी मौलवी
फ़ातिहा को पढ़ते थे,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
लटका कर घंटी मस्जिद में
मस्जिद-मंदिर एक किए,
नमाज़-पूजा बन गए एक
मुस्लिम-हिंदू हो गए एक,
यह है अग्नि पारसी की
यह है द्वार गुरुद्वारे का,
ऐसा साई बाबा कहकर
विभिन्न जाति को एक किए,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
विश्व रूप का दर्शन दिया
निज भक्तों को साई ने,
पूर्ण खंडोबा थे साई
म्हालसापति कहते थे,
रामदासियों ने देखा
शिरडीश्वर में राम को,
पंढरीनाथ का दर्शन दिया
दास गणु महाराज को,
सृष्टि पालक विष्णु को देखा
न्यायाधीश रेगे ने,
कैलाशपति शिव को देखा
साईश्वर में मेघा ने,
दशावतारों ने दर्शन दिए
द्वारकामाई मस्जिद में,
ऐसे दर्शन नाथ में पाकर
नाथ को विश्व ने मान लिया,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
अल्पायु में ही बाबा
स्वेच्छा मरण पेश किए,
आदि शंकर जैसे बाबा
देह अपना त्याग दिए,
धीरज विश्वास प्रेम से
सबने उसकी रक्षा की,
ठीक तीसरे दिन के बाद
जागृत हो गए साई नाथ,
जागृत होकर जागृत कर दिया
हर मानव को अपनी ओर,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
म्हालसापति, तात्या पाटिल
बड़े ही तेरे प्रेमी थे,
सोते-जागते, चलते-फिरते
साथ हरदम रहते थे,
लक्ष्मीबाई महालक्ष्मी
नित्य सेवा करती थी,
देकर उसको रुपये नौ
सारी भक्ति दे दिए,
विष से पीड़ित श्यामा आए
ऐसे साई बाबा के पास,
विष को तुरंत दूर किए
भोले शंकर साई ने,
प्राण बचाए मेंढक ने
अपने शत्रु के मुख से,
था वह हुक्म बाबा का
टाल न कोई सकता था,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
एच एस दीक्षित एवं रेगे
बड़े ही शिक्षित ज्ञानी थे,
कुछ न पाकर देश-विदेश में
पास बाबा के आए,
ऐसी हस्ती, शक्ति देखी
अर्पण खुद को कर दिया,
महारोगी बनकर आए
काशीनाथ उपासनी,
बाबा निरोग कर दिए
उपासनी महाराज बन गए,
प्रेमी भयभीत हो उठे
जब हैजा आया शिरडी में,
दीनदयालु साई ने
दूर किया उस हैजे को,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
नागपुर के बड़े ही धनी
गोपालराव बूटी थे,
कृष्ण मुरलीधर के लिए
बूटी वाड़ा बनाए,
यह है स्थान सोने का मेरा
ऐसे बाबा कहते थे,
जो भी कहते साई बाबा
हरदम वह ही होता था,
उन्नीस सौ अट्ठारह के
दशहरा की दशमी में,
मंगलवार के दिन बाबा
जब बयासी साल के लगते थे,
लगभग दोपहर ढाई बजे
शिरडी की मस्जिद में,
बाबा सचमुच सो गए
दुनिया के लिए सो गए,
पर बाबा सर्वत्र छा गए
हरदम के लिए छा गए,
मस्जिद में वह छा गए
शिरडी में वह छा गए,
बाबा सबमें छा गए
सबके हृदय में छा गए,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
छाए हुए जागते साई
अब भी बाबा जागते हैं,
सभी ने देखा पूरे विश्व में
अब भी बाबा जागते हैं,
साई बाबा है सत्य आत्मा
पूर्ण आत्मा-परमात्मा,
साई बाबा कहते भी थे यही
मैं हूं आत्मा-परमात्मा,
ऐसे नाथ की देह को पाने में
हो गए बड़े मतभेद,
हिंदू कहे हिंदू थे बाबा
मुस्लिम कहे थे बड़े पीर,
इसका निर्णय हो नहीं पाया
नाथ की देह को पा गए हिंदू,
नाथ परे थे इस जाति भेद से
जैसे परे हैं परमात्मा,
ऐसे बाबा जग में आए
जिनकी महिमा कोई न जाने.
हिंदू-मुस्लिम-सिख-ईसाई ने
अद्भुत समाधि बनाई,
ऐसी समाधि में भेद न कोई
जातिपात और ऊंच-नीच का,
श्याम सुंदर तेरा घोड़ा
बड़ा ही तेरा प्रेमी था,
श्रद्धा-भक्ति और प्रेम से
तुझको प्रणाम करता था,
शिरडीवासियों ने देखा
समाधि काल के बाद भी,
अश्रुधारा बहाकर
समाधि को प्रणाम करता था,
सत्य है नाथ का कथन
मैं हूं जागृत समाधि पर,
इसकी गवाही देते हैं साई
अपनी विशाल मूर्ति से,
ऐसी मूर्ति बनाई तालीम
बंबई के मूर्तिकार,
जिसकी स्थापना की थी
उन्नीस सौ चौवन में,
अहमदाबाद के बड़े ही प्रेमी
साई शरणानंद ने,
बाबा हैं जागृत जड़-चेतन में
पाए तो उनको सफल है जीवन,
नाथ को पाकर सब कुछ पाए
उनको न पाकर कुछ भी न पाए,
साई सेवक गुरु नारायण कहे
अनंत महिमा की यह छोटी महिमा,
जो भी पढ़े नित्य निरंतर
सब कुछ पाए साई कृपा से,
साई कृपा से, साई कृपा से.

श्यामल के हौसले को सलाम

दुनिया में इतिहास रचने वालों की कोई कमी नहीं है. कुछ लोग अपना नाम चमकाने के लिए इतिहास रचते हैं तो कुछ लोग निस्वार्थ रूप से अपना कार्य करते हैं और उन्हें पता भी नहीं चलता कि उन्होंने इतिहास रच दिया. बिहार के गया ज़िले के दशरथ मांझी एक ऐसे ही इतिहास रचयिता रहे हैं, जिन्होंने अपनी पत्नी के इलाज में बाधक बने पहाड़ को काटकर सड़क निर्माण किया था. दशरथ मांझी की कहानी आज बिहार के स्कूलों में पढ़ाई जाती है, जिसका शीर्षक है-पहाड़ से ऊंचा आदमी. ठीक ऐसी ही कहानी है झारखंड के किसान श्यामल चौधरी की, जिन्होंने अकेले ही अपने अथक प्रयासों से एक तालाब का निर्माण कर डाला और गांव के खेतों के लिए सिंचाई का पानी उपलब्ध करा दिया. दुमका ज़िला स्थित जरमुंडी ब्लॉक के विशुनपुर-कुरुआ गांव के श्यामल चौधरी आज क्षेत्र के किसानों के लिए आदर्श बन चुके हैं. सौ गुणा सौ फीट लंबे और 22 फीट गहरे इस तालाब को खोदने का काम उन्होंने 14 वर्ष में पूरा कर डाला.

65 वर्षीय श्यामल चौधरी को यह विचार उस समय आया, जब उन्होंने अधिकारियों से अपनी ज़मीन पर पटवन के लिए एक तालाब की मांग की थी, जो उन्हें नहीं मिला. फिर क्या था, प्रतिदिन दो चौका मिट्टी काटकर उन्होंने अकेले ही तालाब का निर्माण कर दिया. यह काम उन्होंने वर्ष 1997 में शुरू किया था, जो 2011 में पूरा हुआ. आठवीं पास श्यामल के निर्णय को लेकर शुरू-शुरू में लोग मज़ाक उड़ाया करते थे, ताना देते थे. ऐसे कई अवसर आए, जब उनके हौसले को तोड़ने की कोशिश की गई. कई बार स्वास्थ्य ने भी साथ छोड़ा और गंभीर रूप से बीमार हुए, लेकिन वह अपनी धुन में लगे रहे, बिना किसी बात की परवाह किए. आख़िरकार चुनौतियों ने हथियार डाल दिए और उनके संकल्प की जीत हुई. इस उम्र में, जबकि इंसान अपनी सेहत के आगे बेबस होने लगता है, जब उसके हाथ-पैर काबू में नहीं रहते हैं, उसके लिए घर की चारपाई ही एकमात्र सहारा होती है, श्यामल चौधरी ने तालाब खोदकर नई पीढ़ी को भी संदेश दे दिया. तालाब के पानी का उपयोग वह जहां अपने खेतों की सिंचाई के लिए करते हैं, वहीं दूसरे किसानों को भी उसका उपयोग करने की उन्होंने इजाज़त दे रखी है. आज न सिर्फ़ विशुनपुर-कुरुआ, बल्कि पेटसार, मरगादी, बेलटिकरी एवं बैगनथरा सहित कई गांवों के किसान उनके तालाब के पानी से सिंचाई कर रहे हैं.

चौधरी के पास अपनी ज़मीन है, जिसमें आलू, प्याज, केला और आम के पेड़ लगे हैं. वह अपनी फ़सलों की देखभाल स्वयं करते हैं. वह तालाब में मछली पालन भी कर रहे हैं, जो उनकी आय का अतिरिक्त स्रोत साबित हो रहा है. श्यामल चौधरी के इस साहसिक कार्य की सरकारी महकमे में अब भी कोई कद्र नहीं है. पटवन के लिए उन्होंने कृषि विभाग से गार्ड वाल, सिंचाई के लिए पम्पिंग सेट एवं पाइप की मांग की, जो उन्हें अब तक उपलब्ध नहीं कराया गया है. अधिकारी उनकी बात नहीं सुनते. उन्होंने अपनी पीड़ा जनप्रतिनिधियों तक भी पहुंचाने की कोशिश की, लेकिन वहां भी केवल आश्वासन मिला. इसके बावजूद श्यामल चौधरी निराश नहीं हुए. दशरथ मांझी की तरह वह भी अपने धुन के पक्के हैं. उन्होंने किसानों को जागरूक करने और उन्हें उनकी क्षमता का एहसास कराने के लिए उनके साथ बैठकें करके कृषि समस्याओं का समाधान खोजना शुरू कर दिया है. श्यामल ख़ुश हैं, क्योंकि उनका जीवन धन्य हो गया. जो लोग कभी उनके प्रयासों का मज़ाक उड़ाया करते थे, आज वही उन्हें आदर भाव से देखते हैं. उम्र के आख़िरी पड़ाव में भी ज़मीन का सीना चीरकर तालाब निर्माण पर वह गर्वान्वित हैं. देर से ही सही, सरकार को भी उनके कार्यों के महत्व का एहसास हुआ. बीती 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस के अवसर पर मुख्यमंत्री ने उन्हें राजधानी रांची में सम्मानित किया. हम होंगे कामयाब की तर्ज पर श्यामल ने किसानों को एक नई राह दिखाई है. वास्तव में ऐसे किसान ही समाज के रोल मॉडल बन सकते हैं. (चरखा)

शैलेंद्र सिन्हा
feedback@chauthiduniya.com

मुसलमानों के वोट के लिए जिस तरह से कांग्रेस काम कर रही है, वह हमें अस्सी के दशक के राजीव गांधी के दौर की याद दिलाता है.

अनंत विजय

जयपुर में रोक, कोलकाता में निर्बासन

जयपुर लिटरेचर फेस्टिवल में विवादास्पद लेखक सलमान रुश्दी को वहां आने से रोकने और वीडियो कांफ्रेंसिंग को रुकवाने में सफलता हासिल करने के बाद कट्टरपंथियों के हौसले बुलंद हैं. राजस्थान की कांग्रेस सरकार के घुटने टेकने के बाद अब बंगाल की ममता बनर्जी सरकार ने भी चंद कट्टरपंथियों के आगे घुटने टेक दिए. कोलकाता पुस्तक मेले में तस्लीमा नसरीन की विवादास्पद किताब निर्बासन के सातवें खंड का लोकार्पण करने की इजाज़त नहीं दी गई. तस्लीमा के कोलकाता जाने पर प्रगतिशील वामपंथी सरकार ने पाबंदी लगाई थी, जिसे क्रांतिकारी नेता ममता बनर्जी ने भी जारी रहने दिया. तस्लीमा की अनुपस्थिति में कोलकाता पुस्तक मेले में विमोचन को रोकना हैरान करने वाला है. दरअसल यह एक ऐसा वायरस है जो हमारे देश में फैलता जा रहा है और समय रहते अगर बौद्धिक समाज ने इस पर लगाम लगाने की कोशिश नहीं की तो इसके बेहद गंभीर परिणाम होंगे. प्रगतिशील लेखकों की बिरादरी हुसैन की प्रदर्शनी पर हमले को लेकर तो ख़ूब ज़ोर-शोर से गरजती हैं, लेकिन जब तस्लीमा या फिर सलमान का मुद्दा आता है तो रस्मी तौर पर विरोध जताकर या फिर चुप रह कर पूरे मसले से कन्नी काट लेते हैं. मेरी चिंता इस बात को लेकर है कि भारत में यह प्रवृत्ति अब ज़ोर पकड़ने लगी है. हुसैन की पेंटिंग के विरोध को लेकर ख़ूब हो हल्ला मचा था, विरोध जायज़ भी था, लेकिन सलमान के जयपुर न आने पर विरोध का स्वर काफ़ी धीमा था. लेखकों की आड़ में जो राजनीति होती है उनका जमकर विरोध किया जाना चाहिए. जयपुर में सलमान रुश्दी को अपने ही देश में आने से रोककर राजस्थान की गहलोत सरकार ने जिस ख़तरनाक परंपरा की शुरुआत की, उसका परिणाम कोलकाता पुस्तक मेले में दिखा. दरअसल इस देश में पहले तो कांग्रेस के नेताओं ने संस्थाओं, परंपराओं और मान्यताओं की परवाह करना बंद कर दिया है. बाद में भारतीय जनता पार्टी और तमाम छोटे-छोटे दलों ने भी यही काम करना शुरू कर दिया. जवाहरलाल नेहरू का यह मानना था कि भारत में लोकतंत्र को मज़बूत करने के लिए हर तरह की संस्थाओं को मज़बूत करना होगा और नेहरू ने ताउम्र इसको अपनाया और संस्थाओं को मज़बूत किया. बाद में इंदिरा गांधी ने तो संस्थाओं और मान्यताओं की परवाह ही नहीं की और एक तानाशाह की तरह जो मन में आया वह किया, जिसकी परिणति देश में इमरजेंसी के तौर पर हुई. राजीव गांधी से भी शुरुआत में लोगों को उम्मीद थी, लेकिन वह भी अपनी मां के पदचिन्हों पर ही चले और अंतत: अपनी सुधारवादी छवि को पीछे छोड़कर कट्टरपंथियों के आगे झुकने वाले नेता बनकर रहगए थे.

सलमान रुश्दी को जयपुर आने से रोकने और तस्लीमा की किताब के लोकार्पण को रोकना सिर्फ़ अभिव्यक्ति की आज़ादी पर पाबंदी का मसला नहीं है. दरअसल यह पूरा मामला जुड़ा है उत्तर प्रदेश में होने वाले विधानसभा चुनाव में मुसलमानों को रिझाने से. उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव कांग्रेस के युवराज राहुल गांधी के लिए बेहद अहम है, और अहम है उत्तर प्रदेश में मुसलमान मतदाताओं की भूमिका भी. सूबे की तक़रीबन 114 सीटों पर मुसलमान मतदाता ही उम्मीदवारों की क़िस्मत का फ़ैसला करते हैं. लिहाज़ा कांग्रेस ने उनको रिझाने और अपने पक्ष में करने के लिए अपनी पूरी ताक़त झोंक दी है. कांग्रेस पार्टी मुसलमानों को अपने पक्ष में करने के लिए एड़ी चोटी का ज़ोर लगा रही है. उत्तर प्रदेश में चुनावों के ऐलान से ठीक पहले मुसलमानों के लिए साढ़े चार फ़ीसदी आरक्षण का फ़ैसला कैबिनेट से हो जाता है. उत्तर प्रदेश चुनाव को लेकर जारी किए गए अपने विजन डॉक्यूमेंट में कांग्रेस ने आगे भी आबादी के हिसाब से अल्पसंख्यकों को आरक्षण देने की वकालत की है. उसी दस्तावेज़ में मुस्लिम अध्यापकों की भर्ती के विशेष अभियान से लेकर अल्पसंख्यक सशक्तीकरण के लिए पार्टी की प्राथमिकता पर बल दिया गया है. दरअसल यह सब कुछ एक सोची समझी रणनीति के तहत किया जा रहा है. कांग्रेस चाहती है कि किसी भी तरह से उत्तर प्रदेश में मुसलमानों के वोट उसकी झोली में आए और दशकों से खोई राजनीतिक ज़मीन हासिल की जाए.

यूपीए-1 के शासन काल के दौरान 30 नवंबर, 2006 को मुसलमानों की हालत पर सच्चर कमेटी की रिपोर्ट पेश की गई थी, लेकिन तक़रीबन पांच साल के बाद कांग्रेस उस रिपोर्ट पर जागी. रंगनाथ मिश्रा कमीशन की रिपोर्ट की सुध लेने वाला कोई है या नहीं, इसका पता अब तक नहीं चल पाया है. बटला हाउस एनकाउंटर को जिस तरह से दिग्विजय ने हवा दी और उसे एक बार फिर से ज़िंदा करने की कोशिश की, उसके पीछे भी अल्पसंख्यकों को एकजुट करने की राजनीति है.

मुसलमानों के वोट के लिए जिस तरह से कांग्रेस काम कर रही है, वह हमें अस्सी के दशक के राजीव गांधी के दौर की याद दिलाता है. अपनी मां की हत्या के बाद उपजी सहानुभूति लहर पर सवार होकर राजीव गांधी ने आज़ाद भारत के इतिहास में सबसे बड़ा बहुमत हासिल किया था. लेकिन चौरासी में सत्ता संभालने के बाद जिस तरह से राजीव गांधी ने फ़ैसले लिए वे बेहद चौंकाने वाले और हैरान करने वाले थे. राजीव गांधी ने अपने शासन काल में मुसलमानों को रिझाने के लिए जो क़दम उठाए, वे बाद में पार्टी के लिए आत्मघाती ही साबित हुए. बोफोर्स ख़रीद सौदे में दलाली के आरोपों और राम जन्मभूमि आंदोलन के भंवर में फंसे राजीव गांधी ने शाहबानो मामले में जिस तरह से सुप्रीम कोर्ट के फ़ैसले को बदलने के लिए संविधान में संशोधन कर दिया, वह एक स्वप्नदर्शी नेता का प्रतिगामी क़दम था. राजीव गांधी ने उस वक़्त के अपने प्रगतिशील मुस्लिम साथियों की राय को दरकिनार कर यह क़दम उठाया था. राजीव गांधी ने ही सबसे पहले सलमान रुश्दी की किताब पर पाबंदी लगाई थी. भारत विश्व का पहला देश था, जिसने इस किताब पर बैन लगाया था तब सैटेनिक वर्सेस को छपे चंद ही दिन हुए थे. भारत में किताब बैन होने के बाद ईरान के खुमैनी ने सलमान के ख़िलाफ़ फ़तवा जारी किया था. उस दौर में राजीव गांधी ने जो ग़लतियां कीं उसका ख़ामियाज़ा उन्हें 1989 के आम चुनाव में उठाना पड़ा और प्रचंड बहुमत से सरकार में आने वाले राजीव को विपक्ष में बैठने के लिए मजबूर होना पड़ा. लेकिन कांग्रेस के अब के नेता राजीव के उस वक़्त के फ़ैसलों पर ध्यान देकर फ़ैसले कर रहे हैं, लेकिन नतीजों पर उनका ध्यान नहीं है. अगर नतीजों का विश्लेषण करते तो शायद इस तरह के क़दम उठाने से परहेज़ करते. अब जो काम कांग्रेस सलमान रुश्दी के बहाने से या फिर मुसलमानों को आरक्षण देने जैसे क़दमों से कर रही है उसकी जड़ें हम राजीव गांधी के दौर में देख सकते हैं. जो काम उस वक़्त राजीव गांधी की सरकार ने किया था, वही काम राजस्थान की गहलोत सरकार ने किया. गोपालगढ़ दंगे में सूबे की पुलिस की भूमिका को लेकर मुसलमानों का आक्रोश झेल रहे अशोक गहलोत को रुश्दी में एक संभावना नज़र आई और उन्होंने उसे एक अवसर की तरह झटकते हुए इस बात के पुख्ता इंतज़ाम कर दिए कि रुश्दी किसी भी सूरत में भारत नहीं आ पाए. कांग्रेस को लग रहा है कि सलमान रुश्दी को भारत आने से रोककर वह उत्तर प्रदेश में मुसलमानों का वोट पा जाएगी. ऐसा हो पाता है या नहीं, यह तो 6 मार्च को पता चलेगा, लेकिन मुस्लिम तुष्टीकरण के लिए जो ख़तरनाक खेल कांग्रेस खेल रही है, उससे न तो अल्पसंख्यकों का भला होने वाला है और न ही कांग्रेस पार्टी का.

कोलकाता में ममता बनर्जी ने भी यही खेल खेला. वह भी नहीं चाहतीं कि उनके सूबे में मुस्लिम नाराज़ हों. लिहाज़ा तस्लीमा जिसे अपना दूसरा घर कहती हैं, वहां जाने की उनको इजाज़त नहीं है. क़ानून व्यवस्था की आड़ में उनके कोलकाता जाने पर पाबंदी है. अपनी किताब के विमोचन पर रोक लगाने के बाद तस्लीमा ने ट्वीट कर सवाल खड़ा किया कि कोलकाता ख़ुद को बौद्धिक शहर कहता है, लेकिन एक लेखक को प्रतिबंधित किया जा रहा है. मेरी अनुपस्थिति में भी किताब जारी होना क़तई मंज़ूर नहीं है. कोई पार्टी कोई संगठन कुछ नहीं कहता. आख़िर यह कब तक होगा. तस्लीमा के ट्वीट में जो दर्द है, उसको समझते हुए भी लेखक बिरादरी की ख़ामोशी हैरान करने वाली है.

(लेखक IBN7 से जुड़े हैं)

anant.ibn@gmail.com

पुस्तक समीक्षा

हिंदी साहित्य मुस्लिम लेखकों का ऋणी है

फ़िरदौस ख़ान

हिंदी साहित्य में मुस्लिम साहित्यकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है. अगर हिंदी साहित्य से मुस्लिम साहित्यकारों की कृतियों को अलग कर दिया जाए, तो ऐसा लगेगा मानो हिंदी साहित्य रूपी जिस्म से किसी ने उसकी रूह को जुदा कर दिया हो. डॉ. रंजन ज़ैदी द्वारा संपादित किताब मुस्लिम साहित्यकारों का हिंदी साहित्य में योगदान, में उन मुस्लिम साहित्यकारों के बारे में अहम जानकारी दी गई है, जिन्होंने हिंदी साहित्य को बुलंदियों तक पहुंचाने में अपना योगदान दिया है. इस किताब में बारह लेखकों के लेखों को शामिल किया गया है. इनमें डॉ. परमानंद पांचाल का लेख हिंदी साहित्य के विकास में आदि व रीतिकालीन साहित्यकार, डॉ. शैलेश ज़ैदी का बिल्ग्राम के मुस्लिम साहित्यकार, डॉ. हरमेंद्र सिंह बेदी का पंजाब के मुस्लिम साहित्यकारों का योगदान, डॉ. माजदा असद का सगुण काव्यधारा और मुस्लिम साहित्यकार, नूरनबी अब्बासी का हिंदी अनुवाद में मुस्लिम लेखकों का योगदान, डॉ. ओमप्रकाश सिंहल का हिंदी गद्य की नई विधाओं का विकास और मुस्लिम साहित्यकार, डॉ. इक़बाल अहमद का आधुनिक कविता और मुस्लिम कवि, डॉ. नफ़ीस आफ़रीदी का आधुनिक हिंदी कहानी के विकास में मुस्लिम साहित्यकारों का योगदान, डॉ. क़ौसर यज़दानी का मुस्लिम संस्थाओं का योगदान, डॉ. रवींद्र भ्रमर का अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और हिंदी एवं दुर्गा प्रसाद गुप्ता का हिंदी के विकास में जामिया मिलिया इस्लामिया का योगदान शामिल है.

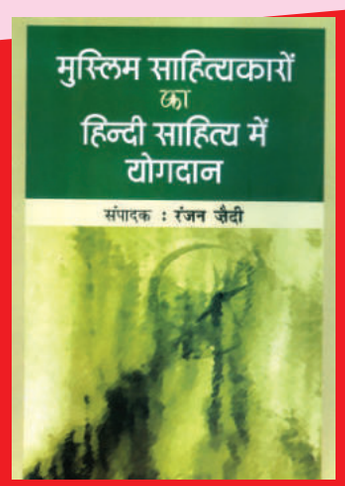

कृति : मुस्लिम साहित्यकारों का हिंदी में योगदान
संपादक : रंजन ज़ैदी
प्रकाशक : श्री नटराजन प्रकाशन
मूल्य : 300 रुपये

यह किताब हमें बताती है कि हिंदी साहित्य के विकास में मुस्लिम कवयित्रियों का भी योगदान कुछ कम नहीं है. ताज शेख़, सुजान, सुंदर कली, रूपमती, बावरी साहिबा तथा राजकुमारी ज़ैबुन्निसा प्रभृति कवयित्रियों ने अपनी रचनाओं में साहित्य को समृद्ध बनाने में प्रशंसनीय योगदान दिया. आदिकाल और रीतिकाल मुस्लिम कवियों के योगदान से भरा पड़ा है. हिंदी साहित्य को सही अर्थों में दिशा देने वाले कवि थे. आदिकाल तो इन कवियों का ऋणी है ही, रीतिकाल का श्रृंगार भी इनके बिना अधूरा है. यदि हिंदी में खुसरो न होते तो खड़ी बोली के गीत कहां से आते? रहीम न होते तो बरवै छंद का आविष्कार कैसे होता? प्रेम मार्गी कवि न होते तो हिंदी का प्रेमाख्यान काव्य कहां से आता और पद्मावत जैसा प्रबंध काव्य कैसे लिखा जाता? रसखान न होते तो ब्रज को यह साधुई कहां से मिलती? सच पूछिए तो हिंदी को यर्थाथता प्रदान करने वाले ये ही असली कवि हैं. इन्हीं पर रीझ कर भारतेंदु हरिश्चंद्र ने ठीक ही कहा था-

इस मुसलमान हरिजन पर, कोटिन हिंदू वारिये

इतना ही नहीं हिंदी कथा साहित्य के विकास क्रम में हिंदुस्तानी और दक्खिनी हिंदी की सक्रियता को नकारा नहीं जा सकता है, क्योंकि ये भी खड़ी बोलियां ही थीं. उन्नीसवीं शताब्दी की गतिविधियों पर नज़र डालें तो आधुनिक कथा सृजन को मिल रही ऊर्जा और उसमें मुस्लिम लेखकों की हिस्सेदारी का महत्वपूर्ण चित्र उभरता है. किताब का हरेक लेख अपने आप में उत्कृष्ट है, जिसमें कम शब्दों में ज़्यादा से ज़्यादा जानकारी दी गई है.

इस किताब को पढ़कर अहसास होता है कि मुस्लिम साहित्यकारों को किस तरह हाशिये पर रख दिया गया है. देश के विभाजन का असर कहीं न कहीं साहित्य जगत पर भी पड़ा है. हिंदी साहित्यकारों की कृतियों से मुस्लिम पात्र ग़ायब होते गए, लेकिन यह एक ख़ुशनुमा अहसास है कि मुस्लिम साहित्यकारों की कृतियों में आज़ादी के पहले की ही तरह आज भी हिंदू पात्र अपनी जगह बनाए हुए हैं. उनके साहित्य में आज भी गंगा-जमुनी तहज़ीब की ख़ुशबू रची-बसी है.

किताब की भूमिका सय्याद! मुझसे छीन मत, मेरी ज़बान को, में डॉ. रंजन ज़ैदी लिखते हैं-हमने आज़ादी के बाद अपने देश की धरती पर आंख खोली. हम नहीं जानते कि देश के विभाजन के ज़िम्मेदार कौन हैं. हमें जिन स्त्रोतों से मालूम हुआ, वह था इस देश के इतिहास का अध्ययन, विभिन्न भाषाओं का लिखित साहित्य और विभाजन के बवंडर से निकल कर आए वे लोग जो अपने स्थायित्व की तलाश में या तो संघर्षरत थे, या अपना संघर्ष समाप्त कर अपनी भावी नस्लों को आर्थिक सुदृढ़ता प्रदान करते रहने के उद्देश्य से देश की राजनीति में अपनी गहरी पैठ बना रहे थे. वह यह भी लिखते हैं कि हिंदी भाषा और साहित्य का अवलोकन करते समय जाति, धर्म, वर्ग विशेष, हिंदी भाषी, अहिंदी भाषी, देशी-विदेशी आदि संकीर्ण कठघरों को तोड़कर साहित्य की कसौटी पर कसना चाहिए, क्योंकि हिंदी का क्षेत्र इतना सीमित नहीं है, यह तो किसी वर्ग विशेष धर्म विशेष अथवा क्षेत्र विशेष की भाषा न होकर सभी भारतीयों की राष्ट्र भाषा और राजभाषा है, एवं यही हमारे राष्ट्र की थाती भी है.

बहरहाल, यह किताब आम पाठकों के साथ-साथ विद्वानों और शोधार्थियों के लिए भी एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ है.

firdaus@chauthiduniya.com

किताब मिली

पुस्तक का नाम
क्रांति का मसीहा
डॉ. बिनायक सेन

लेखक
डॉ. एस.एन.सेवक, ए.कुमार

प्रकाशक
डायमंड बुक्स

मूल्य
100 रुपये

यह किताब डॉ. बिनायक सेन के संघर्ष का बेबाक लेखा-जोखा है.

लेखक और प्रकाशक इस कॉलम के लिए अपनी किताबें हमें भेज सकते हैं.
चौथी दुनिया
एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा-201301
ई मेल : feedback@chauthiduniya.com

1.5 किलोग्राम वज़न वाले इस डॉक स्पीकर का आकार 34 सेंटीमीटर/13 सेंटीमीटर/10 सेंटीमीटर है.

पैनटेक्स का ख़ास कैमरा

कैमरे का सबसे ख़ास फीचर है इसमें दिया गया टू शटर बटन, जिसकी मदद से यूजर लैंडस्केप और पोट्रेट फोटो बेहतर तरीक़ेसे कैपचर कर सकता है. पैनटेक्स ऑप्टियो वीएस 20 में दिए गए फीचर्स शानदार हैं.

कौन नहीं चाहता अपने जीवन के ख़ूबसूरत पलों को संजोकर रखे. ऐसे ही पलों को संजोने की आस में कैमरे की उपयोगिता सिद्ध होती है. बजट फ्रेंडली कैमरों के मामले में पैनटेक्स ने पूरी दुनिया में अपनी अलग पहचान बनाई है. अपनी इसी प्रतिष्ठा को बरक़रार रखते हुए बाज़ार में पैनटेक्स ने ऑप्टियो वीएस20 नाम से नया कैमरा लांच किया है. कैमरे का सबसे ख़ास फीचर है इसमें दिया गया टू शटर बटन, जिसकी मदद से यूजर लैंडस्केप और पोट्रेट फोटो बेहतर तरीक़ेसे कैपचर कर सकता है.

पैनटेक्स ऑप्टियो वीएस 20 में दिए गए फीचर्स शानदार हैं. 38.5 एमएम थिक साइज़ वाले स्लीक और कॉम्पैक्ट डिज़ाइन के साथ इस कम वज़न वाले कैमरे में 16 मेगापिक्सल सीसीडी लेंस दिया गया है. 20 एक्स ज़ूम (28–560 एमएम) के साथ लोकल फोबल लेंथ दिया गया है. पिक्चर प्रीव्यू के लिए इसमें 3 इंच का एलसीडी स्क्रीन दिया गया है. इससे 720 पिक्सल रेज्योलूशन वीडियो रिकॉर्डिंग की जा सकती है. देखने में पैनटेक्स का नया कैमरा काफ़ी आकर्षक लगता है. बाज़ार में ऑप्टियो वीएस20 को ब्लैक और सिल्वर दो कलर ऑप्शन के साथ लांच किया गया है. इसके अलावा कैमरे में लगा सीसीडी लेस 16 मेगापिक्सल को सपोर्ट करता है. कैमरे में दी गई 3 इंच की एलसीडी स्क्रीन 4,60,000 पिक्सल रेज्योलूशन को सपोर्ट करती है. अगर आप पैनटेक्स का नया कैमरा ख़रीदना चाहते हैं तो बाज़ार में यह 15,000 रुपये में उपलब्ध है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

जेडटीई का ऑप्टिक टैबलेट

टैब में जेडटीई ने मैमोरी के मामले में कोई कंप्रोमाइज नहीं किया है. जेडटीई ऑप्टिक में दिए गए बहुत सारे ख़ास फीचर्स हैं. इनमें मज़ेदार है कैप्चरिंग और चैटिंग के लिए दिया गया 5 मेगापिक्सल का रियर कैमरा और 2 मेगापिक्सल का फ्रंट फेसिंग कैमरा.

अगर आप टैबलेट के दीवाने हैं तो आपके लिए ख़ुशख़बरी है. जल्द ही पर्सनल कंप्यूटर के बाज़ार में जेडटीई कंपनी लेटेस्ट फीचर्स केसाथ एक नया टैबलेट पेश करने वाली है. जेडटीई ऑप्टिक नाम के नए टैबलेट में 7 इंच स्क्रीन के साथ 1.2 गीगा हर्ट्ज का ड्यूल कोर सीपीयू दिया गया है. इस टैब में 1 जीबी रैम और 16 जीबी की इंटरनल मैमोरी इनबिल्ड है, जिसमें यूजर ढेर सारा डेटा सेव कर सकता है. टैब में जेडटीई ने मैमोरी केमामले में कोई कंप्रोमाइज नहीं किया है. जेडटीई ऑप्टिक में दिए गए बहुत सारे ख़ास फीचर्स हैं. इनमें मज़ेदार है कैप्चरिंग और चैटिंग के लिए दिया गया 5 मेगापिक्सल का रियर कैमरा और 2 मेगापिक्सल का फ्रंट फेसिंग कैमरा. इसमें 1.2 गीगा हर्ट का ड्यूल कोर प्रोसेसर और 1 जीबी की रैम दी गई है. डाटा स्टोर करने के लिए इसकी इंटरनल मैमोरी 16 जीबी दी गई है. बढ़िया बैकअप सपोर्ट के लिए 4000 एमएएच लियॉन बैटरी है. इंटरनेट से जुड़ने के लिए इसे 3जी और वाईफाई से सपोर्ट करने वाला बनाया गया है. बढ़िया क्वालिटी के म्यूज़िक आउटपुट के लिए इसमें स्टीरियो स्पीकर दिया गया है. ब्लूटूथ सपोर्ट के साथ ऑप्टिक टैब हनीकांब ऑपरेटिंग सिस्टम पर आधारित है, जो बेहतर प्रोसेसिंग का अनुभव प्रदान करता है. इसके अलावा टैब में 7 इंच का स्क्रीन साइज ट्रेवलिंग और वीडियो देखने केहिसाब से सही है, क्योंकि बड़े साइज के टैब को लेकर चलने में काफ़ी परेशानी का सामना करना पड़ता है. कुल मिलाकर 7 इंच की रेंज में जेडटीई का ऑप्टिक टैब टैबलेट लवर्स के लिए एक अच्छा ऑप्शन होगा.

लॉजिटेक के बेहतरीन डॉक स्पीकर

लॉजिटेक केप्योर फाई एक्सप्रेस प्लस आई डिवाइस स्पीकरों में बोल्ड रंगों का प्रयोग किया गया है. लॉजिटेक प्योर फाई एक्प्रेस प्लस डॉक स्पीकरों में दिए गए फीचर्स में इसका बोल्ड कलर ख़ास तो है ही, साथ ही आकर्षक डिज़ाइन और जीएसएम शील्ड इसे दूसरे से अलग बनाता है.

किसी भी एप्पल प्रोडक्ट को पूरी दुनिया में ख़ूब पसंद किया जाता है. यही वजह है कि कंप्यूटर एसेसरीज के उत्पादों में लगभग सभी एसेसरीज प्रोडक्ट लाने वाली कंपनियां एप्पल से कनेक्ट होने पर ज़्यादा ध्यान देती हैं. ऑडियो प्रोडक्ट की रेंज में लॉजिटेक ने नए बजट फ्रेंडली स्पीकर डॉक लांच किए हैं. इसमें एप्पल के ऑडियो प्रोडक्ट के अलावा दूसरे ऑडियो प्रोडक्ट भी अटैच किए जा सकते हैं. लॉजिटेक के प्योर फाई एक्स्प्रेस प्लस आई डिवाइस स्पीकरों में बोल्ड रंगों का प्रयोग किया गया है. लॉजिटेक प्योर फाई एक्प्रेस प्लस डॉक स्पीकरों में दिए गए फीचर्स में इसका बोल्ड कलर ख़ास तो है ही, साथ ही आकर्षक डिज़ाइन और जीएसएम शील्ड इसे दूसरे से अलग बनाता है. इसमें बढ़िया सपोर्ट के लिए 6 एए बैटरी, जो 10 घंटे का म्यूज़िक प्लेबैक बैकअप देती है. इसमें 3.5 एमएम का ऑडियो जैक है. 1.5 किलोग्राम वज़न वाले इस डॉक स्पीकर का आकार 34 सेंटीमीटर/13 सेंटीमीटर/10 सेंटीमीटर है. लॉजिटेक के नए डॉक स्पीकरों के साथ एक रिमोट कंट्रोल भी दिया गया है, जिसके द्वारा यूजर वॉल्यूम कंट्रोल के साथ म्यूज़िक ट्रैक चेंज कर सकता है. स्पीकरों की क्वालिटी अच्छी है, लॉजिटेक ने नए स्पीकर 6,000 रुपये की वाजिब क़ीमत में लांच किए हैं.

सैमसंग का नया स्मार्टफोन

हाई क्वालिटी स्मार्ट फोन रेंज में सैमसंग दुनिया भर में जाना जाता है. दूसरें ब्रांडों की तरह सैमसंग ने भी ख़ास वर्ग को ध्यान में रखते हुए कई प्रोडक्ट लांच किए हैं. स्मार्ट फोन की रेंज में सैमसंग ने वुमेन के लिए वेव सीरीज के अंतर्गत नया वाई मॉडल पेश किया है. वाइन रेड वेव वाई स्मार्ट फोन का लुक और कलर देखने में अपनी ओर आकर्षित करता है. सैमसंग ने वेव वाई को ख़ास तौर से महिलाओं को ध्यान में रखते हुए डिज़ाइन किया है. फोन का डिज़ाइन लाफ्ल्योर नामक कंपनी ने तैयार किया है. सैमसंग वेव के ख़ास फीचर्स में इसका 3.2 इंच का स्क्रीन साइज ख़ास है. इंटरनेट कनेक्शन के लिए वाईफाई सपोर्ट के अलावा 2 जीबी मेमोरी क्षमता है. यह जीपीएस, एचएसडीपीए सपोर्ट करता है. इसके अलावा सैमसंग वाई में कई फीचर दिए गए हैं. इसमें 2 मेगापिक्सल रियर कैमरा दिया गया है, जिसके साथ एनएफसी चिप दिया जाता है. फ़िलहाल यह नया फोन केवल यूक्रेन के बाज़ारों में ही उपलब्ध है. मगर जल्द ही भारत के बाज़ार में भी वेव वाई को लांच किया जाएगा. भारत में वेव वाई को कंपनी 10,000 रुपये की अनुमानित क़ीमत में पेश करेगी.

यह जीपीएस, एचएसडीपीए सपोर्ट करता है. इसकेअलावा सैमसंग वाई में कई फीचर दिए गए हैं.

सेनहाइजर के रंगीन हेडफोन

आॅडियो बाज़ार में दिग्गज कंपनी सेनजाइजर ने नए हेडफोन लांच किए हैं. इससे पहले सीईएस 2012 में सेनहाइजर के एचडी 25 हेडफोन को पेश कर चुका है. नए एचडी 25 हेडफोन को कंपनी ने कई कलर ऑप्शन के साथ लांच किया है. डीजे स्टाइल लुक के नए सेनहाइजर हेडफोन में दिया गया हेडबैंड काफ़ी फ्लेक्सीबल है, जिसकी वजह से यह यूजर के अनुसार अपने आप एडजस्ट हो जाता है. तकनीकी रूप से हेडफोन में 120 डीबी तक साउंड लेबल दिया गया है. कलर्ड नए एचडी 25 हेडफोन में 1.2 मीटर की हेडफोन केबल दी गई है और साथ में एक रिमोट ऑप्शन भी दिया गया है जिसकी मदद से यूजर वॉल्यूम कंट्रोल करने के अलावा म्यूज़िक ट्रैक चेंज कर सकता है. हेडफोन में दिया गया जैक प्लग आईपैड, आईफोन, आईपॉड के साथ दूसरी ऑडियो डिवाइस को सपोर्ट करता है. सेनहाईजर का नया हेडफोन अंतरराष्ट्रीय बाज़ार के साथ पूरे देश के छोटे बड़े स्टोर्स में भी आसानी से उपलब्ध हो जाएगा.

केटीएम ड्यूक-200 बाइक के लांच के अवसर पर बजाज ऑटो के एमडी राजीव बजाज और सीईओ स्टीफन पायरर.

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

रैंकिंग में उछाल

भारत की स्टार टेनिस खिलाड़ी सानिया मिर्ज़ा नवीनतम डब्ल्यूटीए रैंकिंग के डबल्स में करियर की बेस्ट सातवीं रैंकिंग पर पहुंच गईं. सानिया इससे पहले 11वें स्थान पर थीं. वह अगर आगामी 21 जून तक टॉप टेन में शामिल रहती हैं तो उन्हें लंदन ओलंपिक में सीधे प्रवेश मिल जाएगा. हालांकि सानिया को सिंगल्स रैंकिंग में नुक़सान उठाना पड़ा है और वह 106वें स्थान से फिसल कर 111वें स्थान पर पहुंच गई हैं. सिंगल्स में टॉप 64 खिलाड़ियों को सीधे प्रवेश मिलेगा और यदि सानिया इसमें जगह बनाने में विफल रहती हैं तो एआईटीए आयोजन समिति से उनके लिए वाइल्ड कार्ड एंट्री की मांग कर सकता है. इस बीच चेक गणराज्य के रॉडेक स्टेपनेक के साथ मिलकर पुरुष डबल्स ख़िताब जीतने वाले और रूस की एलिना वेस्नीना के साथ मिक्स्ड डबल्स के उपविजेता लिएंडर पेस एटीपी डबल्स रैंकिंग में सातवें स्थान पर क़ायम हैं. रोहन बोपन्ना डबल्स में 11वें स्थान पर बरक़रार हैं, लेकिन उनके नए डबल्स जोड़ीदार महेश भूपति आठ स्थान फिसल कर 16वें स्थान पर पहुंच गए हैं. भूपति और बोपन्ना वर्ष के पहले ग्रैंड स्लेम के तीसरे राउंड में हार गए थे. कंधे की चोट के कारण चेन्नई ओपन और ऑस्ट्रेलियाई ओपन से हटने वाले सोमदेव देवबर्मन चार स्थान के नुक़सान के साथ एटीपी सिंगल्स लिस्ट में 90वें पायदान पर हैं.

फिर हारे नडाल

पिछली बार चैंपियन रह चुके नोवाक जोकोविक ने स्पेन के रफेल नडाल को क़रीब छह घंटे तक चले पांच सेटों के मैराथन मुक़ाबले में हराकर ऑस्ट्रेलियन ओपन एकल ख़िताब जीत लिया. ग्रैंड स्लैम के इतिहास में यह सबसे लंबा चला फाइनल था, जो पांच घंटे 53 मिनट तक खेला गया. पहला सेट गंवाने के बाद जोकोविक ने 2-1 की बढ़त बनाई, लेकिन नडाल ने चौथा सेट जीतकर मुक़ाबला पांचवें सेट तक खींच दिया. दुनिया के नंबर एक खिलाड़ी सर्बिया के जोकोविक ने 5-7, 6-4, 6-2, 6-7, 7-5 से जीत दर्ज की. जोकोविक का यह लगातार तीसरा बड़ा ख़िताब है. इस जीत के साथ उन्हें 24 लाख डॉलर मिले. वह लगातार तीन ग्रैंड स्लैम फाइनल में नडाल को हरा चुके हैं. इस मैच में मुक़ाबला कांटे का रहा. पहले सेट में जोकोविक ने पहली बार सर्विस टूटने के बाद गुस्से में रैकेट मैदान पर फेंक दिया था. इसके बाद उन्होंने शानदार वापसी करते हुए दूसरा सेट जीता और चौथे सेट प्वाइंट पर मैच में बराबरी की. तीसरा सेट जीतकर उन्होंने बढ़त बना ली. चौथे सेट में विश्व रैंकिंग में दूसरे नंबर पर क़ाबिज़ नडाल ने वापसी की और मुक़ाबला लंबा खींच दिया. दोबारा खेल शुरू होने पर नडाल ने सेट जीत लिया. नाटकीय पांचवें सेट में नडाल ने छठे गेम में ब्रेक प्वाइंट बनाया. ऐसा लग रहा था कि नडाल की जीत तय है, लेकिन तभी जोकोविक ने वापसी की. उन्होंने आठवें गेम में तीन ब्रेक प्वाइंट बनाए. स्कोर जब 4-4 से बराबर था तो बारिश के कारण छत बंद करके खेल रोकना पड़ा. नौवें गेम की शुरुआत में 31 शॉट की लंबी रैली के ज़रिए उन्होंने वापसी करके 11वें गेम में नडाल की सर्विस तोड़ी और ब्रेक प्वाइंट बनाकर जीत दर्ज की. जीत के बाद उन्होंने अपनी कमीज़ उतारकर खिलाड़ियों के बॉक्स के सामने जीत का जश्न मनाया और कोच को गले लगाया. इससे पहले सबसे लंबा ग्रैंड स्लैम फाइनल 1988 का अमेरिकी ओपन था, जो मैट्स विलांडर और इवान लैंडल के बीच खेला गया था. वह चार घंटे 54 मिनट तक चला था. ऑस्ट्रेलियन ओपन में नडाल और फर्नांडो वर्डास्को के बीच सबसे लंबा मैच पांच घंटे 14 मिनट तक खेला गया था.

हाथ से फिसली जीत

जहां एक ओर सानिया की रैंकिंग बेहतर हुई है, वहीं दूसरी ओर लिएंडर पेस के हाथों से ऑस्ट्रेलियाई ओपन का दूसरा ख़िताब निकल गया, क्योंकि उन्हें और एलिना वेस्नीना को मिश्रित युगल स्पर्धा के फाइनल में होरिया टेकाउ और बेथानी माटेक सैंडस की जोड़ी से उलटफेर का सामना कर दूसरे स्थान से संतोष करना पड़ा. इस पांचवीं वरीय भारतीय-रूसी जोड़ी को एक घंटे 48 मिनट तक चले फाइनल में रोमानिया के टेकाउ और अमेरिका की सैंडस की आठवीं वरीयता प्राप्त जोड़ी से हार का मुंह देखना पड़ा. पेस फाइनल में हारकर अपने करियर में दूसरी बार एक ही टूर्नमिंट में दो ग्रैंड स्लैम ख़िताब जीतने की दुर्लभ उपलब्धि से भी वंचित रह गए. वर्ष 1999 विंबलडन में उन्होंने दोनों पुरुष युगल (महेश भूपति के साथ) और मिश्रित युगल (लिजा रेमंड केसाथ) ख़िताब जीते थे. इससे पहले पेस ने चेक गणराज्य के रॉडेक स्टेपनेक के साथ मिलकर पुरुष युगल ख़िताब जीता था और अपने करियर का ग्रैंड स्लैम भी पूरा किया था. यह पेस का चौथा ऑस्ट्रेलियाई ओपन मिश्रित युगल फाइनल था, जिसमें उन्होंने दो जीते और दो हारे हैं. पेस की झोली में छह मिश्रित युगल ख़िताब हैं, केवल फ्रेंच ओपन की ट्राफी उनके पास नहीं है.

फुटबॉल चैंपियनशिप ट्रॉफी

भारत के फुटबॉल प्रेमियों को पहली बार यूरोपीय फुटबॉल चैंपियनशिप ट्रॉफी-2012 देखने का मौक़ा मिलेगा, क्योंकि यह देश के तीन शहरों में लाई जाएगी, जो ऑनलाइन पोल में चुने जाएंगे. दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, हैदराबाद, बंगलुरू, गोवा, कोच्चि एवं पुणे में से तीन शहरों को इस ट्रॉफी की मेज़बानी का मौक़ा मिलेगा. दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी फुटबॉल प्रतियोगिता यूईएफए यूरोपीय चैंपियनशिप का आधिकारिक प्रायोजक कार्ल्सबर्ग यह ट्रॉफी भारत लाएगा. टूर्नमिंट का आयोजन पहली बार पूर्वी यूरोप, पोलैंड और यूक्रेन में किया जाएगा, जो आठ जून से एक जुलाई तक चलेगा. कार्ल्सबर्ग ने प्रशंसकों को प्रेरित करने के लिए वोट टू गेट द ट्रॉफी टू योर सिटी (अपने शहर में ट्रॉफी लाने के लिए वोट करो) अभियान चलाया है, जिससे ट्रॉफी की मेज़बानी करने वाले शहर चुने जाएंगे. फुटबॉल प्रशंसक डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू डॉट फेसबुक डॉट कॉम-कार्ल्सबर्ग पर लाग इन करके वोट दे सकते हैं और सबसे ज़्यादा वोट पाने वाले शहर को ट्रॉफी की मेज़बानी का मौक़ा मिलेगा.

धोनी की सफ़ाई

पिछले दिनों से लगातार आलोचनाओं का सामना कर रहे महेंद्र सिंह धोनी ने पेशकश की है कि अगर बीसीसीआई को लगता है कि उनका कोई बेहतर विकल्प मौजूद है तो वह टेस्ट की कप्तानी छोड़ने के लिए तैयार हैं. धोनी ने कहा कि अगर टेस्ट में कोई उनसे बेहतर काम कर सकता है तो टीम के हित में कप्तानी छोड़ने में उन्हें ख़ुशी होगी. उनके मुताबिक़ , कप्तानी किसी एक के लिए नहीं है. एक पद मेरे पास है और यह अतिरिक्त ज़िम्मेदारी है. मैं जब तक यह ज़िम्मेदारी निभा रहा हूं, तब तक इस काम में अच्छा करना चाहता हूं, लेकिन ऐसा भी नहीं है कि मैं इससे चिपका रहना चाहता हूं. अगर बेहतर विकल्प मौजूद है तो वह आ सकता है. उन्होंने कहा कि आप भी यही चाहते हैं कि भारत अच्छा प्रदर्शन करे. अगर कोई इस काम को बेहतर ढंग से अंजाम दे सकता है तो कप्तानी उसे सौंप दी जानी चाहिए. ग़ौरतलब है कि इंग्लैंड के बाद ऑस्ट्रेलिया की टेस्ट सीरीज में भारत के सभी मैच हारने के बाद से बतौर टेस्ट कप्तान धोनी की कड़ी आलोचना हो रही है. इससे पहले वह अगले साल टेस्ट क्रिकेट से संन्यास के संकेत भी दे चुके हैं. धोनी ने कुछ दिनों पहले कहा था कि वह 2013 में क्रिकेट के एक फॉर्मेट से संन्यास ले सकते हैं. टीम को उनकी कप्तानी में विदेशी सरजमीं पर लगातार सात मैचों में शिकस्त झेलनी पड़ी और वह बल्लेबाज़ी में भी नाकाम रहे. इंग्लैंड में उन्होंने चार टेस्ट में 31.43 के औसत से 220 रन बनाए, जबकि ऑस्ट्रेलिया में वह तीन टेस्टों की 6 पारियों में 20.40 के औसत से केवल 102 रन जुटा पाए. कई पूर्व खिलाड़ी और क्रिकेट विशेषज्ञ भी धोनी को टेस्ट कप्तानी से हटाने की वकालत कर चुके हैं. पूर्व तेज गेंदबाज़ मदनलाल ने कहा था, मैं समझता हूं कि अब धोनी को टेस्ट कप्तानी से हटाने का वक़्त आ गया है, क्योंकि वह क्रिकेट का लुत्फ नहीं उठा रहे हैं. अब किसी अन्य को यह पद सौंपने का समय आ गया है. कपिल देव ने कहा था, टीम बटी हुई लगती है. धोनी अगर अच्छा प्रदर्शन नहीं करते और खेल के प्रति अपनी बेरुख़ी बनाए रखते हैं तो बतौर कप्तान उनके दिन गिने-चुने रह गए हैं.

स्पोर्ट्स ऑफ द वीक

टो रेसलिंग

इस बार का स्पोर्ट्स ऑफ द वीक है टो रेसलिंग. रेसलिंग के बारे में तो सभी जानते हैं, लेकिन यह खेल आम रेसलिंग से काफी अलग है. मसलन जिस तरह रेसलिंग में दो प्रतिद्वंद्वी आमने-सामने आकर अपने पूरे शरीर का दम-खम दिखाते हैं, इस खेल में खिलाड़ियों को वैसा नहीं करना पड़ता. यहां न तो खिलाड़ी एक-दूसरे को रिंग में पटखनी देते हैं और न अखाड़े में धोबी पछाड़. इस खेल को खेलने के लिए न तो किसी बहुत बड़े मैदान का इस्तेमाल होता है और न कोई बहुत भव्य ऑडिटोरियम. इस बार का स्पोर्ट ऑफ द वीक इस अजूबे खेल के बारे में, जिसमें हमें आदमी के पैरों के अंगूठे का दम दिखाई देता है. इस खेल में खिलाड़ी अपने पैर के अंगूठे को प्रतिद्वंद्वी खिलाड़ी के पैर के अंगूठे से दो-दो हाथ यानी दो-दो पैर कराता है. वैसे तो रेसलिंग यानी कुश्ती का खेल काफी पुराना है, लेकिन इस तरह की रेसलिंग कम से कम भारत के लिए तो विचित्र और अनूठी है. हालांकि अभी हमारे यहां भी यानी भारत में बहुत से बच्चे आपस में पंजा लड़ाते हुए, बाजुओं का जोर दिखाते हुए मिल जाते हैं, लेकिन बाकायदा नियमों के मुताबिक़ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर टो रेसलिंग की वर्ल्ड चैंपियनशिप कहीं नहीं होती.

टो रेसलिंग असल में यूके में पॉपुलर होना शुरू हुआ. इसके बाद यह खेल धीरे-धीरे कई अन्य देशों में पॉपुलर हो गया. आज कई बड़े देशों में इसका आयोजन होता है. इसकी लोकप्रियता का ही नतीजा था कि इसकी वर्ल्ड चैंपियनशिप आज से कई सालों पहले 1970 में वेट्टन में कराई गई. अगर आप इस बात को जानने के इच्छुक हैं कि टो रेसलिंग पहली बार कब और कहां खेला गया तो इसकी भी जानकारी है. माना जाता है कि वर्ष 1970 से काफी पहले यह खेल स्टैफोर्डशायर, यूके के ओल्डे रोयाल ओक में पहली बार खेला गया. हर वर्ष स्टैफोर्डशायर में ही वर्ल्ड टो रेसलिंग चैंपियनशिप आयोजित होती है. इसमें महिला और पुरुष दोनों भाग ले सकते हैं. हाल के दिनों में ऑस्ट्रेलिया और जापान जैसे देशों को भी इस खेल ने ख़ास तौर पर आकर्षित किया है. मतलब साफ है, न केवल यूके, बल्कि दुनिया भर में टो रेसलिंग की लोकप्रियता बढ़ रही है. इस खेल के नियम काफी मजेदार होते हैं. इसे खेलने के लिए दोनों खिलाड़ियों को अपने जूते-मोजे उतारने पड़ते हैं. मजे की बात यह है कि इस नियम का पालन खिलाड़ी आदर स्वरूप एक-दूसरे के जूते-मोजे उतार कर करते हैं. फिर इसके बाद वन टू थ्री और कहीं-कहीं आई डिक्लेयर टो वॉर यानी मैं टो वॉर की घोषणा करता हूं, जैसे वाक्यों से यह दिलचस्प खेल शुरू हो जाता है. इस खेल प्रतियोगिता में प्रतियोगी अपने-अपने पांव के अंगूठे को आपस में भिड़ाते हैं और प्रतिद्वंद्वी के अंगूठे को पटखनी देने की कोशिश करते हैं. जो पीनिंग में सफल हो जाता है, वही विनर बनता है. अब आप सोच रहे होंगे कि पीनिंग का क्या मतलब होता है तो हम आपको बता दें कि यह दरअसल उस समय अंतराल का संकेत होता है, जिस दौरान खिलाड़ी अपने प्रतिद्वंद्वी खिलाड़ी के पैर के अंगूठे को दबाकर रखता है. यह समय अंतराल तीन सेकेंड के लिए दूसरे प्रतियोगी के पैर पर पैर रखने का होता है. वैसे देखा जाए तो यह खेल ऑर्म रेसलिंग और थम्ब रेसलिंग से काफी मिलता-जुलता है. यह दिलचस्प खेल आप भी ट्राई कीजिए. अगले हफ्ते बात होगी किसी और खेल पर.

राजेश एस कुमार
rajeshy@chauthiduniya.com

ETV पर देखिए दो टूक

देश का सबसे निर्णायक टीवी कार्यक्रम

शनिवार रात 8 : 30 बजे
रविवार शाम 6 : 00 बजे
ईटीवी के सभी हिन्दी चैनलों पर

ETV

Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2012-13-14, RNI No. DELHIN/2009/30467

चौथी दुनिया

दिल्ली, 13 फरवरी–19 फरवरी 2012

आने वाले शनिवार को प्राण अपने दोस्तों के साथ फिल्म देखने प्लाज़ा थिएटर गए तो वहां फिर से वाली से सामना हो गया.

प्राण : हिंदी सिनेमा का कामयाब खलनायक

सत्तर के दशक में महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश और पंजाब के कॉलेजों में एक ख़ास नाम पर सर्वे करवाया गया, और परिणाम यह आया कि पिछले तीस सालों से प्राण नाम के किसी भी बच्चे का एडमिशन नहीं हुआ है. इस बात पर बिना बुरा माने इंडस्ट्री में लोगों से सबसे ज़्यादा नफ़रत पाने वाले हंस कर कहते हैं कि शायद कोई भी अपने बच्चे का नाम रावण रखना नहीं पसंद करेगा. यही वजह है कि उनका नाम रखना भी कोई पसंद नहीं करता. इसी तथ्य को प्राण अपने निगेटिव कैरेक्टर की सफलता बताते रहे हैं. अपने किरदार से अच्छे अच्छों की नींद हराम कर देने वाले प्राण ने सपने में भी नहीं सोचा था कि वह फिल्मों में काम करेंगे. मैट्रिक के बाद ही उन्होंने स्कूल से नाराज़गी जता दी और दिल्ली की एक फोटो की दुकान में नौकरी कर ली. दुकान की एक ब्रांच में शिमला में खुली और प्राण ने ख़ूबसूरत वादियों में एक साल तक फोटोग्राफी के गुर सीखे. साल भर बाद दुकान की एक और ब्रांच लाहौर में खुली और वह वहां भी गए. यह 1939 की बात है. अपने दोस्तों के साथ रात के खाने के बाद प्राण पान की दुकान पर चले गए. वहां खड़े दूसरे लोगों में एक व्यक्ति उन्हें काफ़ी देर से घूर रहा था. जब उस व्यक्ति से रहा नहीं गया, तब वह धीरे से चलकर प्राण के पास आया और पूछा तुम्हारा नाम क्या है. एक अजनबी के अचानक परिचय मांगने से प्राण लगभग खीज गए और उल्टा कहा कि तुम्हें मेरे नाम में क्या दिलचस्पी है. वह व्यक्ति उस दौर के मशहूर फिल्म स्क्रिप्ट, डायलॉग और लिरिक्स राइटर वाली मोहम्मद वाली थे.

उन्होंने अपना परिचय दिया, पर यक़ीन न करते हुए आम लोगों की ही तरह प्राण ने सोचा कि यह कोई सिरफिरा है, जो होश में नहीं है. क्योंकि कुछ पेग लगाने के बाद अपने आप को कोई न कोई बड़ा आदमी मानने लगते हैं, जिनसे वे प्रभावित होते हैं. वाली मोहम्मद वाली उस दौर के बेहद मशहूर व्यक्तियों में से थे. वाली ने प्राण से उनकी लिखी पंजाबी फिल्म जट यमला में एक रोल करने का ऑफर किया तो प्राण ने साफ़ इंकार कर दिया. फिर भी वाली ने प्राण को अगले दिन 10 बजे पंचोली स्टूडियो में आकर उनके बॉस दलसुख पंचाली से मिलने की बात कही और उनके हाथ में पंचोली स्टूडियो का पता लिखी एक पर्ची पकड़ा कर चले गए. अगले दिन सुबह प्राण ने उस पर्ची को हाथ में लेकर ख़ुद ही सोच लिया कि हो सकता है कि रात को मिलने वाला वह व्यक्ति शायद वाली ही हों, पर नशे में वह ग़लती से रोल का ऑफर कर गए होंगे और इस पर उन्हें ज़्यादा ध्यान नहीं देना चाहिए. वह तैयार होकर रोज़ की तरह स्टूडियो चले गए. आने वाले शनिवार को प्राण अपने दोस्तों के साथ फिल्म देखने प्लाज़ा थिएटर गए तो वहां फिर से वाली से सामना हो गया. इस बार वाली काफ़ी ग़ुस्से में थे, वह प्राण पर चिल्लाने लगे. प्राण इस बात पर आश्चर्य करते रहे कि उस रात टकराए मोहम्मद वाली उनकी ज़िंदगी की दिशा बदलने का पैग़ाम लेकर आए थे. ऐसे संयोग से फिल्मी सफ़र की शुरुआत करने वाले प्राण ने न केवल असीमित उंचाइयों को देखा, बल्कि करियर की बुलंदी पर रहकर भी विनम्रता की प्रतिमूर्ति ही बने रहे. उनके निगेटिव कैरेक्टर का आलम यह था कि जब वह सड़क पर निकलते तो लोग उन्हें देखकर चिल्लाते- अरे बदमाश, लफ़ंगा या ऐसे ही नाम जो उन्हें उनके कैरेक्टर की बदौलत मिले थे. उस वक़्त स्क्रीन पर प्राण के आते ही बच्चे मुंह छिपा लेते थे और पूछते थे- मां क्या अब आंखें खोलूं, वह चला गया क्या. पिता को ऐसे पुकारे जाने पर उनकी बेटी पिंकी ने बड़े दुखी मन से कहा था कि आप कोई डिसेंट कैरेक्टर वाले रोल क्यों नहीं करते. प्राण को समझते देर न लगी कि बेटी के दोस्तों में उनकी बैडमेन की ईमेज उनकी बिटिया को परेशान करती है. तुरंत ही प्राण ने अपना कैरेक्टर बदला और स्क्रीन के हीरो भी बने. 1947 तक वह 20 से ज़्यादा फिल्मों में काम कर चुके थे. अब वह एक हीरो की इमेज के साथ इंडस्ट्री में काम कर रहे थे. हालांकि लोग उन्हें विलेन के रूप में देखना ज़्यादा पसंद करते थे. 1947 के विभाजन के बाद उन्होंने शाहदत अली मंटो की एक फिल्म में काम किया, जिसमें देवानंद भी थे. फिल्म की सफलता का श्रेय तो देव जी के खाते में गया, पर प्राण पर दोबारा लोग दांव लगाने लगे. 1960 में आई मनोज कुमार की पुकार ने उनके निगेटिव किरदार को नया रूप दिया. प्राण सिगरेट के धुएं से गोल-गोल छल्ले बनाने में माहिर थे. फ़िल्म निर्देशकों ने इसका ख़ूब इस्तेमाल किया. उनकी फिल्मों में यह दृश्य आम था. प्राण ने अमिताभ और देवानंद के साथ कई फिल्में कीं, जिससे उनके करियर को और अधिक ऊंचाई मिली. वैसे पर्दे पर जो प्राण थे, असल ज़िंदगी में वह उससे बिल्कुल उलट हैं. समाज सेवा और सबसे अच्छा व्यवहार करना उनका गुण है. प्राण की शुरुआती फिल्में हों या बाद की फिल्में, उनकी अदाकारी में दोहराव कहीं नज़र नहीं आता. उनके मुंह से निकलने वाले संवाद दर्शक को गहरे तक प्रभावित करते हैं. भूमिका चाहे मामूली लुटेरे की हो या किसी बड़े गिरोह के मुखिया की हो या फिर कोई लाचार पिता हो, प्राण ने सभी के साथ न्याय किया है. प्राण ने कभी अभिनय का प्रशिक्षण नहीं लिया. वह उस दौर केकलाकार हैं, जब अभिनय प्रशिक्षण केंद्रों का देश में नामोनिशान नहीं था. लेकिन उन्हें अभिनय की चलती फिरती पाठशाला कहा जा सकता है. पुरानी दिल्ली के बल्लीमारान इलाक़े में 12 फरवरी, 1920 को जन्मे प्राण का पूरा नाम प्राण कृष्ण सकिंद है. जल्द ही प्राण लाहौर फिल्म उद्योग में खलनायक केतौर पर स्थापित हो गए. यह वह दौर था जब फिल्म जगत में अजित, के एन सिंह जैसे खलनायक मौजूद थे. पत्थर के सनम, तुमसा नहीं देखा, बड़ी बहन, मुनीम जी, गंवार, गोपी, हमजोली, दस नंबरी, अमर अकबर एंथनी, दोस्ताना, क़र्ज़, अंधा क़ानून, पाप की दुनिया, मृत्युदाता क़रीब 350 से अधिक फिल्मों में अभिनय के अलग-अलग रंग बिखेरने वाले प्राण कई सामाजिक संगठनों से जुड़े हैं. हिंदी सिनेमा को उनके योगदान के लिए 2001 में भारत सरकार के पद्म भूषण सम्मान से सम्मानित किया गया. प्राण के नाम फिल्म फेयर लाइफ टाइम अचीवमेंट ख़िताब के अलावा कई और भी अवॉर्ड दर्ज हैं.

फिल्म प्रीव्यू

मैरिड टू अमेरिका

अस्सी के दशक में कालचक्र और आतंक ही आतंक जैसी अंडरवर्ल्ड पर कामयाब फिल्में बनाने वाले लेखक, निर्देशक दिलीप शंकर पांच साल के लंबे अंतराल के बाद मैरिड टू अमेरिका नाम की फिल्म लेकर एक बार फिर दर्शकों के बीच हैं. रंगमंच से फिल्मों में आए दिलीप शंकर की बॉलीवुड में अंतिम फिल्म निगेहबान थी, जो साल 2007 में आई थी. उन्होंने नब्बे के दशक में आमिर ख़ान को लेकर आतंक ही आतंक नामक फिल्म बनाई थी, जिसमें उन्होंने आमिर को खलनायक के रूप में प्रस्तुत किया था. पांच साल के बाद बॉलीवुड में फिर से निर्देशकीय पारी शुरू करने वाले दिलीप शंकर की अगली फिल्म मैरिड टू अमेरिका भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार पर आधारित है. फिल्म में दिखाया गया है कि प्रवासी भारतीय अपने देश को विकसित और ख़ुशहाल देखना चाहते हैं. वे भारत के विकास में अपना योगदान देना चाहते हैं, लेकिन यहां का भ्रष्ट तंत्र किस तरह से उन्हें हैरान और परेशान करता है. फिल्म की कहानी नायिका अर्चना जोगलेकर के इर्द-गिर्द घूमती है, जो अमेरिका से अपनी कंपनी के काम से भारत आए पति को तलाश कर रही है. इस फिल्म में जैकी श्रॉफ की पत्नी की भूमिका में श्वेता तिवारी है. बिग बॉस-4 की पहली महिला विजेता बनने के बाद श्वेता तिवारी छोटे परदे के साथ ही बड़े परदे पर जादू चलाने के लिए अपनी कमर कस चुकी हैं. जैकी श्रॉफ के साथ नज़र आने वाली श्वेता तिवारी की इस फिल्म में भूमिका दमदार है. श्वेता तिवारी को उम्मीद है कि उनकी यह फिल्म दर्शकों को एक नई श्वेता के दर्शन कराएगी. श्वेता की मैरिड टू अमेरिका के बाद सल्तनत और गोपाल माय ब्रो फिल्में प्रदर्शित होंगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

सोनल की जगह लेंगी ईशा

बॉलीवुड की फिल्मों में जिस तरह आजकल सिक्वल का दौर चल पड़ा है, उससे लगभग सभी अच्छी फिल्मों को एक नए कॉन्सेप्ट के साथ फिर से देखने का मौक़ा मिल रहा है. सिक्वल के इस दौर में हर फिल्म के नाम के अलावा लगभग सब कुछ बदला हुआ ही दिखता है. चाहे कलाकार हों, कहानी हो या लोकेशन. ऐसे में कलाकारों के बीच काफ़ी रूठना मनाना भी देखने को मिल रहा है. मर्डर के सिक्वल में जहां पहले मल्लिका शेरावत को जैक्लिन फर्नांडिस से रीप्लेस किया गया, वहीं धूम 2 में भी ईशा देओल को ऐश्वर्या राय ने रीप्लेस किया. इन फिल्मों में हीरोइंस को बदलने का ट्रेंड कुछ ज़्यादा ही देखने को मिलता है. हाल में फिल्म बुड्ढा होगा तेरा बाप में अमिताभ बच्चन के साथ छोटी सी भूमिका में आई सोनल चौहान के लिए कुछ मुसीबत वाला वक़्त आया है. ए क तो वैसे ही क़िस्मत उन्हें सिल्वर स्क्रीन पर ज़्यादा नज़र आने का मौक़ा नहीं देती और ऊपर से सिक्वल के दौर में हीरोइनों का रीप्लेसमेंट ट्रेंड इनका और भी बुरा हाल कर रहा है. दरअसल, सोनल चौहान दर्शकों के दिल में अपनी जगह बनाने में तब कामयाब हो पाई थीं, जब उनकी फिल्म जन्नत आई थी. इसमें उनके को-स्टार थे सीरीयल किसर इमरान हाशमी. अच्छी ख़बर यह है कि फिल्म जन्नत का सिक्वल बनने की चर्चाएं भी गर्म हैं. लेकिन दुखद बात यह है कि इस फिल्म में क्यूट सी स्माइल वाली सोनल चौहान नज़र नहीं आएंगी. हालांकि मेल स्टार इमरान हाशमी ही जन्नत के सिक्वल में होंगे. अफ़वाहें हैं कि इसमें सोनल की जगह ईशा गुप्ता नज़र आएंगी. ईशा गुप्ता बॉलीवुड का बहुत चर्चित नाम नहीं है, लेकिन वह पहले मिस इंडिया इंटरनेशनल बन चुकी हैं और दो बार किंगफिशर कैलेंडर गर्ल भी रही हैं. इससे बॉलीवुड में एंट्री लेने में उन्हें कोई परेशानी नहीं हुई. ख़बर तो यह भी है कि जन्नत 2 के कुछ हिस्सों की शूटिंग की प्लानिंग दिल्ली में हुई है और ये स्टार्स वहां घूमकर भी आ चुके हैं. केवल हीरोइन ही नहीं, इस फिल्म की कहानी में भी नया मोड़ डाला गया है, जहां पहली वाली जन्नत किक्रेट बैटिंग पर आधारित थी, वहीं जन्नत 2 हथियारों की ख़रीद-बिक्री पर आधारित होगी.

चैट शो में अर्जुन रामपाल

अर्जुन रामपाल अपने पहले टीवी चैट शो लव 2 हेट यू से लोगों को लुभाने के लिए तैयार हैं. इस शो में जानी मानी हस्तियां मेहमान के रूप में आकर अपने आलोचकों से रूबरू होती हैं. अर्जुन ने अपने ट्विटर पर लिखा है कि लव 2 हेट यू की शूटिंग पूरी, क्रू को छोड़ते वक़्त दुख हुआ, स्टार वर्ल्ड का शुक्रिया. क्रू के सभी सदस्यों की याद आएगी. अभिनेता ने इस मौक़े पर कार्यक्रम में आए मेहमानों का भी धन्यवाद दिया. रामपाल ने प्रीति जिंटा, अभिषेक बच्चन, मधुर भंडारकर, फ़रहान अख्तर, चेतन भगत और दूसरे मेहमानों का कार्यक्रम में शामिल होने के लिए धन्यवाद दिया. इसके अलावा अर्जुन रामपाल मधुर भंडारकर की फिल्म हीरोइन में भी नज़र आएंगे. करीना और रामपाल के अलावा फिल्म में रणदीप हुड्डा, शहाना गोस्वामी और राकेश बापट जैसे कलाकार काम कर रहे हैं. फिल्म इस साल सितंबर में रिलीज होगी. कहने को तो मधुर भंडारकर की फिल्म की असली हीरोइन और हीरो करीना कपूर ही हैं, लेकिन इस फिल्म के हीरो अर्जुन रामपाल का कहना है कि यह फिल्म एक ख़ूबसूरत प्रेम कहानी है. एक समारोह के दौरान रामपाल ने कहा, इस फिल्म में बेबो सर्वेसर्वा हैं. लेकिन इस फिल्म में एक ही प्रोफेशन से जुड़े दो लोगों के रिलेशन को बताया गया है. किस तरह से उनके रिश्तों में उतार-चढ़ाव आते हैं और क्या होता है उनके रिश्ते का. इसे बेहद ख़ूबसूरती के साथ बताया गया है. इस फिल्म में करीना एक अभिनेत्री की भूमिका निभा रही हैं, जो आसमान की बुलंदियों को छूने के बाद उसे संभाल नहीं पातीं. रामपाल का कहना है कि यह मधुर भंडारकर की फिल्म है, उनकी हर फिल्म में जीवन के कुछ अंश ज़रूर छिपे होते हैं. मॉडल से एक्टर बने रामपाल ने 2001 में प्यार, इश्क़ और मोहब्बत से अपने फिल्मी सफ़र की शुरुआत की. लेकिन उन्हें पहचान डॉन-द चेज बिगीन और ओम शांति ओम से मिली.

हॉलीवुड से

केट विंसलेट को साथी चाहिए

जहां गूगल में सबसे ज़्यादा सर्च किए जाने वाले शब्दों में ओपन मैरिज पॉपुलरिटी की सीमाएं तोड़ रहा है, वहीं केट विंसलेट ने एक क़दम पीछे लिया है. अरेंज मैरिज, लव मैरिज, कॉन्ट्रैक्ट मैरिज, इंटरकास्ट मैरिज के बाद अब शादी का नया डेवलपिंग ट्रेंड है ओपन मैरिज. ओपन मैरिज वह शादी होती है, जिसमें पति-पत्नी आपसी सहमति से एक-दूसरे को अन्य व्यक्तियों के साथ संबंध बनाने की इजाज़त देते हैं. पश्चिम में सबसे ज़्यादा इस तरह की सभ्यता को बढ़ावा मिलता रहा है, लेकिन हॉलीवुड की फिल्म टाइटेनिक से लाखों लोगों के दिलों में जगह बना चुकीं अभिनेत्री केट विंसलेट ने कहा है कि वह किसी एक व्यक्ति के साथ शादी के रिश्ते पर ही विश्वास करती हैं. हालांकि वह यह भी कहती हैं कि किसी एक व्यक्ति के साथ रहना एक बहुत बड़ी चुनौती है. उनके मल्टीपल अफेयर के चर्चे दुनिया भर के मीडिया में हाइलाइट हुए हैं. जिम थेरप्लेटॉन के साथ तीन सालों तक शादीशुदा ज़िंदगी बिताने के बाद निर्देशक सैम मेंडेस के साथ विवाह करके सात सालों तक साथ रहने वाली केट विंसलेट अब रिश्ते के मामले में थोड़ा अलग ही सोच दर्शा रही हैं. 36 वर्षीय अभिनेत्री ने कहा है कि शादी के रिश्ते में किसी एक के साथ काफ़ी समय तक रहना और उस रिलेशनशिप के प्रति ईमानदार रहना काफ़ी मुश्किल है, लेकिन वह चाहती हैं कि उनके शेष जीवन के लिए कोई साथी होना चाहिए. पिछले कुछ वक़्त से वह रिचर्ड ब्रैनसॅन के भतीजे नेड रॉकनरोल के साथ डेटिंग कर रही हैं. क्या पता इनका इशारा नेड की ही तरफ़ हो.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

दिल्ली, 13 फरवरी-19 फरवरी 2012

www.chauthiduniya.com

बारामती

बंधुआ मज़दूरों की सुध कौन लेगा

राजेश नामदेव

राज्य में पिछले जनवरी माह में महानगर पालिका और ज़िला परिषद के चुनावी माहौल के बीच एक ख़बर महाराष्ट्र की जनता को चौंकाती रही. दरअसल ख़बर यह है कि केंद्रीय कृषि मंत्री शरद पवार के गृह ज़िले में 50 आदिवासी मज़दूरों को बंधक बनाकर उनसे दिन-रात खेतों में काम कराया जा रहा है. सरकार को इसकी फ़िक्र भले ही न हो, लेकिन इस ख़बर को पढ़ने के बाद आम लोगों में उन मज़दूरों के प्रति एक संवेदना का भाव पैदा होता है. बेशक, बंधुआ मज़दूरी की प्रथा गुज़रे जमाने की बात हो गई है, लेकिन भारत के कृषि मंत्री के गृह ज़िले में मज़दूरों को बंधक बनाने की यह घटना सभ्य कहे जाने वाले समाज के मुंह पर करारा तमाचा है. आज़ादी के 64 वर्षों बाद भी ऐसी प्रथा देश के कई हिस्सों में आज भी क़ायम है, जो कहीं न कहीं सामंती युग की याद दिलाती है. हालांकि देश के संविधान और क़ानून ने इस प्रथा पर पूरी तरह रोक लगा दी है. इसके बावजूद ऐसी घटनाएं भारत की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक प्रगति पर सवालिया निशान लगाती हैं. ख़ास बात यह है कि समाज को कलंकित करने वाली इन प्रथाओं को वही लोग संरक्षण दे रहे हैं जो, ख़ुद को उच्च शिक्षित और आधुनिक कहलाने में गर्व महसूस करते हैं.

राज्य के नेता जनता के बीच जाकर आश्वासनों और वादों की ख़ैरात बांट रहे हैं. उनका भाषण सुनकर ऐसा लगता है कि उनसे अधिक जनता का हितैषी कोई दूसरा नेता महाराष्ट्र में है ही नहीं. चुनाव के समय जनता को भ्रमित कर वोट पाने वाले हमारे नेता चुनाव जीतने के बाद जनता को भूल जाते हैं, फिर पांच साल बीतने पर उन्हें जनता की याद सताने लगती है. आज विदर्भ जिस बदहाली का शिकार है उसके ज़िम्मेदार वही नेता हैं, जिन्होंने चुनाव जीतने के बाद यहां की ख़ुशहाली और प्रगति के बारे में कभी नहीं सोचा. यही वजह है कि विदर्भ स्थित मेलघाट से आदिवासियों का रोज़ी-रोटी के लिए पलायन जारी है. ग़ौरतलब है कि इसी इलाक़े से आदिवासी मज़दूरों को बारामती ज़िले में बंधक बनाकर खेतों में भूखे-प्यासे पेट काम कराने की बात सामने आई है. इन बंधक बनाए गए मज़दूरों से गन्ना तुड़वाया जाता था. यह घटना तब सामने आई, जब वहां से भाग कर आए बुडा नाडू जांबेकर और ओमप्रकाश रामलाल कासदेकर नामक दो मज़दूर अपने गांव भोकरबर्डी पहुंचे. उन्होंने बताया कि भोकरबर्डी, बोरी, नांदुरी गांव के मज़दूर एक एजेंट के माध्यम से बारामती और मराठवाड़ा इस उम्मीद से गए थे कि वहां अच्छी मज़दूरी मिलेगी, लेकिन वहां काम के बाद मज़दूरी मांगने पर पता चला कि वह एजेंट मज़दूरों को खेत मालिक के हवाले कर ग़ायब हो गया. उसके बाद खेत मालिक खेतों में उनसे भखे पेट काम कराता रहा. मौक़ा मिलते ही बुडा जांबेकर व ओमप्रकाश कासेदकर वहां से भाग निकलने में सफल रहे. गांव पहुंचकर जब उन्होंने अपनी व्यथा-कथा सुनाई और जब इसकी ख़बर धारणी तहसील व अमरावती ज़िले के अधिकारियों को लगी तो प्रशासन में हड़कंप मच गया. इसी के साथ मेलघाट में आदिवासी मज़दूरों के हित में चलाई जाने वाली योजनाओं के संचालन में प्रशासनिक गतिविधियों पर कई प्रश्नचिन्ह भी लग गए. उसके बाद पूरा प्रशासनिक हलके में हलचल मच गई है.

बंधुआ मज़दूरी की प्रथा भले सामंती युग की याद दिलाता हो, लेकिन भारत में आज भी ऐसी कई जगहें हैं, जहां यह अमानवीय काम हो रहा है. पिछले वर्ष सरकारी एजेंसियों ने देश में 2,82,135 बंधुआ मज़दूरों की पहचान कर उन्हें मुक्त भी कराया था. इसके अलावा क़रीब 2,60,714 बंधुआ मज़दूरों का पुनर्वास भी कराया गया. लगभग इतने ही या इससे भी ज़्यादा बंधुआ मज़दूर आज भी देश के विभिन्न हिस्सों में दासों की तरह काम कर रहे हैं. बंधुआ मज़दूरों की सबसे ज़्यादा तादाद भारत के कृषि क्षेत्र में दिखती है. इनमें से ज़्यादातर तथाकथित निचली जातियों से ताल्लुक़ रखते हैं. पिछले साल ही बंधुआ मज़दूरों के बारे में उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत एक रिपोर्ट में बताया गया है कि महाराष्ट्र में ऐसे मज़दूरों की संख्या 6,00,000 से अधिक है (इनमें से 70 प्रतिशत निचली जाति के हैं), जो प्रदेश की 150 चीनी मिलों में बंधुआ मज़दूरों की तरह काम कर रहे हैं. बारामती में आदिवासी मज़दूरों को बंधक बनाए जाने की घटना उच्चतम न्यायालय में पेश उक्त रिपोर्ट की ही पुष्टि करती है. राज्य में आज भी ग़रीब मज़दूरों को बंधक बनाकर किस तरह शोषण किया जा रहा है यह इसका ताज़ा उदाहरण है. इसी के साथ इस सच्चाई से भी पर्दा हटा देता है कि आदिवासियों के हित में चलाई जा रही योजनाओं का राज्य का प्रशासन किस तरह संचालन कर रहा है.

इस घटना के उजागर होने के बाद अमरावती ज़िले के विभागीय आयक्त गणेश ठाकुर ने धारणी तहसील प्रशासन को आदेश दिया है कि बारामती से भाग कर आए दोनों मज़दूरों का बयान लेकर बाक़ी मज़दूरों को छुड़ा कर लाने की व्यवस्था करे. उनका कहना है कि प्रशासन मज़दूरों को छुड़ा कर वापस उनके गांव तक पहुंचाने का पूरा इंतज़ाम करेगा. हो सकता है कि यह ख़बर प्रकाशित होने तक बारामती में बंधक मज़दूरों को छुड़ा लिया जाए, लेकिन घटना के उजागर होने के बाद ही प्रशासन की आंख क्यों खुली? पहले ऐसे उपाय क्यों नहीं किए गए, ताकि मेलघाट के आदिवासियों को रोज़ी-रोटी के लिए गांव से पलायन करने की ज़रूरत नहीं पड़ती. मेलघाट गांव वालों का कहना है कि रोज़गार गारंटी योजना के तहत उन्हें दो-दो माह तक रोज़गार नहीं मिलता है. रोज़गार के अभाव में उनके परिवार के सामने भुखमरी की स्थिति बन जाती है. लिहाज़ा यहां लोग बड़ी संख्या में रोज़ी-रोटी की तलाश में पलायन करने को मजबूर हो जाते हैं और अकोला, पूना, बारामती, चोहट्टा बाज़ार, आकोट, हरदा, नौगांव, इंदौर, मुंबई, गुजरात के शहरों में जाकर रोज़गार की तलाश करते हैं. वर्तमान में ही रोज़गार के लिए पलायन करने वालों की संख्या 30,000 से अधिक बताई जाती है, लेकिन प्रशासन समय रहते यहां के लोगों को रोज़गार गारंटी योजना व अन्य योजनाओं के तहत आदिवासियों को रोज़गार मुहैया करा कर पलायन रोकने के उपाय करने में हमेशा नाकाम साबित होता रहा है.

ऐसा नहीं है कि मेलघाट के आदिवासी मज़दूरों को बारामती में बंधक बनाकर उनसे जबरन काम कराने की, यह पहली घटना है. इसके पहले भी इस तरह की घटनाएं घटती रही हैं. यहां के लोगों का कहना है कि इसके पहले धारणी तहसील के ही चित्री, बोरी, दिदम्दा, बोड गांव के मज़दूरों को भी एक स्थानीय ठेकेदार द्वारा गुजरात में बंदी बनाकर रखे जाने का मामला उजागर हुआ था. इस मामले की शिकायत भी 16 दिसंबर, 2011 में कराई गई थी, लेकिन मज़दूरों को बंधक बनाने वाले ठेकेदार के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई नहीं की गई. इसकी वजह यह बताई जाती है कि उक्त ठेकेदार के एक विधायक के साथ घनिष्ठ संबंध थे. इसलिए ठेकेदार के निकटवर्ती विधायक के हस्तक्षेप के चलते मामले को ले-देकर पुलिस ने निपटा दिया. इसलिए ताज़ा घटना के उजागर होने के बाद कोई मज़दूर पुलिस में जाने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा है. यह ख़बर लिखे जाने तक पुलिस को पीड़ितों द्वारा रिपोर्ट लिखाए जाने का इंतज़ार था. रिपोर्ट दर्ज कराने में हो रही देरी पर लोगों का कहना है कि एफआईआर दर्ज कराने के बाद भी पीड़ितों को कोई लाभ नहीं होने वाला है. यदि पुलिस आदिवासी मज़दूरों में व्याप्त भय को मिटाना चाहती है तो उसे चाहिए कि वह उस एजेंट को खोजे जिसने इन मज़दूरों को बारामती ले जाकर गन्ना उत्पादकों को बेचकर फ़रार हो गया था. एफआईआर लिखाने के बाद भी पुलिस कहीं पहले की तरह मामले को रफ़ा-दफ़ा करने के लिए मज़दूरों को ही प्रताड़ित न करने लगे. इसी भय के कारण आदिवासी मज़दूर एफआईआर लिखाने से डर रहे हैं. वैसे भी यहां सारे क़ानून ग़रीबों पर ही लागू होते हैं, सबल तो पावर-पैसे का सहारा लेकर साफ निकल जाते हैं.

यहां ध्यान रहे कि इस घटना के उजागर होने के दरम्यान पूरा प्रशासनिक अमला चुनावी कामकाज में व्यस्त है. इसलिए इस मामले में कोई ठोस कार्रवाई होने की कोई संभावना नहीं है. इससे ज़ाहिर होता है कि इस मामले में जब धारणी की तहसीलदार किरण पाटिल से पत्रकारों ने जानकारी चाही तो उन्होंने साफ कहा कि फ़िलहाल मैं चुनावी कामकाज में व्यस्त हूं. उन्हें इस मामले के संबंध में कोई जानकारी नहीं है. इस मामले में यह भी आशंका व्यक्त की जा रही है कि यदि पुलिस द्वारा शिकायत मिलने के बाद इस मामले में दोषियों के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई की भी गई तो दोषियों को बचाने के लिए कई राजनेताओं का दबाव पड़ने लगेगा. इससे यह साफ ज़ाहिर होता है कि बारामती में मज़दूरों को बंधक बनाने के मामले पर मज़दूरों को शासन-प्रशासन से कोई न्याय मिलने वाला नहीं है. जिसने उनको बारामती में बंदी बनाया और जिस एजेंट ने उनको ले जाकर वहां बेचा, दोनों ही दबंग हैं. उनके राजनीतिक संबंध होने की भी चर्चा है.

feedback@chauthiduniya.com

सरकार कब जागेगी?

राज्य में मज़दूरों को बंधुआ बनाने की प्रथा आज भी जारी है, इस तथ्य के उजागर होने के बाद क्या सरकार की आंखें खुलेंगी या उसकी निद्रा टूटेगी? क्या वह इस बात की जांच-पड़ताल कराने का कष्ट करेगी कि मेलघाट में रोज़गार गारंटी व उसकी तरह की अन्य योजना के तहत मज़दूरों को काम क्यों नहीं मिलता है? इन योजनाओं पर ख़र्च किया जाने वाला करोड़ों रुपया जाता कहां हैं? पीड़ित मज़दूरों को न्याय क्यों नहीं मिल पा रहा है? आदिवासी मज़दूरों का पलायन रोकने के लिए किए जाने वाले सारे उपाय क्यों विफल साबित हो रहे हैं? जब तक सरकार उक्त सवालों व ऐसे ही अन्य सवालों का उत्तर नहीं तलाश लेती है, तब तक सभ्य समाज को कलंकित करने वाली बंधुआ मज़दूरी की प्रथा बंद नहीं हो सकती.

जून-जुलाई में बुआई के दौरान बाज़ार में खाद-बीज की कई कंपनियां जन्म ले लेती हैं. इनका मक़सद केवल लाभ कमाना होता है.

आख़िर महाराष्ट्र में शामिल करने के बाद बेलगांव में क्या बदलाव आ जाएगा? बेलगांव जैसे कई सीमावर्ती क्षेत्र आज भी विकास से कोसों दूर हैं.

महाराष्ट्र हलचल

गढ़चिरोली में आयोजित प्रीमियर क्रिकेट लीग के फाइनल मुक़ाबले में गढ़चिरोली कॉन्ट्रेक्टर बुल्स की टीम द्वारा फॉरेस्ट टाइगर की टीम को 13 रन से हराने पर विजेता टीम को एक लाख रुपये और उपविजेता टीम को 50 हज़ार रुपये का पुरस्कार प्रदान करते मुख्य अतिथिगण.

अच्छी शिक्षा के नाम पर करोड़ों की लूट

जिस देश में ग़रीबी का पैमाना गांव में 26 रुपये और शहर में 32 रुपये प्रतिदिन है, उसी देश में प्राथमिक शिक्षा की फीस सालाना 25 हज़ार रुपये से लेकर 75 हज़ार रुपये वसूली जा रही है. यह तब है, जब देश में शिक्षा अधिकार क़ानून लागू है. यानी हर बच्चे को अच्छी शिक्षा मुहैया कराना सरकार की ज़िम्मेदारी है, लेकिन क्या देश की 80 फ़ीसदी आबादी अच्छी शिक्षा के नाम पर इतनी फीस अदा कर सकती है? हैरत की बात यह है कि यह फीस इंजीनियरिंग और मेडिकल कॉलेजों की फीस से भी अधिक है. शिक्षा अब केवल शिक्षा नहीं, बल्कि प्रोडक्ट बन गई है.

अभिभावक जानकारी हासिल करें : सरोदे

नागपुर ज़िले के बूटीबोरी स्थित ईरा इंटरनेशनल स्कूल की प्राचार्य मनीषा सरोदे का मानना है कि पालकों को स्कूलों में दी जाने वाली सुविधाओं के बारे में पूरी तरह जानकारी हासिल करनी चाहिए. कई स्कूल संचालक ग़लत दावे भी करते हैं. सुविधाओं के हिसाब से यदि कोई स्कूल अधिक फीस वसूल कर रही है, तो वह ग़लत है. उन्होंने कहा कि अन्य सीबीएसई स्कूलों के मुक़ाबले उनके स्कूल की फीस काफी कम है. श्रीमती सरोदे ने बताया कि हमारी स्कूल में ई-लर्निंग (ऑडियो-वीडियो लर्निंग) के अलावा सभी तरह की सुविधाएं मौजूद हैं. जो भी एक्टिविटी स्कूल में होती है, उसके लिए लगने वाली सामग्री स्कूल ही बच्चों को देता है. स्वीमिंग पुल, कम्प्यूटर रूम स्कूल में है. उन्होंने इस आरोप को सिरे से ख़ारिज़ किया कि उनकी स्कूल में 25 फीसदी ग़रीब विद्यार्थियों को एडमिशन नहीं दिया जाता. श्रीमती सरोदे ने कहा कि आज तक शिक्षा विभाग या सरकार के किसी भी विभाग की ओर से उन्हें ऐसे बच्चों की सूची नहीं दी गई है. यदि शिक्षा विभाग सूची देता है, तो निश्चित ही उस पर अमल करने की बात उन्होंने कही. आष्टी स्थित भारतीय विद्या भवन स्कूल की प्राचार्य वंदना बिसेन ने कहा कि उनकी स्कूल में बच्चों को अच्छी से अच्छी सुविधाएं मुहैया कराई जाती हैं. ई-लर्निंग के साथ-साथ उनकी स्कूल में गणित और भौतिक विषय की अलग-अलग लैब भी है. साथ ही कम्प्यूटर लैब के जरिए बच्चों को नई तकनीक सिखाई जाती है. तुली पब्लिक स्कूल की प्राचार्य धुर्विका गुप्ता ने कहा कि बच्चों के सर्वांगीण विकास को देखते हुए स्कूल में हर तरह की एक्टिविटी पर ध्यान दिया जाता है. इन सभी बातों पर आने वाले ख़र्च और आम व्यक्ति को ध्यान में रखकर स्कूल की फीस तय की जाती है.

अभिभावकों का साक्षात्कार

नागपुर में इन दिनों नर्सरी और केजी में एडमिशन की प्रक्रिया जारी है. राज्य के शालेय शिक्षा विभाग के नियमानुसार एडमिशन के दौरान पालकों का साक्षात्कार नहीं लिया जा सकता. बावजूद इसके कई स्कूलों में पालकों का साक्षात्कार लेने के बाद ही उनके बच्चों को एडमिशन दिया जा रहा है.

इसके ग्राहक हैं बच्चे व उनके अभिभावक. शिक्षा संस्थाएं अब कंपनियां बन गई हैं, जो इस प्रोडक्ट को इन ग्राहकों को बेचती हैं. स्कूली संस्थाएं इस शिक्षा रूपी बाज़ार से हर वर्ष अरबों रुपये का धंधा कर रही हैं. अकेले नागपुर ज़िले में नर्सरी और केजी वन और टू के एडमिशन फार्म बेचकर ये संस्थाएं 20 करोड़ रुपये से भी अधिक की कमाई कर रही हैं. यदि पूरे वर्ष की फीस इसमें जोड़ दिया जाए, तो यह आंकड़ा अरबों रुपये तक पहुंच जाता है. अच्छी शिक्षा के नाम पर सरेआम अरबों रुपये की लूट की जा रही है. केंद्र सरकार द्वारा बनाया गया राइट टू एजुकेशन यानी शिक्षा का अधिकार क़ानून की सार्थकता इन आंकड़ों के सामने बेमानी नज़र आती है. नागपुर ज़िले की बात करें, तो यहां नर्सरी और केजी तक शिक्षा मुहैया कराने वाले लगभग 3 हज़ार प्ले स्कूल हैं. इसके अलावा राज्य शिक्षा बोर्ड की बिना अनुदानित एवं क़ायम बिना अनुदानित इंग्लिश स्कूलों की संख्या लगभग 500 हैं. नर्सरी और केजी तक शिक्षा देने के लिए किसी भी तरह का रजिस्ट्रेशन या मंज़ूरी की ज़रूरत नहीं पड़ती है. एक शैक्षणिक संस्था के नाम पर भी ये स्कूलें शुरू की जा सकती हैं. यही कारण है कि इन पर किसी भी सरकारी विभाग का नियंत्रण नहीं होता. इसका फ़ायदा उठाकर ये स्कूलें पालकों से मनमानी फीस वसूल करती हैं. कई स्कूलों में नर्सरी और केजी की केवल 100 सीट हैं, लेकिन इन स्कूलों में हर वर्ष लगभग 800 से 1000 फार्म बेचती हैं. फार्म की क़ीमत 100 रुपये से लेकर 700 रुपये तक है. यदि इसे औसतन 500 रुपए भी मानें, तो केवल एडमिशन फार्म बेचकर ही कई स्कूल लाखों रुपये कमाती हैं. साधारण प्ले स्कूलों की वार्षिक फीस 10 हज़ार रुपये से लेकर 20 हज़ार रुपये तक है. वहीं सीबीएसई, आईसीएसई बोर्ड की बड़ी स्कूलों में यह फीस 25 हज़ार रुपये से लेकर 75 हज़ार रुपये प्रति वर्ष है. इस फीस में से पालकों को 5 से 25 हज़ार रुपये तक की रसीद नहीं दी जाती है. इसे डेवलप्मेंट चार्ज कहा जाता है. यदि स्कूल दूर है, तो स्कूल बस चार्ज के रूप में 600 से 1000 रुपये प्रति माह वसूले जाते हैं. यानी 7 से 12 हज़ार रुपये अलग से. इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि इन स्कूलों में बेहतर शिक्षा के नाम पर किस क़दर करोड़ों रुपये का कारोबार किया जा रहा है.

सीबीएसई के नाम पर लूट

नागपुर ज़िले में सीबीएसई एफलिएटेड स्कूलों की संख्या 39 हैं, लेकिन उन स्कूलों की संख्या इससे अधिक हैं, जो सीबीएसई एफलिएटेड नहीं हैं. सीबीएसई पैटर्न चलाकर पालकों से मोटी फीस वसूल करती हैं. इन स्कूलों में पालकों को भरोसा दिलाया जाता है कि यहां सीबीएसई बोर्ड के अनुसार ही शिक्षा मुहैया कराई जाती है. अभिभावकों को इसकी जानकारी नहीं होने से वे इनकी ठगी के शिकार हो जाते हैं. हैरत की बात यह है कि इन स्कूलों के ख़िलाफ़ शिक्षा विभाग भी कोई कार्यवाई नहीं कर रहा. अधिकारियों का कहना है कि जब तक कोई शिकायत नहीं करता, तब तक वे कोई कार्यवाई नहीं कर सकते.

क़ानून आने के पूर्व ही फीस वृद्धि

सरकार ने इन स्कूलों की फीस नियंत्रित रखने के लिए शुल्क नियंत्रण क़ानून बनाया है, लेकिन राष्ट्रपति के हस्ताक्षर नहीं होने से इसे लागू नहीं किया गया है. हालांकि, कई स्कूलों ने अपनी फीस में वृद्धि कर दी है. यह वृद्धि 10 से 15 फ़ीसदी तक की गई है. ग़ौरतलब है कि नए क़ानून के तहत एक बार फीस बढ़ाने पर कोई भी स्कूल आगामी दो वर्षों तक इसमें बढ़ोत्तरी नहीं कर सकती. फीस बढ़ोत्तरी करने के पूर्व स्कूल प्रशासन को 6 महीने पहले पालकों को इसकी जानकारी देनी होगी. दिसंबर के अंत में इस क़ानून को विधि मंडल ने मंज़ूरी दी है, लेकिन राष्ट्रपति के हस्ताक्षर नहीं होने से इसके आगामी शैक्षणिक वर्ष से लागू होने की उम्मीद कम है. ऐसे में इसी साल कई स्कूलों ने अपनी फीस बढ़ा दी.

स्कूलों में मैदान नहीं

पालकों से फीस के नाम पर हज़ारों रुपये वसूल कर रही स्कूलों में सुविधाओं के नाम पर कुछ भी नहीं है. हर स्कूल में बच्चों के खेलने के लिए मैदान का होना बेहद ज़रूरी है, लेकिन काफी कम स्कूलों के पास ही अपने मैदान है. कई स्कूल ख़ाली पड़ी सरकारी ज़मीन को मैदान के रूप में उपयोग करती हैं, जबकि कई स्कूलों के बच्चों को इस तरह के मैदान भी नसीब नहीं हैं. यहां पढ़ने वाले बच्चे स्कूल के बरामदे पर ही खेलकर अपनी इच्छा पूरी कर लेते हैं. इसके बावजूद भी राज्य के शिक्षाधिकारी इन स्कूलों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने की ज़रूरत नहीं समझते.

ग़रीब छात्रों का एडमिशन अनिवार्य

नियम के अनुसार हर निजी स्कूल में 25 फ़ीसदी ग़रीब विद्यार्थियों को एडमिशन देना अनिवार्य है, लेकिन किसी भी निजी स्कूलों में इन नियमों का पालन नहीं किया जाता. तक़लीफ़देह बात यह है कि शिक्षा विभाग की ओर से नियम तोड़ने वाले निजी स्कूल संचालकों के ऊपर कोई कार्रवाई नहीं हो रही है. कई निजी स्कूल संचालकों का आरोप है कि शिक्षा विभाग के अधिकारी उनका सहयोग नहीं करते. उनका कहना है कि शिक्षा विभाग एक भी सीबीएसई स्कूल को ग़रीब विद्यार्थियों की सूची नहीं दी है. हालांकि नियम में किसी भी तरह की सूची की बात नहीं कही गई है, बल्कि स्कूल को ही यह निर्णय लेना है. उस पर शिक्षा विभाग का नियंत्रण होगा, लेकिन शिक्षा विभाग भी महज़ खानापूर्ति के कुछ नहीं करता.

फीस अधिक लेकिन क्या करें : पालक

चौथी दुनिया ने स्कूलों की ओर से ली जाने वाली फीस के संबंध में जब पालकों से चर्चा की, तो उन्होंने माना कि स्कूलों की फीस अधिक है, लेकिन बच्चों को अच्छी शिक्षा मिले, इसलिए वे इसे देते हैं. एक निजी इंश्योरेंस कंपनी में कार्यरत आशीष मगेश ने भी स्कूलों की बढ़ी हुई फीस को ग़लत बताया. उन्होंने कहा कि आधा वेतन तो बच्चों की शिक्षा में ही ख़र्च हो जाता है. ऐसे में भविष्य के लिए कुछ बचत नहीं हो पाती. सरकारी कर्मचारी गौतम अंबादे ने कहा कि उनका बच्चा अभी प्ले स्कूल में नर्सरी में पढ़ता है. एक वर्ष में उसे लगभग 22 हज़ार रुपये का ख़र्च आया है. इतना ख़र्च तो उन्हें 10वीं तक पढ़ने में भी नहीं हुआ. उन्होंने कहा कि निश्चित ही स्कूलों की फीस पर लगाम कसी जानी चाहिए. अर्चना प्रजापति ने कहा कि उनके दो बच्चे हैं और दोनों बच्चों की पढ़ाई में हर वर्ष लगभग 30 हज़ार रुपये ख़र्च हो जाते हैं. उन्होंने कहा कि बच्चों को अच्छी शिक्षा मिले यह हर माता-पिता चाहते हैं, लेकिन उसके लिए इतनी फीस वसूल करना ग़लत है. मोहन चौधरी, आशा पांडे, धीरज कोटांगले, कृष्णिका कोंकोडे ने भी बढ़ी हुई स्कूली फीस का विरोध किया.

शिकायत मिलने पर होगी कार्रवाई

नागपुर विभाग के शिक्षण उपसंचालक महेश करजगांवकर से पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि इस संबंध में शिकायत मिलने पर विभाग दोषियों के ख़िलाफ़ ज़रूर कार्रवाई करेगा. उन्होंने कहा कि जहां तक स्कूलों में फीस वृद्धि का मामला है, तो नया शुल्क वृद्धि नियंत्रण क़ानून लागू होने पर इस तरह के मामलों में कमी आएगी और काफी हद तक पालकों को इससे राहत मिलेगी.

महाराष्ट्र ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

पश्चिम विदर्भ

नक़ली बीज से हज़ारों किसान बर्बाद

पश्चिम विदर्भ के 3 हज़ार से भी अधिक किसान इन दिनों परेशानी में हैं. वजह यह है कि उनके द्वारा लगभग 2 हज़ार हेक्टेयर क्षेत्र में बोए गए सोयाबीन के बीज नहीं उगे. इससे उन्हें लाखों रुपये का नुक़सान हुआ है, लेकिन इन किसानों को बीज बेचने वाली कंपनियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करना तो दूर राज्य सरकार परेशान किसानों को मदद करने से भी कतरा रही है. वर्ष 2011 के खरीफ़ मौसम में विदर्भ, खानदेश और मराठवाड़ा में लगभग 30 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सोयाबीन की बुआई किसानों ने की. इसमें सबसे अधिक क्षेत्र पश्चिम विदर्भ का है. पूर्व विदर्भ में भी बड़े पैमाने पर सोयाबीन की फ़सल ली जाती है. इससे पूर्व भी कभी सोयाबीन, कभी बीटी कपास के बीजों को लेकर शिकायतें आती रही हैं. जून-जुलाई में बुआई के दौरान बाज़ार में खाद -बीज की कई कंपनियां जन्म ले लेती हैं. इनका मक़सद केवल लाभ कमाना होता है. बुआई मौसम ख़त्म होते ही ये कंपनियां भी ग़ायब हो जाती हैं. फिर अगले मौसम से नए नामों से ये कंपनियां पुनः बाज़ार में लौट आती हैं, जो किसान इन कंपनियों के जाल में फंसता है, उसे निराशा और नुक़सान के सिवा कुछ नहीं मिलता. बुआई शुरू होने के पूर्व इस फ़र्ज़ीवाड़े को रोकने के लिए कृषि विभाग द्वारा उड़नदस्ते बनाए जाते हैं, लेकिन इसके बाद भी फ़र्ज़ी बीज कंपनियों द्वारा किसानों को ठगने की घटनाएं होती हैं. पिछले वर्ष जिन किसानों के खेतों में बीज बोने के बाद भी सोयाबीन की फसल नहीं हुई, उन्हें भी कोई राहत नहीं मिली है. राज्य में लगभग 5 हज़ार शिकायतें कृषि विभाग को मिली हैं. इनमें पश्चिम विदर्भ के बुलढाना, वाशिम, यवतमाल और अमरावती ज़िले की ही लगभग 31 सौ शिकायतें हैं. इनमें से 2805 शिकायतों को कृषि विभाग ने सही पाया है. बुलढाना की सबसे अधिक 2182 शिकायतों का समावेश है. इसके बाद यवतमाल का नंबर है जहां 495 किसानों ने शिकायतें की हैं. बीज के अलावा नक़ली खाद और कीटनाशक के मामले भी हज़ारों में हैं. सूत्रों के अनुसार फ़र्ज़ी कंपनियां जिन एजेंटों को नियुक्त करती हैं, वे कृषि विभाग के ही कुछ अधिकारी या कर्मचारियों को अपने साथ मिला लेते हैं. ऐसे में वे कभी पकड़े नहीं जाते. यदि पकड़ भी लिए गए, तो जल्दी ही छूट जाते हैं. यही कारण है कि हर साल हज़ारों किसान तबाह हो रहे हैं. एक बार बीज बोने के बाद यदि वे नहीं उगते, तो वह ज़मीन ख़ाली पड़ी रहती है. फसल नहीं होने से किसान को नुक़सान झेलना पड़ता है. शिकायत, जांच और फिर कार्रवाई में इतना समय बीत जाता है कि कई किसान इससे होने वाली परेशानी से बचने के लिए कृषि विभाग के पास शिकायतें भी नहीं करते. मई, जून और जुलाई महीनों के दौरान खाद और बीज की कालाबाज़ारी होती है. कई विक्रेता इन कंपनियों के बीज, खाद का स्टॉक कर लेते हैं और बुआई के दौरान इनकी कृत्रिम कमी दिखाकर ऊंची क़ीमतों पर बेचते हैं. ऐसे में कृषि विभाग के उड़नदस्ते पर ही सवाल उठने लगे हैं.

बीज कंपनियों को नोटिस

राज्य में प्राप्त कुल शिकायतों में से 60 फ़ीसदी से भी अधिक मामले पश्चिम विदर्भ के चार ज़िलों से हैं. अमरावती कृषि विभागीय कार्यालय के सहसंचालक सुरेश अंबुलगेकर ने बताया कि पश्चिम विदर्भ से 31 सौ किसानों ने सोयाबीन बीज के नहीं उगने की शिकायतें विभाग के पास की है. इनमें से 2 हज़ार 805 शिकायतें सही पाई गई हैं. इन सभी किसानों को मदद देने का आदेश कृषि विभाग ने दिया है. उन्होंने बताया कि प्रत्यक्ष रूप में अब तक 95 किसानों को मदद दी गई है. साथ ही इस संबंध में स्थानीय स्तर पर भी कार्रवाई करने के आदेश दिए गए हैं.

महाराष्ट्र ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

महाराष्ट्र के उद्योग कर्नाटक की राह पर

आलोक मिश्रा

राज्य में सत्तारूढ़ कांग्रेस-राष्ट्रवादी कांग्रेस की सरकार अकसर यह दावा करती है कि महाराष्ट्र औद्योगिक दृष्टि से सबसे आगे है. देशी-विदेशी कंपनियों के लिए महाराष्ट्र पहली पसंद बना हुआ है. उनका यह दावा मात्र छलावे के अलावा कुछ नहीं हैं. हक़ीक़त यह है कि राज्य में ढांचागत सुविधाओं के अभाव और उद्योगों की ज़रूरतों के प्रति सरकार के उपेक्षापूर्ण रवैये के चलते राज्य के कई उद्योगपति दूसरे राज्यों की ओर पलायन कर गए हैं. अब सांगली-मिरज औद्योगिक क्षेत्र में स्थित उद्योग अपना बोरिया-बिस्तर समेट कर कर्नाटक जाने की तैयारी में हैं. इससे आघाड़ी सरकार के दावे की पोल खुल जाती है. यह भी पता चलता है कि सरकार की औद्योगिक नीति कैसी है? यह विडंबना ही कही जाएगी कि एक ओर बेलगांव में मराठी भाषियों पर कर्नाटक सरकार द्वारा अन्याय के नाम पर राज्य के राजनीतिक दलों द्वारा खूब हो-हल्ला किया जाता है. विधानसभा में प्रस्ताव पारित कर कर्नाटक सरकार को बर्ख़ास्त करने की मांग केंद्र से की जाती है, लेकिन राज्य के लोगों को रोज़गार देने वाले उद्योगों के प्रति राज्य सरकार का रवैया उपेक्षापूर्ण बना हुआ है. विशेष बात यह है कि कर्नाटक सरकार ने सांगली-मिरज एमआईडीसी के करीब 500 उद्योगों को बेलगांव के कागवाड में औद्योगिक क्षेत्र स्थापित कर सारी ढांचागत सुविधाएं उपलब्ध कराने को तैयार है. ग़ौरतलब है कि बेलगांव का जब भी मुद्दा उठता है, तो वहां मराठी लोगों पर अन्याय

होने की बात को उछाल कर हर सियासी दल अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकना शुरू कर देता है. बेलगांव को महाराष्ट्र में शामिल करने की जोरशोर से मांग की जाने लगती है. बेलगांव को भावनात्मक मुद्दा बनाकर मराठी अस्मिता से जोड़कर अधिक से अधिक राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश की जाती है. आख़िर महाराष्ट्र में शामिल करने के बाद बेलगांव में क्या बदलाव आ जाएगा? बेलगांव जैसे कई सीमावर्ती क्षेत्र आज भी विकास से कोसों दूर हैं. वहां मूलभूत सुविधाओं का अभाव है. इसलिए मनसे प्रमुख राज ठाकरे द्वारा विधानसभा के शीतसत्र के दरम्यान यह कहना कि यदि महाराष्ट्र में शामिल किए जाने के बाद बेलगांव की विदर्भ की तरह दशा होनी है तो उसका कर्नाटक में ही रहना ठीक है. दूसरी ओर राज्य में उद्योगों का पलायन जिस गति से हो रहा है वह आघाड़ी सरकार के लिए चिंता की बात होनी चाहिए, लेकिन सरकार इससे बेफिक्र है. उसे सिर्फ़ उन उद्योगों की चिंता है, जिनसे उनके मंत्रियों व नेताओं के ट्रस्टों को मोटी रक़म चंदे के रूप में मिलती रहे. सरकार के इस उपेक्षापूर्ण रवैये से तंग आकर सांगली-मिरज एमआईडीसी के बीमार उद्योग अब कर्नाटक जाने की राह पर हैं.

ख़ास बात यह है कि राज्य में उद्योगों के लिए बिजली की दर जहां 5 रुपये 49 पैसे से लेकर 6 रुपये 3 पैसे तक वसूल किए जाते हैं, वहीं कर्नाटक में उद्योगों को दी जाने वाली बिजली की दर 4 रुपये 90 पैसे से लेकर 5 रुपये 30 पैसे प्रति यूनिट है. बिजली की दर कम होने इसकी निरंतर आपूर्ति होने से लोगों को अपने उद्योग कर्नाटक में लगाना अधिक फ़ायदेमंद लगता है. सांगली-मिरज एमआईडीसी छोड़कर कर्नाटक जाने को तत्पर उद्योगों में फाऊंड्री उद्योग, हल्दी प्रोसेसिंग उद्योग, प्लास्टिक उद्योग के अलावा कई कपड़ा मिल भी वहां जाने का मन बना रही है. कर्नाटक औद्योगिक विकास मंडल के अधिकारियों ने सांगली-मिरज एमआईडीसी के उद्योग संचालकों से यह वादा किया है कि वे यदि राज्य में आते हैं तो बेलगांव में कागवाड में उन्हें उद्योगों को स्थापित करने के लिए सभी ढांचागत सुविधाएं मुहैया कराई जाएंगी. सांगली-मिरज औद्योगिक बस्ती संगठन के अध्यक्ष संजय आराणके का कहना है कि वे पिछले 12 वर्षों से इस औद्योगिक बस्ती को इंडस्ट्रीयल टाउनशिप घोषित करने की मांग कर रहे हैं, लेकिन सरकार कोई ध्यान नहीं दे रही है. इस संबंध में मुख्यमंत्री कार्यालय को बार-बार सूचित भी किया गया. इसके अलावा सड़क, पथदीप, कचरा एकत्र करने की व्यवस्था, गंदे पानी के संशोधन जैसी आधारभूत सुविधाओं का अभाव रहने से यहां उद्योगों को चलाने में कठिनाई हो रही है. डकी योजना के तहत ढांचागत सुविधाओं से लैस औद्योगिक संकुल तैयार कर देने का वादा भी कर्नाटक औद्योगिक मंडल के अधिकारियों ने किया है. संजय आराणके के मुताबिक़ इस बाबत फरवरी माह में बंगलुरु में बैठक होगी, जिसमें विस्तार से बातचीत होगी.

ऐसे में सवाल यह उठता है कि प्रदेश की बड़बोली सरकार दो माह में सांगली-मिरज औद्योगिक बस्ती के उद्योगों को कर्नाटक जाने से कैसे रोकेगी? इसके बाद भी सरकार की आंखें नहीं खुलती है. प्रदेश सरकार अगर अपनी औद्योगिक नीति को दुरुस्त नहीं करती है और केवल बेलगांव मनपा की बर्ख़ास्तगी पर राजनीतिक रोटी सेंकने में लगी रही तो राज्य के उद्योगों का पलायन करना प्रदेश के लिए नुक़सानदेह साबित होगा.

feedback@chauthiduniya.com

दारू की नदी बहने दो

ये क्या हो रहा है...

राज्य में चुनावी धूम मची हुई है. चुनावी आचार संहिता लागू है. राज्य के नेता वोट मांगते घूम रहे हैं. इस माहौल में पूरे प्रदेश बियर बारों की रौनक कुछ ज्यादा ही बढ़ गई है. ऐसे में राज्य के गृह मंत्रालय द्वारा एक आदेश जारी कर पुलिस को निर्देश दिया है कि परवानाधारक (लाइंसेस प्राप्त) बियर बार, बियर शॉप, परमिट रूम और देसी दारू की दुकानों में नियम-क़ायदों का उल्लंघन करने वालों के ख़िलाफ़ कार्रवाई न करे. क़ानून का उल्लंघन करने वालों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने की बजाय उन पर जुर्माना किया जाय. वाकई आबा साहिब (आर.आर. पाटिल) आप बहुत ही चतुर-सुजान मंत्री हैं. तभी तो आप राज्य में दारू की नदियां बहाकर राज्य के राजस्व में बढ़ोतरी करने का अनोखा उपाय ईज़ाद किया है. गृह विभाग के इस फरमान से यह साफ़ हो गया है कि चुनाव के मौसम में सरकार मद्यपान में ढिलाई देकर एक तीर से तीन निशाना साधना चाहती है. इसलिए तो सरकार दारू की खुली बिक्री को बढ़ावा देने के लिए जहां धड़ाधड़ दारू की दुकानों, बियर बारों का लाइसेंस बांट रही है, वहीं दारू पीने के परमिट के नियमों को शिथिल कर परमिट का उल्लंघन करने वालों के ख़िलाफ़ पुलिस को कार्रवाई करने की बजाय उनसे रक़म वसूली करने को कह रही है, ताकि राज्य का सरकारी ख़ज़ाना भरा जा सके. इससे दारू विक्रेताओं, बियर बार व देसी दारू संचालकों की कमाई बढ़ेगी और उनसे कर के रूप में प्राप्त होने वाले राजस्व से सरकार की आमदनी में इज़ाफ़ा होगा. इसके अलावा चुनावी मौसम में दारू की खुली बिक्री का लाभ हमारे राजनेता उठाना अच्छी तरह जानते हैं. सरकार को भी मालूम है कि चुनाव के मौसम में राजनेता कार्यकर्ताओं व मतदाताओं को खुश करने के लिए रुपया के बाद दारू का सबसे अधिक उपयोग करते हैं. संभवतः चुनावी मौसम में गृह विभाग द्वारा दारू प्रेमियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई न करने का पुलिस को निर्देश देने का मुख्य कारण उक्त में से आख़िरी हो सकता है. इसकी वजह यह है कि चुनाव के दौरान दिन भर प्रचार में जुटे कार्यकर्ता शाम ढले बियर बार में अपना गला तर करने ज़रूर जाते है. ऐसे में यदि पुलिस कड़ाई से कार्रवाई करेगी तो शायद राजनीतिक दलों के सामने कार्यकर्ताओं का संकट खड़ा हो जाएगा. कार्यकर्ताओं के बिना मतदाताओं तक नेताजी की पहुंच नहीं हो पाएगी. इसलिए राजस्व बढ़ाने के बहाने राज्य में दारू की नदियां बहने देने का आदेश गृह विभाग ने जारी कर दिया है. इससे उसके तीनों उद्देश्य पूरे हो जाते हैं. यदि यह मुख्य वजह नहीं है तो मुख्यमंत्री पृथ्वीराज चव्हाण व गृहमंत्री आर. आर. पाटिल ही बताएं कि राज्य में यह क्या हो रहा है? राज्य का राजस्व बढ़ाने के लिए दारू की नदियां बहाने को किसी तरह नैतिक रूप से जायज नहीं ठहराया जा सकता है. इसके अलावा जो मंत्री नैतिकता के नाम पर बार बालाओं की रोज़ी-रोटी बंद करा सकता है, वह दारू बेचने-पीने में क़ानून का उल्लंघन करने वालों के ख़िलाफ़ सख्त कार्रवाई करने से पुलिस को क्यों रोकेगा? राज्य में जिस तरह से दारू की दुकानों में बढ़ोतरी हो रही है और दारू बिक्री में इज़ाफा हो रहा है उससे तो यही पता चलता है कि सरकार को अपने हित साधने के अलावा समाज से कुछ नहीं लेना-देना है. यह सर्वविदित है कि शराब की बिक्री बढ़ने के साथ ही अपराधियों व अपराधिक घटनाओं के आंकड़ों में भी वृद्धि दर्ज की जाती है. विशेष बात यह है कि नशे की शिकार सबसे अधिक युवा पीढ़ी ही है. इसलिए गृह विभाग का पियक्कड़ों के हित में पुलिस को निर्देश देना कहां तक उचित है जब पहले से ही दारू ख़रीदी-बिक्री पर नियंत्रण के लिए पृथक से आबकारी विभाग कार्यरत है.

महाराष्ट्र ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

संक्षिप्त समाचार

अन्ना हीरो बने

मुंबई का हीरो कौन? इस सवाल पर इंडिया अगेंस्ट करप्शन मुंबई इकाई द्वारा मतदान कराया गया. इसके लिए मुंबई स्थित गेटवे ऑफ इंडिया में मतदान केंद्र बनाया गया. मतदाताओं को शिवसेना प्रमुख बाल ठाकरे, कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी, राष्ट्रवादी कांग्रेस के प्रमुख शरद पवार, महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना अध्यक्ष राज ठाकरे, वरिष्ठ भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी और भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ लड़ाई लड़ रहे समाजसेवी अन्ना हज़ारे में से किसी एक को मुंबई का हीरो चुनने का विकल्प दिया गया था. तीन घंटे चले इस मतदान में कुल 5181 लोगों ने अपना मत दिया. कुल मतदान में से 4241 लोगों ने अन्ना हज़ारे के पक्ष में मतदान किया. इस तरह अन्ना हज़ारे मुंबई के हीरो चुने गए. इससे यह बात साफ है कि जनता में भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ आक्रोश है और वह आज भी अन्ना हज़ारे का समर्थन करती है.

स्कूली पोषण आहार में कालाबाज़ारी

स्कूली पोषण आहार के लिए सरकारी गोदाम में रखे 200 क्विंटल चावल को नागपुर में बेचने हेतु ले जाते हुए अकोला की खदान व सिटी कोतवाली पुलिस ने अपने संयुक्त अभियान में ट्रक चालक सहित 3 कालाबाज़ारियों को धर दबोचा. ग्राम वाडेगांव स्थित सरकारी गोदाम में स्कूलों में पोषण आहार योजना के तहत बच्चों के लिए रखे 200 क्विंटल चावल (जिसकी बाज़ार में क़ीमत 3.30 लाख रुपये आंकी गई है.) जमील शाह कलंदर द्वारा ट्रक से नागपुर ले जाया जा रहा था. इसकी सूचना मिलने पर अकोला पुलिस ने लक्जरी बस स्टैंड के पास ट्रक को रोका तो आरोपियों ने बताया कि ट्रक में 300 बोरे ज्वारी है, लेकिन जांच करने पर बोरों में चावल पाया गया. इसके बाद पुलिस ने ट्रक चालक सैयद जुबेरुद्दीन सैयद समीरुद्दीन (45), क्लीनर अब्दुल सादिक अब्दुल मजीद (22) सहित जमील शाह कलंदर को गिरफ्तार कर अदालत के समक्ष पेश किया. आपूर्ति विभाग के निरीक्षण अधिकारी ने जांच में स्पष्ट किया है कि कालाबाज़ारी के लिए ले जाया जाने वाला चावल स्कूली पोषण आहार का है. अब अकोला पुलिस इस पूरे प्रकरण की जांच कर रही है, लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि यह कालाबाज़ारी का धंधा बिना सरकारी अधिकारियों की मिलीभगत के नहीं किया जा सकता है. इसके लिए दोषी संबंधित विभाग के अधिकारियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई क्यों नहीं की जा रही है? लालची-रिश्वतखोर अधिकारियों को कोई लाज-शर्म नहीं आती है. सोलापुर में 20 हज़ार रुपये की रिश्वत लेते ज़िला आपूर्ति अधिकारी रघुनंदन सावंत को एंटी करप्शन ब्यूरो के अधिकारियों ने पकड़ा तो कुछ भी आसामान्य बात नहीं थी. हालांकि जब उनके घर की तलाशी ली गई तो सात बोरों में भर कर रखी गई सरकारी फाइलों को जब्त किया गया. इससे जांच अधिकारियों की आंखें खुली की खुली रह गई. इसकी वजह यह थी कि बोरों में भरकर रखी गई 300 फाइलों में कई महत्वपूर्ण मामलों से संबंधित थीं. छानबीन में उसकी बेहिसाब करोड़ों की संपत्ति का भी पता चला. सावंत के परिवारजनों के नाम पर कोल्हापुर में दो पेट्रोल पंप और इसके अलावा कोल्हपुर, पुणे, पनवेल, चिपलूण में चार सदनिका, पंहाला तहसील के घोरपडी गांव में आलीशान बंगला है और 25 एकड़ कृषि भूमि है. इसके अलावा लाखों के डिपॉजिट प्रमाण पत्र मिले हैं. सोने-चांदी के आभूषणों का हिसाब-किताब जांच अधिकारी अब तक नहीं लगा पाए हैं. जांच अधिकारियों को अनुमान है कि रिश्वतखोर सावंत की नामी-बेनामी संपत्तियों को मिलाकर कुल आंकड़ा 200 करोड़ रपये से अधिक हो सकता है. फिलहाल उसे दक्षिण सोलापुर तहसील के पिंजारवाड़ी स्थित सस्ते राशन की दुकान व मिट्टी तेल वितरण का लाइंसेस रद्द करने के लिए जारी नोटिस को वापस लेने बाबत रिश्वत लेते पकड़ा गया. जांच अधिकारियों का कहना है कि सावंत द्वारा महत्वपूर्ण मामलों की फाइलों को रोककर रिश्वत में लोगों से मोटी रक़म वसूलने की बात सामने आई है. इस तथ्य के उजागर होने के बाद इस मामले को गंभीरता से लेते हुए राज्य के मुख्य सचिव रत्नाकर गायकवाड़ ने भ्रष्ट सावंत को बर्ख़ास्त करने की सिफ़ारिश सरकार से की है.

उद्धव ठाकरे क्या करेंगे?

शिवसेना प्रमुख बालासाहब ठाकरे के जन्मदिन पर मुंबई स्थित मातोश्री में शिवसैनिकों का जमघट लगा था. राजकाज करने वालों का बालासाहब ठाकरे को जन्मदिन की शुभकामनाएं देने के लिए कतार सी लगी रही. जिसमें राकांपा के मुखिया शरद पवार जैसे नेता भी शामिल थे. सबसे महत्वपूर्ण बात महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना के सेनापति राज ठाकरे ने कही. ठाकरे ने कहा कि वर्ष 2007 के बाद से उनकी बातचीत बालासाहब ठाकरे से नहीं हुई है. मातोश्री का नंबर भी उनके पास नहीं है. मातोश्री में फोन किया भी तो बालासाहब को दिया भी जाएगा या नहीं, यह कहना मुश्किल है. इसलिए मैं यहीं से उन्हें जन्मदिन की शुभकामनाएं देता हूं. मैं यह वादा करता हूं कि अपने सबसे प्यारे काका और देवतुल्य बालासाहब की अपेक्षानुसार मुंबई का विकास कर दिखाऊंगा. य़हां सवाल यह उठता है कि जब मनसे नेता राज ठाकरे बालासाहब के सपनों को साकार करेंगे, तो उद्धव ठाकरे क्या करेंगे? यह बात जगज़ाहिर है कि राज ठाकरे में ही बालासाहब की झलक महाराष्ट्र की जनता को दिखाई देती है. राज्य में जैसे-जैसे मनसे का विस्तार हो रहा है वैसे-वैसे यहां शिवसेना प्रभाव कम हो रहा है. यहां तक कि शिवसेना की मुख्य सहयोगी भाजपा ने भी महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना(मनसे) से रिश्ते बढ़ाने शुरू कर दिए हैं. इसका मतलब तो यही हुआ कि मनसे को खुराक शिवसेना से ही मिलती है और यदि मुंबई मनपा की सत्ता शिवसेना के हाथ से फिसली तो उद्धव का संकट बढ़ सकता है. इसलिए जनता के मन में यह सवाल उठ रहा है कि जब बालासाहब के सपनों को साकार करने का बीड़ा राज ठाकरे उठाएंगे तो उद्धव ठाकरे क्या करेंगे?

महाराष्ट्र ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

नागपुर शहर में पांचपावली से गोलीबार चौक तक बना पुल आज अपनी हालत पर आंसू बहा रहा है. पुल के बीच में बने ज्वाइंट उखड़ गए हैं.

Postal Regn. No. RNP/NP/CITY/383/2011-13, RNI No. DELHIN/2009/30467

जनसमस्याएं बरक़रार

दिल से नहीं दिमाग़ से वोट करें मतदाता

पूरे देश में महाराष्ट्र को प्रगतिशील राज्य माना जाता है. ऐसे में जनता पर ज़िम्मेदारी है कि वह महाराष्ट्र को अंधेर नगरी न बनने दें. वे ऐसे जनप्रतिनिधि चुनें, जो उनके शहरों को आधुनिक सुविधायुक्त विकसित शहर बनाने के लिए प्रयास करें. अगर यहां के मतदाता सही जनप्रतिनिधि को चुनते हैं तो नागपुर विकास के कीर्तिमान रच सकता है. लगभग 25 लाख आबादी वाले नागपुर शहर के पास पूरे देश का सिरमौर बनने की असीम संभावनाएं हैं, लेकिन अड़चन यह है कि यहां के जनप्रतिनिधि सड़क, पानी, बजली से ऊपर नहीं उठ पा रहे हैं. आगामी 50 वर्षों को सामने रख काम करने वाले नेताओं का अभाव है. कभी अच्छी सड़कों, सुंदरता और हरियाली के लिए देश के चुनिंदा शहरों में गिना जाने वाला नागपुर आज गड्ढों की राजधानी बन गया है.

फोटो–प्रभात पाण्डेय

मयूर रंगारी

महानगर पालिका चुनाव का अंतिम चरण है. मतदाता अपने मताधिकार का उपयोग कर शहर के विकास के लिए इस सप्ताह अपने नगरसेवकों को चुनेंगे. हालांकि एक ओर जहां दुनिया 21वीं सदी की नई–नई चुनौतियों का सामना कर रही है. वहीं आज़ादी के 65 वर्षों बाद भी महाराष्ट्र की जनता शहर सड़क, पानी, बिजली, गंदे पानी की निकासी, अतिक्रमण का ही रोना रो रही है. महाराष्ट्र की जिन 10 मनपाओं के लिए चुनाव हो रहे हैं, उनमें विदर्भ की तीन नागपुर, अमरावती और अकोला मनपा का भी समावेश है. आज जब मनपा के राजस्व को बढ़ाकर विकास कार्यों को गति देने की ज़रूरत है. वहां इस चुनाव में भी यही चार–पांच मुद्दे चुनाव प्रचार में छाए हुए हैं. सवाल यह है कि हर पांच वर्ष बाद चुनाव के दौरान उठने वाले ये मुद्दे क्या कभी हल नहीं होंगे? या फिर पिछले 65 वर्षों से मतदाताओं से ही जनप्रतिनिधि चुनने में ग़लती हो रही है? यह किसी एक पार्टी की स्थिति नहीं है, बल्कि लगभग सभी दलों के यही हाल हैं. पूरे देश में महाराष्ट्र को प्रगतिशील राज्य माना जाता है. ऐसे में जनता पर ज़िम्मेदारी है कि वह महाराष्ट्र को अंधेर नगरी न बनने दें. वे ऐसे जनप्रतिनिधि चुनें, जो उनके शहरों को आधुनिक सुविधायुक्त विकसित शहर बनाने के लिए प्रयास करें. लगभग 25 लाख आबादी वाले नागपुर शहर के पास पूरे देश का सिरमौर बनने की असीम संभावनाएं हैं, लेकिन अड़चन यह है कि यहां के जनप्रतिनिधि सड़क, पानी, बिजली से ऊपर नहीं उठ पा रहे हैं. आगामी 50 वर्षों को सामने रख काम करने वाले नेताओं का अभाव है. कभी अच्छी सड़कों, सुंदरता और हरियाली के लिए देश के चुनिंदा शहरों में गिना जाने वाला नागपुर आज गड्ढों की राजधानी बन गया है. ट्रांसपोर्ट प्लाजा, कचरे से बिजली निर्माण, गंदे पानी के शुद्धिकरण का प्लांट आदि बड़े प्रोजेक्ट पिछले कई वर्षों से या तो अधूरे हैं या केवल राजनीतिक पार्टियों के घोषणा–पत्रों में नज़र आ रहे हैं. मनपा स्कूलों की स्थिति ख़राब है. स्वास्थ्य सुविधाएं मनपा नहीं दे पा रही है. कहीं लोगों को मनमाना पानी मिल रहा है, तो कहीं एक–एक बूंद के लिए लोगों को जद्दोजहद करनी पड़ रही है. कुछ स्थानों को छोड़ दें तो बाक़ी शहर गंदगी से सराबोर है. अंबाझरी, गांधीसागर और सोनेगांव तालाबों का सौंदर्यीकरण की योजनाएं फाइलों से बाहर नहीं निकल रही हैं. पर्यावरण, तुलसी और एरो उद्यान का काम शुरू नहीं हुआ है. ऐसे में शहर का विकास रुक–सा गया है. शहर में ऑटो को गैस से चलाने का आश्वासन दिया गया था, लेकिन पिछले पांच वर्षों में इस पर किसी ने चर्चा तक नहीं की है. वहीं स्टार बस घोटाला और कारटेल घोटाले के बाद 24 बाय 7 जलापूर्ति योजना में भी मनपा को चूना लगाए जाने के आरोप जनप्रतिनिधियों की सोच को उजागर करते हैं. नागपुर मनपा के वर्ष 2011–12 के वार्षिक बजट के अनुसार मनपा की वार्षिक आमदनी लगभग 654 करोड़ रुपये है. वहीं ख़र्च लगभग 652 करोड़ रुपये हैं. मनपा की कुल आमदनी में चुंगी कर से लगभग 295 करोड़ रुपये, संपत्ति कर लगभग 105 करोड़ और पानी कर से लगभग 71 करोड़ रुपये (कुल लगभग 471 करोड़) राजस्व प्राप्त होता है. इसके अलावा राज्य व केंद्र सरकार से मिलने वाली रक़म को मिलाकर मनपा का कुल बजट क़रीब 1100 करोड़ रुपये का हो जाता है. जानकारों की मानें तो यदि चुंगी और संपत्ति कर के मामले में मनपा सही नीतियां अपनाएं तो इनसे मनपा को लगभग एक हज़ार करोड़ रुपये का राजस्व प्राप्त हो सकता है. एक ओर चुंगी चोरी के कारण मनपा का करोड़ों रुपये का राजस्व डूब रहा है. वहीं दूसरी ओर चुंगी विभाग से जुड़े अधिकारी, कर्मचारी और जनप्रतिनिधि मालामाल हो रहे हैं. यदि करों को घटा कर चुंगी नाकों को अपग्रेड कर उन्हें थोड़ा और शहर सीमा से दूर ले जाया जाए तो इससे चुंगी चोरी रोकने में मदद मिलेगी. संपत्ति कर का भी यही हाल है.

कैसे बनाएंगे दुबई ?

मिहान जैसे बड़े प्रोजेक्ट ने शहर में जो असीम संभावनाएं पैदा की हैं, उस पर नागपुर महानगरपालिका खरी नहीं उतर पा रही है. नागपुर शहर को दुबई बनाने का सपना देखने वाले यहां दो लेन का पुल भी समय पर नहीं बना पा रहे हैं. क्या शहर को दुबई बनाने वालों को यह जानकारी है कि दुबई में 8–8 लेन के लंबे–लंबे कई पुल हैं और यहां जनप्रतिनिधि और प्रशासन को दो लेन के छोटे–छोटे पुल बनाने में ही पसीने छूट रहे हैं. शहर में जो बड़े पुल बने हैं, वे बड़े वाहनों का बोझ ढोने में सक्षम नहीं हैं. नागपुर शहर में पांचपावली से गोलीबार चौक तक बना पुल आज अपनी ही हालत पर आंसू बहा रहा है. पुल के बीच में बने ज्वाइंट उखड़ गए हैं. हर पांच मीटर पर पुल पर ही स्पीड ब्रेकर बन गए हैं. रिंग रोड पर उत्तर नागपुर के मार्टिन नगर के पास रेलवे फाटक पर बना पुल निर्माण के दौरान ही तीन बार धंस गया था. शासकीय पॉलिटेक्निक के पास बन रहा पुल कब बनेगा यह कोई नहीं जानता. शहर में रेलवे फाटकों और भीड़–भाड़ वाली जगहों पर कई पुल बनाने के प्रस्ताव हैं. जो पिछले कई वर्षों से फाइलों से बाहर तक नहीं आ पाए हैं. ऐसे में हम नागपुर को दुबई कैसे बनाएंगे? नेता शहर के चारों ओर चुंगी नाकों के पास ट्रांसपोर्ट प्लाजा का निर्माण करने की बात कर रहे हैं, लेकिन सच्चाई यह है कि कामठी रोड पर पीली नदी के पास बन रहा ट्रांसपोर्ट प्लाजा पिछले कई वर्षों से अधूरा पड़ा है. विस्तार में नियोजन का अभाव एक समय था, जब नागपुर की सड़कों की पूरे देश में चर्चा थी, लेकिन एक अधिकारी टी चंद्रशेखर के जाने के बाद शहर में किसी और ने टी चंद्रशेखर बनने की कोशिश भी नहीं की. हालत यह है कि आज वे सड़कें गड्ढों में बदल गई हैं. शहर की 30 प्रमुख सड़कों के सीमेंटीकरण का प्रस्ताव पास किया गया. इसके लिए 240 करोड़ रुपये भी मंज़ूर हुए, लेकिन केवल भूमिपूजन के आगे यह काम नहीं बढ़ पाया है. शहर अस्त–व्यस्त रूप से बढ़.रहा है. बेसा–बेलतरोडी का मामला तो उच्च न्यायालय के पास विचाराधीन है. बिना मंज़ूरी लिए ले–आउट्स बेच दिए गए. आज वहां हज़ारों घर बन गए हैं, जहां न सड़कें हैं और न ही लोगों को पीने के लिए पानी मिल रहा है. नागपुर सुधार प्रन्यास ने पहले 572 और बाद में 1900 ले–आउट्स के विकास का ज़िम्मा उठाया था, लेकिन डिमांड भरने के बाद भी विकास नहीं हो रहा है. अच्छे पार्क, खेल मैदानों के लिए कई क्षेत्र तरस रहे हैं. शहर में काफ़ी कम बाज़ार ऐसे हैं, जो खुले मैदान में लगाए जाते हैं. अधिकतर बाज़ार सड़कों के किनारे लगाए जाते हैं, जिससे यातायात बुरी तरह प्रभावित होता है. शहर में ख़ाली पड़ी सरकारी ज़मीनों पर छोटे–छोटे बाज़ारों को विकसित किया जा सकता है. फुट ओवर ब्रिज, अंडर ग्राउंड रास्ते मानों शहर के लिए सपना बन गए हैं.

नदी बने नाले

नागपुर शहर की पहचान नाग नदी ने आज नाले का रूप ले लिया है. यही हाल मानकापुर के पास से बहने वाली फरस नदी का भी है. इन नदियों के कारण ज़मीन के अंदर का पानी भी दूषित हो गया है. कामठी रोड पर स्थित पीली नदी क्षेत्र में स्थित कुएं और बोरवेल के पानी के नमूने दूषित पाए गए हैं. पिछले कई वर्षों से हर बड़े नाले पर फिल्टर प्लांट बनाने की मांग हो रही है. इस प्लांट से फिल्टर होने के बाद ही नालों के पानी को नदी में छोड़ने की दिशा में क़दम उठाने की बातें पिछले कई वर्षों से कांग्रेस–राकांपा और भाजपा शिवसेना कर रही हैं, लेकिन बातों के अलावा अब तक कुछ नहीं हुआ. लोग दूषित पानी पीने को मजबूर हैं. फरस से लेकर नारा–नारी, पीली नदी और कलमना तक बहने वाले नाले पर सुरक्षा दीवार निर्माण की मांग वर्षों से की जा रही है, लेकिन इस पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है. बारिश के दिनों में गंदा पानी नाले के किनारे रहने वाले लोगों के घरों में घुस जाता है. शहर के व्यस्त इलाक़ों बर्डी, धंतोली, महल, इतवारा, गांधीबाग, हंसापुरी, मोमिनपुरा, सदर आदि में वर्षों पुरानी ड्रेनेज लाइन है, जो तब की आबादी को ध्यान में रखकर डाली गई थी. आज इन क्षेत्रों की आबादी चौगुना बढ़ गई है, लेकिन ड्रेनेज लाइन वही पुरानी होने से बारिश के दौरान यह चोक हो जाती है, जिससे लोगों को काफ़ी परेशानियों का सामना करना पड़ता है. ऐसे में प्रदेश की जनता के पास यह अच्छा मौका है कि वह इन चुनावों में वादाख़िलाफ़ी करने वालों नेताओं को सबक सिखाएं.

feedback@chauthiduniya.com

अकोला कंगाल, अमरावती फटेहाल

विदर्भ की दो अन्य मनपाओं में अकोला मनपा कंगाल हो चुकी है. वहीं अमरावती की स्थिति भी कोई ख़ास अच्छी नहीं है. वर्ष 2001 में अस्तित्व में आई अकोला मनपा पर लगभग 375 करोड़ रुपये का क़र्ज़ है. क़र्ज़ की अदायगी ठीक से नहीं होने के कारण मुख्यमंत्री पृथ्वीराज चव्हाण ने 21 अक्टूबर, 2011 को उसे बर्ख़ास्त कर दिया था. वर्तमान में यहां प्रशासक नियुक्त है. अकोला मनपा का राजस्व लगभग 70 करोड़ रुपये है. इसमें चुंगी कर का हिस्सा 40 करोड़ रुपये हैं. भूमिगत गटर योजना के लिए राज्य सरकार ने अकोला मनपा को 54 करोड़ रुपये दिए थे, लेकिन निविदा प्रक्रिया में ख़ामियां होने से मुख्यमंत्री ने ही इस पर स्टे लगा दिया. पार्क, विकसित खेल के मैदान, सुविधाओं से युक्त बाज़ार आदि की केवल चर्चाएं होती हैं, लेकिन हक़ीक़त में कुछ नहीं होता. ऐसे में ज़रूरत अकोला मनपा का राजस्व बढ़ाकर आगामी 25 वर्षों का मास्टर प्लान बनाकर काम करने की है. अमरावती मनपा की भी स्थिति भी कुछ ऐसी ही है. नगर विकास के नाम पर यहां कुछ भी नहीं हो रहा. शहरों का विस्तार तेज़ी से हो रहा है. नई–नई कॉलोनियां बन रही हैं, लेकिन वहां बिजली, पानी, सड़क, गटर लाइन की सुविधाएं मनपा अब तक नहीं दे पाई हैं. राजस्व कम होने के कारण पार्षदों का वार्ड विकास फंड भी काफ़ी कम है. यहां नेताओं की आपसी लड़ाई में शहर का विकास रुका हुआ है. राष्ट्रपति का ज़िला होने के बाद भी यहां विकास को गति नहीं मिल पा रही है. ऐसे में ज़रूरी है कि यहां के मतदाता उन जनप्रतिनिधियों को चुनें, जो उन्हें इस पिछड़ेपन से बाहर निकालने का दम रखते हों.

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

दिल्ली, 13 फरवरी–19 फरवरी 2012

www.chauthiduniya.com

संजीवनी का है ऐलान, झारखण्ड-बिहार में हो सबका मकान

SANJEEVANI BUILDCON

3rd & 4th floor, GEL Church Complex, Main Road, Ranchi, Customer Care No. - 0651-2331429

Our on going projects-

Sanjeevani Dynasty-I
PLOT-13 LAC, DUPLEX-25 LAC
Near Ranchi College

Sanjeevani Dynasty-II
PLOT-10 LAC, DUPLEX-22 LAC
Booty More

Future City (BIT)
PLOT-4 LAC,
BUNGLOW-10 LAC

Future City (Namkom)
PLOT-4 LAC,
BUNGLOW-10 LAC

Future City (Pithoria)
PLOT-4 LAC,
BUNGLOW-10 LAC

Sanjeevani Mega Township
PLOT-3.5 LAC, BUNGLOW-09 LAC
Hazaribagh

मनोज नाथ दाग़ी तो फिर बचेगा कौन!

आशीष रंजन

ईमानदार व जांबाज़ पुलिस अधिकारी मनोज नाथ को ईमानदारी की कई बार क़ीमत चुकानी पड़ी. 39 साल की अपनी पुलिस सेवा में मनोज नाथ को सरकारी नौकरी की कई तल्ख़ सच्चाइयों से रूबरू होना पड़ा. इस तेज़ तर्रार अफ़सर को ज़्यादातर समय सीआईडी, निगरानी व होमगार्ड में ही रखा गया. दो साल तो उनके एसीआर को औसत से भी कम आंका गया. भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ जंग में सरकार ने उनका साथ नहीं दिया, उलटे इन पर ही कई गंभीर आरोप लगा दिए गए और जांच शुरू कर दी गई. अदालत से राहत पा जाने के बावजूद अपनी सेवा के अंतिम पड़ाव में मनोज नाथ के लिए सबसे पीड़ा की बात यह है कि उनकी वर्दी पर दाग़ी का दाग़ लगा हुआ है.

सरोज सिंह

इस साल जून में डीजी होमगार्ड मनोज नाथ रिटायर हो जाएंगे. चूंकि जवानी चढ़ते ही पुलिस अफ़सर बन गए थे, इसलिए बोकारो और छपरा में बतौर एसपी उन्होंने ख़ाकी की ईमानदार ताक़त का अहसास अपराधियों और भ्रष्टाचारियों को कराया. 1988 में सहकारिता माफ़िया के ख़िलाफ़ अभियान चलाया और ख़ूब वाहवाही भी लूटी. बाहुबली शहाबुद्दीन के गार्ड को वापस लेकर मनोज नाथ ने नियम के अनुसार काम करने के अपने ढंग से सत्ता शीर्ष पर बैठे तमाम लोगों को परिचित करा दिया. बिजली चोरों के सिंडिकेट को बेनक़ाब कर मनोज नाथ ने यह दिखाया कि काम करने वाले अधिकारी के लिए कोई भी ज़िम्मेदारी छोटी नहीं होती है. लेकिन सभी जानते हैं कि ऐसे अफ़सरों को भले जनता माथे पर बैठाती है, पर विभाग व सरकार में बैठे चंद लोगों की आंखों में वे हमेशा खटकते रहते हैं. ऐसे लोगों को जब मौक़ा मिलता है, वह पूरी ताक़त से ऐसे अफ़सरों को बदनाम करते हैं, प्रताड़ित करते हैं और शंटिंग में डाल देते हैं. ईमानदार व जांबाज़ पुलिस अधिकारी मनोज नाथ के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ. 39 साल की अपनी पुलिस सेवा में मनोज नाथ को सरकारी नौकरी की कई तल्ख सच्चाइयों से रूबरू होना पड़ा. इस तेज़ तर्रार अफ़सर को ज़्यादातर समय सीआईडी, निगरानी व होमगार्ड में ही रखा गया. दो साल तो उनके एसीआर को औसत से भी कम आंका गया. भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ जंग में सरकार ने उनका साथ नहीं दिया, उलटे उन पर ही कई गंभीर आरोप लगा दिए गए और जांच शुरू कर दी गई. अदालत से राहत पा जाने के बावजूद अपनी सेवा के अंतिम पड़ाव में मनोज नाथ के लिए सबसे पीड़ा की बात यह है कि उनकी वर्दी पर दाग़ी का दाग़ लगा हुआ है. मनोज नाथ की कोई सफ़ाई यह सरकार व उनका महकमा सुनने को तैयार ही नहीं है. शायद उन्हें ईमानदारी से काम करने की सज़ा मिली और व्यवस्था के मकड़जाल में फंसकर वह बेबस हो गए. लेकिन हम उम्मीद करते हैं कि रिटायर होने के बाद यह प्रदेश व देश एक नए मनोज नाथ को देखेगा, जो न तो बेबस होगा और न ही लाचार.

2005 बिहार में चुनाव का साल था. चुनाव आयोग बिहार में चुनावी धांधली के पिछले रिकॉर्ड को लेकर बेहद चिंतित था. यही वजह थी शांतिपूर्ण चुनाव कराने का ज़िम्मा आयोग ने ईमानदार व निष्पक्ष अधिकारी के तौर पर ख्याति पा चुके मनोज नाथ को सौंपा. बिहार पुलिस मुख्यालय पटना के ज्ञापांक 849/चुनाव दिनांक 29 सितंबर, 2005 द्वारा मनोज नाथ को बिहार विधानसभा चुनाव के प्रथम चरण का चुनाव शांतिपूर्ण तरीक़े से कराने के लिए प्रतिनियुक्त किया गया था. बताया जाता है कि तत्कालीन पुलिस महानिदेशक आशीष रंजन सिन्हा, मनोज नाथ की इस नई ज़िम्मेदारी को पचा नहीं पा रहे थे. चुनावी कार्यों में मनोज नाथ को सहयोग करते हुए वह मौक़े का इंतज़ार करने लगे. जल्द मौक़ा मिल भी गया. प्रथम चरण का मतदान पूरा होने से पहले ही 18 अक्टूबर, 2005 को जमुई के खैरा थाने क्षेत्र में राजद प्रत्याशी विजय प्रकाश आग्नेयास्त्र, गोलियां, नक़द राशि और शराब के साथ गिरफ्तार किया गया. लेकिन देर रात थाना स्तर से ही निजी मुचलके पर उसे रिहा कर दिया गया. अगले दिन चुनाव आयोग ने यह निर्देश दिया कि इस प्रकरण की विस्तृत स्थलीय जांच मनोज नाथ से कराई जाए. जांच प्रतिवेदन 20 अक्टूबर शाम पांच बजे तक सौंपने को कहा गया था. आशीष रंजन सिन्हा ने आयोग के निर्देश की जानकारी फोन पर मनोज नाथ को दे दी. इस पर मनोज नाथ ने आशीष रंजन सिन्हा को बतलाया कि उपरोक्त घटना के संबंध में खैरा थाने में एक मामला दर्ज हुआ है. कांड दर्ज हो जाने के बाद अनुसंधान की प्रकिया दंड प्रकिया संहिता 156 सीआरपीसी में निर्धारित है. एक बार कांड दर्ज हो जाने के बाद इन्हीं तथ्यों और कारक परिस्थितियों को लेकर अन्य कोई समांतर जांच पुलिस एजेंसी द्वारा नहीं की जा सकती. इसलिए मेरे द्वारा की गई जांच विधि सम्मत नहीं होगी. इसके बाद तो मनोज नाथ को विलेन बनाने की क़वायद शुरू हो गई. कहा गया कि मनोज नाथ ने न केवल चुनाव आयोग व महानिदेशक के आदेश के अनुपालन में आनाकानी की बल्कि वैधिक प्रावधानों का अप्रासंगिक उल्लेख कर जांच के निर्देश को ही अवैध ठहराने की कोशिश की तथा पुलिस महानिदेशक बिहार के आदेश का पालन न कर मनोज नाथ ने पुलिस अधिनियम की धारा 22 व 23 का भी उल्लंघन किया है. आशीष रंजन सिन्हा ने तत्कालीन गृह सचिव जी एस कंग को पत्र लिखकर आदेशोल्लंघन व अमर्यादित अनुशासनहीन आचरण पर मनोज नाथ के ख़िलाफ़ तत्काल एवं प्रभावकारी कार्रवाई की अनशंसा की. इसके बाद तो समाचार पत्रों में मनोज नाथ के ख़िलाफ़ कार्रवाई की ख़बरें छपने लगीं और यह माहौल बनाया जाने लगा कि मनोज नाथ ने बहुत बड़ा गुनाह कर दिया है. इसी बीच मनोज नाथ ने महामहिम राज्यपाल को पत्र लिखकर अपना पक्ष रखा. मनोज नाथ ने पत्र में बताया कि जमुई प्रकरण की जांच न करने का जो आरोप मुझ पर लगाया जा रहा है, वह सत्य नहीं है. हक़ीक़त यह है कि चुनाव आयोग ने मेरे पत्र के आलोक में मुंगेर के प्रमंडलीय आयुक्त को जांच सौंप दी थी. बाद में मुख्य चुनाव आयुक्त श्री टंडन ने भी प्रेस को इस संबंध में पूरी जानकारी दे दी. इससे साफ़ हो गया कि जांच को लेकर मैंने किसी के आदेश का उल्लंघन नहीं किया. दरअसल, मेरे ख़िलाफ़ एक चरित्र हनन का अभियान चलाया गया. पत्र में कहा गया कि चुनाव आयोग ने मुझे चुनाव कार्य के लिए नामित किया था और उनका सुविचिरत मंतव्य उपलब्ध है, इसलिए इस विषय पर किसी और व्यक्ति द्वारा दिया जाने वाला बयान अनधिकृत और प्रेरित प्रतीत होता है. यदि जांच के संबंध में मेरा मत ग़लत था तो इसका सबसे माकूल जवाब यह था कि वह दो उपलब्ध एडीजी में से किसी एक से जांच करा सकते थे. आशीष रंजन सिन्हा ने व्यक्तिगत विद्वेष से प्रेरित होकर समाचार माध्यमों से मेरा चरित्र हनन किया है और लगातार करते जा रहे हैं. अदालत ने भी इस मामले में मनोज नाथ को राहत दे दी. लेकिन लगता है यह सारा कुछ इस वजह से हुआ कि उनके डीजीपी बनने का दावा कमज़ोर किया जा सके. ग़ौरतलब है कि वरीयता सूची में मनोज नाथ सबसे आगे चल रहे थे. सरकार व विभाग की मंशा मनोज नाथ के ख़िलाफ़ विभागीय कार्यवाही लंबित दिखाकर उन्हें लगातार दाग़ियों की सूची में रखना लगता है. अब बात बिजली माफ़ियाओं के ख़िलाफ़ छेड़ी गई उनकी जंग की करते हैं. सालों से चले आ रहे करोड़ों की बिजली चोरी का मामला जब बिहार राज्य बिजली बोर्ड की निगरानी सेल ने उजागर किया तो घोटालेबाज़ों को बचाने के लिए सरकार ने अपनी घोषित नीति ही बदल डाली. मनोज नाथ कहां मानने वाले थे. उन्होंने शक के घेरे में आ चुके बोर्ड के तत्कालीन अध्यक्ष स्वप्न मुखर्जी पर विजिलेंस थाने में मुक़दमा दर्ज कराया. इसके बाद मनोज नाथ को एक बार फिर अपनी ईमानदारी की क़ीमत चुकानी पड़ी और उनका तबादला कर दिया गया और स्वप्न मुखर्जी को सरकार ने सेवा विस्तार दे दिया. मामला पटना हाईकोर्ट पहुंचा, जहां निगरानी पीएस में दर्ज दोनों कांड ख़ारिज़ हो गए. सुशासन का दंभ भरने वाली सरकार से उम्मीद थी कि हाईकोर्ट के फ़ैसले को सरकार एसएलपी के माध्यम से सुप्रीम कोर्ट में चुनौती देगी, पर कुछ नहीं हुआ. समय बीत गया और मामला वहीं का वहीं पड़ा रहा.

ऐसे बहुत सारे मामले हैं, जहां मनोज नाथ जैसे अफ़सर को ज़लालत झेलनी पड़ी. मनोज नाथ भी बिजली चोरी के खेल में शामिल होकर करोड़ों कमा सकते थे, पर उनका ज़मीर उन्हें इस गंदे खेल में शामिल होने की इजाज़त नहीं दे रहा था. सुप्रीम कोर्ट में अपील न कर सरकार ने यही संदेश दिया कि जो हो रहा है, उसे चलने दो. इस प्रकरण ने यह भी साफ़ किया कि भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ जंग का जो ढिंढोरा पीटा जा रहा है, उसकी ज़मीनी सच्चाई क्या है. चुनाव आयोग की सफ़ाई और कोर्ट की टिप्पणी के बाद भी मनोज नाथ को विभागीय जांच के नाम पर प्रताड़ित करना और उन्हें दागियों की सूची से बाहर न करना, यह दिखाता है कि अभी भी बिहार में ईमानदार पुलिस अधिकारियों को अग्निपथ से ही गुज़रना है. मनोज नाथ में ईमानदारी की ताक़त थी और काम करके दिखाने का जज्बा, इस वजह से वह तो इस अग्निपथ से पार हो गए, बाक़ी यह रास्ता कैसे तय करेंगे, कर पाएंगे भी या नहीं, यह आने वाला समय ही तय करेगा. हम तो नीतीश जी से यही अपेक्षा करेंगे कि पुलिस महकमे के जांबाज़ और ईमानदार शेरों को शिकार करने दीजिए. इसे बेवजह विभागीय जांच, तबादला, स्पष्टीकरण और प्रताड़ना के खूंटे में मत बांधिए. नहीं तो भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ जंग में आपको मात खाने से कोई नहीं बचा सकता.

feedback@chauthiduniya.com

उक्त अस्पताल के आयुष चिकित्सक मनीष कुमार का कहना है कि होम्योपैथिक के डॉक्टर हैं, लेकिन दवा के अभाव के कारण रोगियों का समुचित इलाज नहीं कर पाते हैं.

धीरे-धीरे वेतनमान वाले शिक्षकों के सभी पद स्वत: समाप्त हो जाएंगे और सरकार सिर्फ़ कॉन्ट्रेक्ट पर ही शिक्षकों की बहाली विभिन्न नियोजन इकाईयों से करायगी या खुद करेगी.

स्वच्छ पानी का पैसा गया पानी में

नीरज कुमार सिंह

महिलाएं खान-पान पर ध्यान दें : डॉ. करुणा

डॉ. करुणा शंकर

मनोज ठाकुर
feedback@chauthiduniya.com

छात्र संघ चुनाव

कब खुलेगा राजनीति की पहली पाठशाला का ताला

नीतीश कुमार ने विश्वविद्यालय छात्र संघ के चुनाव का शोशा छोड़ सियासी हलक़े में हलचल मचा दी. 28 वर्ष बाद इस चुनाव की सुगबुगाहट शुरू होने से छात्र संगठनों में सरगर्मी तेज़ हो गई है. लेकिन इस बीच राज्य के मानव संसाधन मंत्री पीके शाही ने इस चुनाव में राज्य सरकार की कोई भूमिका न होने की बात कह छात्र नेताओं के उत्साह पर पानी फेर दिया. उनकी राय में यह राजभवन और विश्वविद्यालय प्रशासन का उत्तरदायित्व है. एनएसयूआई के पूर्व अध्यक्ष एवं केरल के विधायक हाइबी ईदीन इससे सहमत नहीं हैं. वह कहते हैं कि कांग्रेस की जहां-जहां सरकार बनी है, वहां छात्र संघ का चुनाव करवाया गया है. नीतीश सरकार छात्रों को गुमराह करने के लिए ऐसी बयानबाज़ी कर रही है, जबकि छात्र राकांपा के पूर्व अध्यक्ष केजे जोसमन कहते हैं कि लोकशाही में जनता से चुने हुए प्रतिनिधि ही सरकार चलाते हैं. बिहार सरकार के पक्ष से ऐसा लगता है कि वह जनता से मिली ताक़त का इस्तेमाल करना ही नहीं चाहती है. वहीं छात्र लोजपा के अध्यक्ष रोहित कुमार सिंह तो हमलावर अंदाज़ में आरोप लगाते हैं कि नीतीश कुमार ने छात्रों को लॉलीपॉप थमा ठगने का काम किया. इन लोगों ने जिस सीढ़ी से राजनीतिक सफलता की ऊंचाई तय की, उसे डायनामाइट से उड़ा दिया. छात्र सियासत की कोख से राजनीतिक जन्म लेने वाले नीतीश कुमार ने इस कोख को ही बांझ बना दिया है. उधर, छात्र संघ के चुनाव की चर्चा के बीच लिंगदोह कमेटी की सिफ़ारिशों का भूत भी उभर आया है. ऑल इंडिया यूथ फेडरेशन के वी संदोस कुमार भी इसकी सिफ़ारिशों से इत्तेफ़ाक़ नहीं रखते, लेकिन कहते हैं कि नहीं चुनाव कराने से अच्छा इसके आधार पर चुनाव कराना है. रोहित सिंह कहते हैं कि लोकतंत्र की पहली पाठशाला पर लगे ताले को तोड़ने के लिए छात्र लोजपा ज़बरदस्त जनांदोलन का शंखनाद करेगी. आज छात्र राजनीति में परजीवी नेतृत्व ही हावी है. राजनीतिक दलों के दिग्गज नेताओं की सियासी कूटनीति के कुचक्र के एक किरदार मात्र हैं बिहार के छात्र-युवा नेता. ये चापलूसी के बूते ही राजनीतिक ऊंचाइयां तय करने में यक़ीन रखने लगे हैं. संघर्ष की सियासत और छात्र-युवाओं के मसलों पर आवाज़ बुलंद करने वाले युवा नेताओं के स्वर को ही दबा दिया जाता है. यही कारण है कि 1984 के बाद छात्र संघ का चुनाव बंद कर दिया गया. तब शंभु शर्मा पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष और रणधीर कुमार महासचिव बने थे. हालांकि तब छात्र संघ के अधिकार में कटौती को लेकर कई छात्र संगठनों ने इसका बहिष्कार भी किया था. इसके बाद छात्र संघ का चुनाव न होने के कारण नया नेतृत्व विकसित ही नहीं हुआ. इस चुनाव के पैरोकारों का मानना है कि विश्वविद्यालयों में छात्र संघ के चुनाव पर विराम इसी मक़सद से लगाया गया, जिससे नया नेतृत्व वर्ग विकसित न हो पाए और उनकी मठाधीशी पर सवाल खड़ा न हो सके. इसी मक़सद से छात्र राजनीति को परजीवी बनाकर रखा गया है. वैसे ही युवा-छात्र आज सियासत में स्थापित नज़र आते हैं, जो चाटुकारिता में प्रवीण हैं. छात्रों-युवाओं की समस्याओं और इनके सरोकारों से इनका कोई ख़ास वास्ता नहीं है. तक़रीबन तमाम राजनीतिक दलों में यही स्थिति है.

भाकपा माले के युवा संगठन इंक़लाबी नौजवान सभा के महासचिव कमलेश शर्मा की मानें तो 1974 के आंदोलन की उपज और बिहार में पिछले इक्कीस वर्षों से गद्दीनशीं लालू प्रसाद, नीतीश कुमार और सुशील कुमार मोदी ने साज़िश के तहत युवा राजनीति को भ्रमित और दिशाहीन रखा है. कांग्रेस विरोध के बूते उभर पाए लालू प्रसाद कांग्रेस की गोद में समा गए, वहीं नीतीश कुमार ने सांप्रदायिक ताक़तों के समक्ष आत्म सर्मपण कर रखा है. इन दोनों को पता है कि युवाओं का नया और बेहतर नेतृत्व विकसित होगा तो उनकी खटिया खड़ी हो जाएगी. इसलिए इन दोनों ने छात्र संघ चुनाव नहीं करवाया. इन लोगों ने लोकतंत्र का गला घोंट रखा है. जिस राज्य के विश्वविद्यालयों में शिक्षकों के तेरह हज़ार पदों में छह हज़ार ख़ाली हों, वहां कैसा युवा नेतृत्व तैयार होगा. बाहुबली पूर्व सांसद शहाबुद्दीन, सूरजभान, सुनील पांडे, कुख्यात अनंत सिंह और सुरेंद्र प्रसाद यादव जैसे मानकों के दौर में किस युवा राजनीति की अपेक्षा कर सकते हैं. युवा राजनीति की प्रथम पाठशाला महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में लोकतांत्रिक परंपराओं पर कुठाराघात के बाद इसकी धारा ही अवरुद्ध हो गई. वह गुमराह हो गई. इसके बाद आपराधिक पृष्ठभूमि के सियासी चेहरों ने छात्र-युवा सियासत को हाईजैक कर लिया. बाहुबली पूर्व सांसद आनंद मोहन और पप्पू यादव जैसे लोग उनके नायक बनकर उभरे. आनंद मोहन की बिहार पीपुल्स पार्टी और पप्पू यादव की युवा शक्ति के पीछे बिहार के युवा-छात्रों की ही ताक़त थी. 1995 के बिहार विधानसभा चुनाव में आनंद मोहन की जनसभाओं में युवाओं की ही भीड़ उमड़ती थी. क़ाबिले- ज़िक्र है कि 2002 के बहुचर्चित आशियाना गोली कांड के बाद पप्पू यादव ने अकेले दम पर बिहार बंद करवाया था. इसमें युवाओं के जोशो-ख़रोश का जमकर दुरुपयोग किया गया था. इसी बूते ये दोनों पत्नी समेत देश की सबसे बड़ी पंचायत संसद की दहलीज़ पार कर इसके माननीय सदस्य बन बैठे थे. गोपालगंज के काली पांडेय हों या जन्दाहा का वीरेंद्र सिंह महोबिया, नालंदा के राम नरेश सिंह, सीवान के शहाबुद्दीन, मोकामा के सूरजभान, मुज़फ़्फ़रपुर के शुक्ला परिवार आदि के पीछे इस दौर के भटके युवाओं की ही ताक़त थी. ऐसा नहीं है कि विश्वविधालय के छात्र संघ के चुनाव में अपराध जगत की घुसपैठ नहीं थी. 1980 में पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ के निर्वाचित महासचिव प्रेमचंद्र सिन्हा की भी हत्या इसी का नतीजा था. इन्हीं के साथ कांग्रेस के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष अनिल शर्मा पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष चुने गए थे. बिहार विश्वविद्यालय, मुज़फ़्फ़रपुर में भी कई ख़ौफ़नाक आपराधिक घटनाएं घटी थीं. छात्र जदयू के अध्यक्ष प्रत्युश नंदन बंटी आशंका जताते हैं कि उत्तर प्रदेश में विश्वविद्यालय छात्र संघ के चुनाव में जमकर हिंसा हुई थी. छात्रों का ख़ूब ख़ून बहा था. वैसा ही बिहार में होने की संभावना हो तो इससे बेहतर है कि चुनाव न ही कराया जाए. छात्र राकांपा के पूर्व अध्यक्ष केजे जोसमन कहते हैं कि सर्वाधिक हिंसा तो धर्म के नाम पर होती है, तो मंदिर, मस्जिद और गिरिजाघर में ताला तो नहीं लगाया जा सकता है. शासन का काम है हिंसा पर लगाम लगाना. यह छात्र राजनीति और नए नेतृत्व को समाप्त करने की साज़िश है. वहीं बैकवर्ड स्टूडेंट फोरम के अध्यक्ष और लोजपा के छात्र नेता उपेंद्र यादव कहते हैं कि नीतीश कुमार सामंती ताक़तों से घिरे हुए हैं. पिछले दो दशक में विश्वविद्यालयों में दलित पिछड़ा छात्र की संख्या बढ़ी है. लिहाज़ा चुनाव होने की स्थिति में इस वर्ग के छात्र अधिक संख्या में चुनाव जीत कर आएंगे, जिससे सामाजिक न्याय की धारा मज़बूत होगी. इस अंदेशे से इन लोंगो की छाती पर सांप लोटने लगता है, जबकि ऑल इंडिया यूथ फेडरेशन के महासचिव वी संदोस कुमार कहते की मानें तो विश्वविद्यालय कैम्पस में चुनाव न होने से असामाजिक तत्व हावी हो जाते हैं. संस्थान में रैगिंग बढ़ जाती है. वहीं चुनाव होने से एक लोकतांत्रिक मानस और माहौल विकसित होता है. हालांकि जब छात्र संघ चुनाव होते थे, तब राजनीतिक लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपराध और अपराधी का इस्तेमाल एक कारक के रूप में होता था. लेकिन छात्र संघ चुनाव पर विराम लगने के बाद उभरा तथाकथित युवा नेतृत्व आपराधिक साम्राज्य के विस्तार के लिए सियासत को सिर्फ़ हथकंडा मानने लगा.

इसके बाद युवा सियासतदां के तौर पर पहचान पाने वाले आपराधिक पृष्ठभूमि के राजनीतिक चेहरों की लंबी फ़ेहरिस्त बन गई. यह युवा हृदय सम्राट के विशेषणों से नवाज़े जाने लगे. ग़ौरतलब है कि राजनीति के अपराधीकरण पर सवाल खड़े होने के बाद येन केन प्रकारेण धन कमाने वाले राजनीतिक पटल पर वास्तविक युवा नेताओं को विस्थापित करने लगे हैं. धनपशुओं की यह जमात प्राय: तमाम राजनीतिक दलों में जड़ जमाने में सफल हो गई. राजधानी के चौक-चौराहों पर टंगे इनके बड़े-बड़े बैनर होर्डिंग के तले युवा राजनीति की आवाज़ गुम हो गई.

सरोज सिंह
feedback@chauthiduniya.com

बीमार पड़ गए तो ख़ैर नहीं

बिहार सरकार की साज़िश

शिक्षकों के पद समाप्त किए जा रहे हैं

अब सिर्फ़ पांच से आठ हज़ार रुपये में बंधुआगिरि करेंगे शिक्षक

एक नज़र

मिल्लिया इंस्टीट्यूट में कैम्पस सैलेक्शन

जमुई में हुई मरीज़ों की जांच

वृद्धा पेंशन खा गया डाकपाल

बीपीएल सूची से वंचित है चकला पंचायत

प्रखंड कार्यालय से कर्मी नदारद

ग्राम सभा नहीं करवाने का आरोप

स्थापना दिवस आयोजित

सारण एक नज़र

गोपालगंज में जननी में हो रही वसूली

माकपा ने प्रतिरोध मार्च निकाला

गोरयाकोठी में उमाशंकर माल्यार्पण किया

कर्पूरी ठाकुर की जयंती संपन्न

फ़ुटबॉल मैच में मोतिहारी विजयी

छात्र देश के भविष्य हैं : विनय

नट जाति का उत्थान ज़रूरी

PATALIPUTRA SCHOOL OF FIRE & SAFETY MANAGEMENT

Enjoy with Nature MOULDED FURNITURE

ASRFEN-P Carbo-KT AREX ECTALOPAM SILIPLEX MENSOSET MUSTAL

उनके द्वारा अविष्कार किया गया ट्रैक्टर आज भी सड़कों पर घूमता है. प्रदूषण से देश को बचाने के लिए उन्होंने एक दर्जन से अधिक यंत्रों का अविष्कार किया.

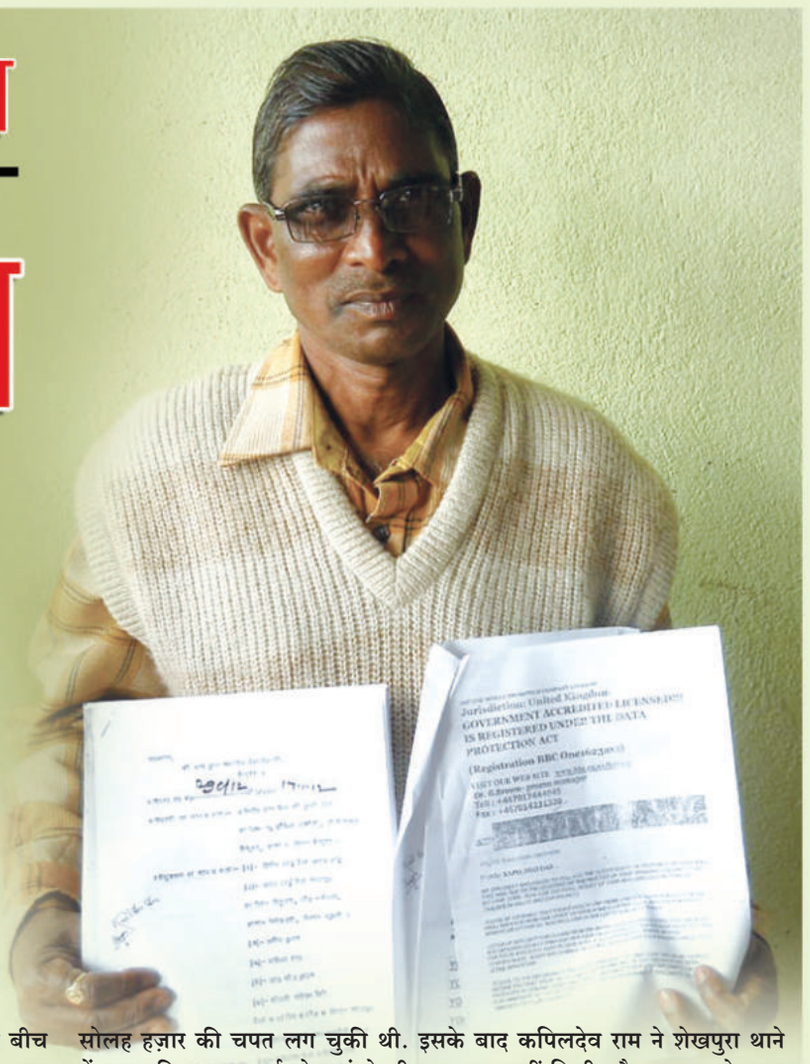

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. DELHIN/2009/30467

शेखपरा में साइबर क्राइम

इंटरनेट पर ठगी का बाज़ार

अरुण साथी

यह साइबर क्राइम और महाठगी का बड़ा मामला है, जिसमें दुनिया को अपने न्यूज से बाख़बर करने बाली बीबीसी न्यूज की वेबसाइट की हूबहू नक़ल की गई है. और इस पर बीबीसी न्यूज का लिंक डाल कर, इसे बीबीसी की वेबसाइट बताया गया है. यह लिंक http://www.bbc.co.uk/programmes/franchises/p00ly0lv है.

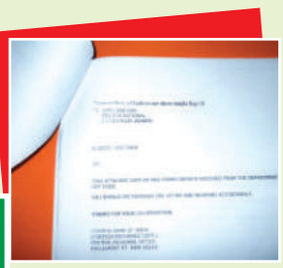

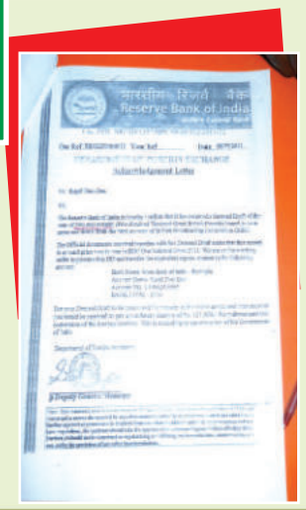

यह साइबर क्राइम का एक बड़ा मामला है, जिसमें ईमेल और एसएमएस के सहारे ठगी को अंजाम दिया गया. इस साइबर क्राइम में पहले बीबीसी डॉट को डॉट यूके स्लैश लॉटरी नामक वेबसाइट के नाम से ईमेल भेजा जाता है और फिर एक बड़ा जाल बुनकर ब्रिटेन के लंदन से लेकर दिल्ली तक के मोबाइल और फोन नंबर के सहारे लाखों की ठगी होती है. इस नेटवर्क में वेबसाइट पर पूरी जानकारी रहती है, जिससे लोग इसके झांसे में आ जाते हैं. इसी महाठगी के शिकार हुए हैं बरबीघा के रजौरा मध्य विद्यालय के प्रधानाध्यापक कपिलदेव दास. कपिलदेव दास शेखपुरा के गिरहिंडा स्थित प्रोफेसर कॉलोनी में रहते हैं. इनको सबसे पहले मोबाइल संख्या 9540679515 से उनके मोबाइल संख्या 9955294671 पर पांच करोड़ रुपये की लॉटरी जीतने का एसएमएस आता है, जिसमें बीबीसी डॉट को डॉट यूके स्लैश लॉटरी नामक वेबसाइट का पता दिया जाता है और फिर शुरू हो जाता है ठगी का यह सिलसिला. कपिलदेव दास को अपने बेटों को पाइलट की ट्रेनिंग के लिए पच्चीस लाख की ज़रूरत थी, सो वह इस झांसे में फंस गए. सबसे पहले उनसे कूरियर लेकर भारत पहुंचने की बात कहते हुए एयरपोर्ट क्लियरेंस के नाम पर 24710 रुपये की मांग की जाती है. इसके बाद जब यह पैसा खाता संख्या 1530001500006674, पंजाब नेशनल बैंक, मनीष कुमार, दिल्ली में डाल दिया जाता है. इसके बाद फिर से पांच करोड़ को इंडियन करेंसी में बदलने के नाम पर पैसे की मांग की जाती है और इसके लिए रिजर्व बैंक का लोगो लगे लेटर पैड पर ईमेल द्वारा पत्र भेजा जाता है और फिर झांसे में आकर दिलीप साहू के खाते में 127000 रपये भेज दिए जाते हैं. दिलीप साहू का खाता 11680992236 है तथा पिता का नाम कलाई साहू, पता- ग्राम सिनुआरा, पो-अररहट, थाना बेनीपट्टी, ज़िला-मधुबनी है. इस पते पर रुपया भेजने के बाद कपिलदेव दास आश्वस्त हो गए कि उनको पांच करोड़ मिलेगा. पैसा भेजने से पहले दिलीप साहू का पेन नंबर भी लिया गया. इस बीच कपिलदेव दास लगातार बात करते रहे. पहले वेबसाइट पर दिए गए नंबर पर बात की, जहां अग्रेजी में बात होती थी. इसका नंबर प्लस-447017444045 है तथा यह लंदन का नंबर बताया जाता है. इसके बाद मोबाइल संख्या 09540679515 पर मैरी नामक महिला से बात होती रही और फिर जब पांच करोड़ नहीं पहुंचा तो फिर शिकायत करने पर 365000 की मांग की गई, जिसके बाद खाते में पैसा भेजने का झांसा दिया गया. इन सारी बातों के बाद कपिलदेव राम ने पैसा लेकर दिल्ली आने की बात कही और मिलकर पैसा देने की बात कही. उन्हें रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के आगे बुलाया गया और वहां पहुंचने पर मो. संख्या 09811864519 मोबाइल से महिमा राय नामक महिला ने ख़ुद को आरबीआई का अधिकार बताया और कहा कि ऑफिस में वह किसी से नहीं मिल सकते और पैसा जमा करा दो, यदि रुपया चाहिए. तब जाकर कपिलदेव राम को अपने ठगे जाने का एहसास हुआ और उसने मोबाइल पर केस करने की धमकी दी. फिर अचानक उनका मोबाइल काम करना बंद हो गया. न तो इससे आइटगोइंग हो रही थी और न ही इनकमिंग. इस बीच जब वह आरबीआई दिल्ली के कार्यालय गए तो उन्हें ठग लिए जाने की बात बताई गई. इस बीच एक घंटे के बाद जब वह दिल्ली के रेलवे स्टेशन पहुंचे तो उनका मोबाइल शुरू हो गया. तब तक उनके बेटे रविराज से ठग ने अपने दिलीप साहू के खाते पर 365000 ट्रांसफर करवा लिए. और फिर सारे मोबाइल बंद हो चुके थे. इस पूरे खेल में पांच लाख सोलह हज़ार की चपत लग चुकी थी. इसके बाद कपिलदेव राम ने शेखपुरा थाने में मदद की गुहार लगाई तो वहां से भी कुछ मदद नहीं मिली और हार कर शेखपुरा कोर्ट में केस संख्या 09 सी /12 में केस दर्ज किया गया. साइबर क्राइम का यह एक बड़ा मामला है, जिसमें एक प्रधानाध्यापक को ठग लिया गया और अब इसमें सभी हाथ खड़े कर रहे हैं. इस पर जांच होनी चाहिए, ताकि कोई और इस ठगी का शिकार न हो सके.

feedback@chauthiduniya.com

- आरबीआई और बीबीसी के नाम पर पांच लाख सोलह हज़ार की ठगी.
- बीबीसी का लोगो लगी वेबसाइट के माध्यम से हो रही है ठगी.
- वेबसाइट पर बीबीसी न्यूज का भी लिंक.
- मध्य विद्यालय रजौरा के प्रधानाध्यापक से ठगी.
- पांच करोड़ के लॉटरी के नाम पर ईमेल और एसएमएस भेज कर ठगी.

राष्ट्रपति सम्मान से सम्मानित अविष्कारक

दो वक़्त की रोटी के लिए मोहताज है

इंतेज़ारूल हक़

राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित आविष्कारक मो. सैदुल्लाह आज दो जून की रोटी के लिए तरस रहे हैं. पानी व सड़क पर दोनों समान रूप से चलने वाली साइकिल, रिक्शा, पंपिंग सेट का ट्रैक्टर, हाथ से चलने वाला पंपिंग सेट तथा बग़ैर ईंधन के चलने वाली अनेक मशीनों का अविष्कार करने वाला आविष्कारक आज मुफ़लिसी की ज़िदगी गुज़ार रहा है. पुश्तैनी में मिली चालीस एकड़ ज़मीन उन्होंने अविष्कार करने के क्रम में बेच दी और अनेक हैरतअंगेज़ चीज़ों का अविष्कार किया. उनके अविष्कार पिछले दो दशक से लगातार राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय अख़बारों और टीवी चैनल्स की सुर्ख़ियों में रहे, किंतु आज तक किसी भी राजनेता व प्रशासन ने उनकी ख़बर नहीं ली. उनके द्वारा अविष्कार किया गया ट्रैक्टर आज भी सड़कों पर घूमता है. प्रदूषण से देश को बचाने के लिए उन्होंने एक दर्जन से अधिक यंत्रों का अविष्कार किया, जिसमें हाथ से चलने वाला पंपिग सेट भी शामिल है. पंपिंग सेट को किसी भी बोरिंग में लगाकर आसानी से सिंचाई की जा सकती है और पानी भी अधिक निकलता है. सड़क व पानी में समान रूप से चलने वाली साइकिल भी अपने आप में एक अनोखी चीज़ है और इसका इस्तेमाल भी कई बार बाढ़ में पीड़ितों को बचाने के लिए किया गया है. उन्होंने ख़ुद उक्त साइकिल मोतीझील और जटवा स्थित सिकरहना नदी, पटना स्थित बांसघाट में चलाई थी, जहां देखने के लिए काफ़ी भीड़ भी उमड़ी थी. चार साल पूर्व अहमदाबाद में आयोजित एएनआईएफ के सम्मेलन में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने भी इन्हें सम्मानित किया था. साथ ही एक लाख रुपये भी दिए थे. एक दशक पूर्व भी उन्होंने पटना में गणतंत्र दिवस के अवसर पर झांकी निकाली थी, जहां पूर्व राज्यपाल अखलाकुर्रहमान किदवई के हाथों से प्रथम पुरस्कार मिला था. अब तक राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हुए कार्यक्रमों में अव्वल स्थान प्राप्त करने वाला अविष्कारक 26 जनवरी, 2012 को आयोजित गणंतत्र दिवस समारोह में भी झांकी निकाली थी. यहां भी उन्हें अव्वल स्थान मिला. हालांकि विदेशों से ऑफर मिलते रहे, किंतु इन्होंने अपना अविष्कार विदेशी शक्तियों को देना मुनासिब नहीं समझा. लेकिन शायद उन्होंने विदेशियों की डील स्वीकार ले लेती तो आज ऐसी नौबत नहीं आती. आज यह आविष्कारक इन दिनों अपने द्वारा बनाई गई साइकिल पर शहर घूम-घूम कर बेचकर अपने बाल बच्चों की परवरिश कर रहा है. बंजरिया प्रखंड के जटवा गांव में जन्मे मो. सैदुल्लाह बचपन से ही कुछ नया करने का हुनर रखते थे. मोतिहारी आने के बाद उन्होंने अपनी पूरी ज़िंदगी अविष्कारों में लगा दी.

वह बताते हैं कि केवल उनकी पीठ थपथपाई गई और केवल शील्ड देकर ही बहलाया गया. सरकार व प्रशासन चाहती तो उनके अविष्कृत यंत्रों को पेटेंट कराती और इससे देश व समाज को काफ़ी लाभ होता. अब उनके पास रहने भर के लिए मात्र एक घर रह गया है. उनके दो पुत्रियां व एक पुत्र हैं. आमदनी का कोई ज़रिया नहीं होने के कारण ज़मीन बेचने के अलावा उनके पास दूसरा कोई विकल्प नहीं था. अगर उन्होंने अविष्कार में अपनी पुश्तैनी ज़मीन नहीं बेची होती तो ये दिन देखना नहीं पड़ते. आख़िर प्रशासन व सरकार उनके अविष्कृत यंत्रों पर विचार क्यों नहीं करती. ज़िलेवासी तरह-तरह के क़यास लगाते हैं, लेकिन उनकी हालत की चिंता न तो प्रशासन को है और न ही सरकार को.

feedback@chauthiduniya.com

पानी व सड़क पर चलने वाली साइकिल समेत दर्जन भर यंत्रों का अविष्कार किया है

चौथी दुनिया

उत्तर प्रदेश
उत्तराखंड

दिल्ली, 13 फरवरी-19 फरवरी 2012

www.chauthiduniya.com

सियासी दलों में गुटबाज़ी

अजय कुमार

जीत के लिए मतवाले राजनेता दूसरों के दलों में तो ख़ूब तांक-झांक कर रहे हैं, लेकिन अपने घरों की तरफ़ से मुंह मोड़े हुए हैं. उन्हें दूसरों की कमियां तो दिखाई दे रही हैं, लेकिन उनके घर में क्या हो रहा है, इस ओर किसी का ध्यान नहीं है. राजनेताओं की यह कमज़ोरी उनके लिए भारी पड़ सकती है. कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, समाजवादी पार्टी और राष्ट्रीय लोकदल सबके घर में कोहराम मचा हुआ है, लेकिन इसे दूर करने की बजाय इन दलों के आक़ा या तो इस पर पर्दा डाल रहे हैं अथवा अनदेखा करते जा रहे हैं. उनकी यह प्रवृत्ति चुनावी समर में बड़ा गुल खिला सकती है. जिस समय एक-एक सीट पर जीत मायने रखती हो, उस समय अगर दल में दुराव के कारण पार्टी को कोई नुक़सान होता है तो सत्ता के दावेदार दलों का बना-बनाया खेल बिगड़ सकता है.

वैसे तो सभी दलों के भीतर गुटबाज़ी और टांग खिंचाई का दौर चल रहा है, लेकिन बसपा, सपा और कांग्रेस के मुक़ाबले भाजपा से यह अधिक दिखाई पड़ता है. शायद इसकी वजह यह हो सकती है कि भाजपा को छोड़कर अन्य दलों में एक तरह से नेतृत्व के स्तर पर तानाशाही जैसा माहौल है. कांग्रेस में सोनिया और राहुल की, समाजवादी पार्टी में मुलायम-अखिलेश की, बसपा में मायावती की, राष्ट्रीय लोकदल में अजित सिंह चौधरी और जयंत सिंह चौधरी की तानाशाही चलती है. इन लोगों के सामने किसी और को सिर उठाने का मौक़ा नहीं मिलता. कई मौक़ों पर इनकी कही बात पत्थर की लकीर जैसी हो जाती है, इसमें सही-ग़लत नहीं देखा जाता है. ये लोग पार्टी लाइन से अलग हटकर फ़ैसला लेने की भी क्षमता रखते हैं, लेकिन भारतीय जनता पार्टी में ऐसा नहीं है. इसमें दिखावे का ही सही, लोकतंत्र तो है. लेकिन अफ़सोस की बात यह है कि भाजपा को इसका फ़ायदा कम और नुक़सान ज़्यादा उठाना पड़ता है. आज उत्तर प्रदेश में स्थिति यह है कि भाजपा का छोटे से लेकर बड़ा नेता तक अपने आप को पार्टी से ऊपर समझता है. वह किसी की सुनने को तैयार नहीं रहता. यही वजह है कि भारतीय जनता पार्टी की मतदाताओं के बीच सर्वाधिक स्वीकार्यता होने के बाद भी इसका जनाधार घटता जा रहा है. भाजपा में गुटबाज़ी चरम पर है. लगभग सभी शीर्ष नेताओं के अपने-अपने गुट बने हुए हैं. राजनाथ सिंह, कलराज मिश्र, लाल जी टंडन, विनय कटियार, सूर्य प्रताप शाही, केशरी नाथ त्रिपाठी, रमापति शास्त्री सभी को पार्टी से अधिक अपने हितों की चिंता है. कोई यह समझने को तैयार नहीं है कि अगर पार्टी है तो उनका वजूद है. चुनावी समर में भी यह दिग्गज नेता अपने आप को गुटबाज़ी से बचा नहीं पाए. कोई अपनों को टिकट दिलाने के लिए गुटबाज़ी करता रहा तो किसी को चिंता इस बात की थी कि कैसे उनके बेटे-बेटियों को टिकट मिल जाए, जिसके बेटे-बेटियों और चहेतों को टिकट नहीं मिला वह नाराज़ होकर बैठ गया, जिसको मिला वह पार्टी के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी आदि सब कुछ भूलकर इन लोगों को जिताने में जुट गया. सांसद लाल जी टंडन जैसे नेता बेटे को टिकट मिलने से ख़ुश हैं तो सांसद आदित्यनाथ योगी जैसे नेता और धर्मगुरु अपने चहेतों को टिकट नहीं दिला पाने से कुपित होकर पार्टी को गहरे गड्ढे में ढकेल देना चाहते हैं. पार्टी कहीं से लेकर कहीं तक सत्ता की दौड़ में नहीं दिख रही है, लेकिन पार्टी के 4-5 बड़े नाम सीएम पद की दावेदारी मज़बूत करने में जुटे हैं. इन नेताओं की उड़ान ने साध्वी उमा भारती को भी कहीं का नहीं छोड़ा. ख़ुद तो यह नेता (कल्याण सिंह के भाजपा से बाहर जाने के बाद से) कुछ कर नहीं पाए और जब आलाकमान ने नया प्रयोग करते हुए उमा भारती को आगे करके चुनावी रणनीति बनाई तो यही नेता उमा को बाहरी बताकर पार्टी की रणनीति में रोड़े फंसाने लगे. आलाकमान की तमाम कोशिशों के बाद भी वे उमा भारती को अनदेखा करते जा रहे हैं. मक़सद सिर्फ़ एक है किसी भी तरह से उमा को यूपी की राजनीति में हाशिये पर डाल दिया जाए. उत्तर प्रदेश भाजपा के क़रीब दर्जन भर बड़े नेता चुनावी समर में भाजपा को जिताने के लिए हाथ-पैर मारने की बजाय इस बात के इंतज़ार में बैठे हैं कि कैसे पार्टी को नीचा दिखाया जाए. इन नेताओं की कारगुज़ारी के कारण यूपी से बाहर के नेता भी यहां चुनाव प्रचार करने के लिए आने में कतरा रहे हैं. यह वे नेता हैं जिनकी न तो पार्टी से बाहर जाकर जगह बनाने की कोई हैसियत है और न ही पार्टी को बुलंदियों तक ले जाने की क्षमता. बस ड्रांइग रूम की राजनीति ही कर सकते हैं ये नेता. चुनावी रण में जुटे भाजपा प्रत्याशी भी इन नेताओं की वास्तविकता को जानते हैं, इसलिए वह ऐसे नेताओं को अपने यहां प्रचार के लिए बुलाने में कोई रुचि नहीं लेते हैं. एक न एक पचड़ा भाजपा को सताता रहता है. कुशवाहा विवाद सुलझा भी नहीं था कि राजनाथ के बेटे पंकज को महामंत्री बनाए जाने का विरोध शुरू हो गया. आलाकमान कुछ समझ पाता इसी बीच योगी आदित्यनाथ विवाद मुंह बाएं खड़ा हो गया. भाजपा की तरह अपने को सबसे पुरानी पार्टी कहने वाली कांग्रेस भी घर के झगड़ों से बच नहीं पाई है. कांग्रेस में झगड़े का आलम यह हो गया है कि उसके युवराज राहुल गांधी भी इन झगड़ों की तपिश में झुलसते जा रहे हैं. कांग्रेस में नेहरू-गांधी परिवार का जो रुतबा और डर हुआ करता था, वह अब कहीं दिखाई नहीं देता. सोनिया और राहुल की कमज़ोरी का फ़ायदा कांग्रेसी नेता दिल्ली से लेकर उत्तर प्रदेश तक में उठा रहे हैं. एक तरफ़ राहुल कांग्रेसियों को सरकार बनाने का सपना दिखा रहे हैं तो दूसरी तरफ़ उनके ही घर के लोग इसे मज़ाक़ समझ रहे हैं. टिकट बंटवारे को लेकर नेतागण आपस में सिर फुटव्वल करते तो बात दूसरी थी, यह लड़ाई अब युवराज के सामने राजनीतिक मंचों पर भी दिखने लगी है. किसी को बेनी से नाराज़गी है तो कोई रीता से दुखी है. विरोध की चिंगारी राहुल के संसदीय क्षेत्र अमेठी तक में देखी जा सकती है. कांग्रेस और भाजपा में गुटबाज़ी का स्तर तो एक जैसा है, बस फ़र्क़ इतना है कि यहां जिस गुट के सिर पर गांधी परिवार अपना हाथ फेर देता है, इसकी पार्टी में हैसियत रातोरात बढ़ जाती है. इसका सबसे बड़ा उदाहरण उत्तर प्रदेश कांग्रेस के चुनाव प्रभारी दिग्विजय सिंह उर्फ़ दिग्गी राजा हैं. दिग्गी राजा को राहुल का सबसे क़रीबी होने का सौभाग्य मिला तो वह कांग्रेस की ही जड़ों में मट्ठा डालने का काम करने लगे. ऐसे-ऐसे मुद्दों को वह हवा देने लगे, जिससे पार्टी को ही नुक़सान होने लगा. यहां तक कहा जाने लगा कि गांधी परिवार जो बात स्वयं नहीं कह पाता है, वह दिग्गी राजा के मुंह में डालकर कह देता है. दस जनपथ से नज़दीकी क्या हुई दिग्गी राजा अपना अतीत ही भूल गए. उन्हें यहां तक याद नहीं रहा कि मध्य प्रदेश में कांग्रेस की लुटिया डुबोने में उनका ही हाथ था और उनकी उल्टी सीधी बयानबाज़ी से कांग्रेस में जो थोड़ी-बहुत जान दिख रही है, वह भी निकल सकती है. दिग्गी कई बार आलाकमान और अपनी ही केंद्र सरकार को कठघरे में खड़ा करने की गुस्ताख़ी कर चुके हैं. यहां तक की कांग्रेस के पिछले शासन काल में हुए बटला एनकाउंटर कांड को ही वह संदिग्ध बताने लगे. इस पर इनको कई बार मुंह की भी खानी पड़ी, लेकिन वह नहीं माने. आख़िरी बार वह बटला हाउस कांड पर अपनी ही सरकार के ख़िलाफ़ बोले तो किसी को भी यह समझते देर नहीं लगी कि उनके दिन पूरे हो चुके हैं. पानी जब सिर से ऊपर हो गया तो राहुल ने उनसे किनारा करना ही बेहतर समझा. इसके बाद से दिग्गी राजा की हैसियत मीडिया से लेकर कांग्रेस के मंच तक में ख़त्म हो गई. ऐसे ही कांग्रेस की प्रदेश अध्यक्षता रीता बहुगुणा जोशी और कांग्रेस विधानमंडल दल के नेता प्रमोद तिवारी के बीच छत्तीस का आंकड़ा वर्षों से बना हुआ है. अब तो यहां तक कहा जाने लगा है कि इन दोनों नेताओं के बीच का मनमुटाव ऊपर वाला भी दूर नहीं कर सकता है. ऐसे ही कांग्रेस में राजनीति के कई कोण हैं. किसी की धुरी केंद्रीय मंत्री सलमान ख़ुर्शीद हैं तो किसी की बेनी प्रसाद वर्मा, पीएल पुनिया और श्रीप्रकाश जायसवाल जैसे नेतागण. आम कांग्रेसी का टिकट काटकर वंशवाद की बेल आगे बढ़ाई जा रही है. रीता बहुगुणा जोशी, सांसद जगदंबिका पाल, बेनी प्रसाद वर्मा, सलमान ख़ुर्शीद जैसे कई दिग्गज नेता अपने भाई-बच्चों और बीवियों के चक्कर में आम कार्यकर्ता से दूर होते जा रहे हैं. इससे ज़मीन से जुड़े नेताओं और कार्यकर्ताओं में हताशा का माहौल है. कई कांग्रेसी नेता टिकट नहीं मिलने से नाराज़ होकर या तो घरों में बैठ गए हैं या फिर पार्टी उम्मीदवार को जिताने की बजाय हराने की मुहिम में जुटे हैं. नाराज़ कार्यकर्ताओं और नेताओं का ग़ुस्सा शांत करने की बजाय आलाकमान ने उनकी तरफ़ से आंखें ही मूंद ली हैं. समाजवादी पार्टी के घर की चूलें भी गुटबाज़ी और भाई भतीजावाद से बच नहीं पाई हैं, जो थोड़ी बहुत कसर रह जाती है, उसे आज़म ख़ां जैसे नेता कभी डीपी यादव को पार्टी में शामिल करने की कोशिश तो कभी सपा को समर्थन की घोषणा करने वाले जामा मस्जिद के शाही इमाम मौलाना बुख़ारी को खरी-खोटी सुनाकर पूरी कर देते हैं. बात-बात पर गुस्सा होकर बैठ जाना तो आज़म ख़ां की आदत सी हो गई है. इस कारण नेताजी तक को मुश्किलों का सामना करना पड़ता है. अभी कुछ दिन पहले की बात है, सपा ने लखनऊ में अपना घोषणा पत्र जारी किया. इस मौक़े पर आज़म ख़ां की मौजूदगी ज़रूरी थी, लेकिन तुनक मिज़ाज आज़म ख़ां रामपुर में ही डेरा जमाए रहे. बात यहीं नहीं रुकी. मुलायम पूर्वांचल के दौरे पर गए. वहां उनके साथ आज़म ख़ां को मंच शेयर करना था, लेकिन आज़म ख़ां यहां भी नहीं दिखे. आज़म के चलते मुलायम ने क्या-क्या नहीं किया. रसीद मसूद जैसे कई दिग्गज सपा नेताओं को मुलायम ने बाहर का रास्ता दिखा दिया. शिवपाल भी आज़म ख़ां के आने से ख़ुश नहीं बताए जाते थे, वह भी उनके चलते पार्टी में अपनी हैसियत कम करा चुके हैं. राज्यसभा सदस्य मोहन सिंह भी आलाकमान से नाराज़ चल रहे हैं, उनको डीपी यादव प्रकरण में जिस तरह अपमानित करते प्रवक्ता के पद से हटाया गया, उसे वह भूल नहीं पाए हैं. इसके बाद से वह सपा के मंचों पर दिखाई पड़ना बंद हो गए हैं. सपा के कई दिग्गज नेता टिकट नहीं मिलने से नाराज़ चल रहे हैं. कई अन्य दलों में जाकर टिकट हासिल करने में कामयाब हो चुके हैं तो कुछ ऐसे भी हैं जिन्होंने अपनी निष्ठा तो नहीं बदली, लेकिन उन्हें इस बात की भी चिंता नहीं है कि पार्टी का कौन सा प्रत्याशी जीत रहा है और किसकी हार होने वाली है. समाजवादी पार्टी में नेताओं के नाम पर अब आज़म ख़ां के अलावा मुलायम का कुनबा ही नज़र आता है. अखिलेश यादव, शिवपाल यादव, रामगोपाल यादव, धर्मेंद्र यादव के बाद अब चुनावी संग्राम में उनके परिवार के कुछ और नए नाम भी जुड़ गए हैं. सपा ने बसपा से आए नरेश अग्रवाल के बेटे को टिकट देकर उनकी वापसी का स्वागत किया. बसपा की बात की जाए तो बसपा सुप्रीमो की राजनीतिक शैली ही निराली है. बसपा में गुटबाज़ी कोई ख़ास नहीं चल पाती है और नेताओं के विरोध के स्वर भी तभी सुनाई पड़ते हैं, जब उनको बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता है. बसपा में हाल में जो गुटबाज़ी सबसे अधिक चर्चा में रही, वह बसपा नेता और मंत्री नसीमुद्दीन सिद्दीक़ी और पार्टी से बाहर कर दिए गए बाबू सिंह कुशवाहा के बीच देखने को मिली. बुंदेलखंड में राजनीतिक और कारोबारी बढ़त बनाने के चक्कर में दोनों शीर्ष नेताओं के बीच अक्सर ही टकराव की ख़बरें आती रहीं. कुशवाहा और सिद्दीक़ी दोनों ही बहनजी के विश्वासपात्र थे, इसलिए जब बात पार्टी के हितों की आती तो दोनों बसपा को नुक़सान पहुंचाने की बात नहीं सोचते थे. इसलिए उक्त दो नेताओं के बीच लंबी अदावत चलती रही, जो तब ही समाप्त हुई जब तक स्वास्थ्य घोटोले में फंसने के बाद कुशवाहा को बाहर का रास्ता नहीं दिखा दिया गया. विरोध की बात की जाए तो चाहे बाबू सिंह कुशवाहा हो या फिर बादशाह सिंह जैसे दर्जनों नेता. ये सभी तभी बोल पाए, जब उन्हें बसपा ने बाहर निकाल दिया. यहां तक की सांसद धनंजय सिंह, नरेश अग्रवाल जैसे आयातित नेता भी जब तक बसपा में रहे उसी के रंग में रंग कर मुंह सिले बैठे रहे. मायावती का इस तरह की गुटबाज़ी और विरोध से निपटने का अपना तरीक़ा है. वह ऐसी स्थितियों का डटकर मुक़ाबला करती हैं. उन्हें कभी विरोध या बग़ावत से नुक़सान की चिंता नहीं रहती. अगर ऐसा न होता तो वह अपने आधे से अधिक विधायकों का टिकट काटने की हिम्मत शायद ही जुटा पाती. यही काम कांग्रेस, सपा और भाजपा में नहीं हो पाया, जबकि सबको पता है कि सभी दलों में कई ऐसे विधायक हैं जिनकी छवि ख़राब है और वह चुनाव जीतने की स्थिति में भी नहीं हैं. फिर भी उनका टिकट काटने का दुस्साहस बसपा को छोड़ अन्य किसी पार्टी का शीर्ष नेतृत्व चाहकर भी नहीं कर पाया. बसपा सुप्रीमो की हनक और धमक का ही नतीजा है कि तमाम विरोधों के बाद भी बसपा को विरोधियों और बग़ावती नेताओं से कोई बड़ा ख़तरा होता नहीं दिख रहा है. बसपा ने भी वंशवाद की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए स्वामी प्रसाद मौर्य के बेटे, तो कहीं-कहीं अपने दाग़ी मंत्रियों-विधायकों के बीवी-बच्चों को टिकट देकर इस खेल को आगे बढ़ाने का ही काम किया. राष्ट्रीय लोकदल (रालोद) वैसे तो क़रीब-क़रीब पश्चिमी उत्तर प्रदेश तक ही सीमित है, लेकिन विरोध के मामले में यह भी अछूता नहीं रह पाया है. रालोद ने कांग्रेस से हाथ मिलाया तो उनकी नेत्री अनुराधा चौधरी नाराज़ हो गईं .अब वह सपा का परचम फहरा रही हैं और पश्चिमी उत्तर प्रदेश से चौधरी अजित सिंह की हैसियत को चोट पहुंचाने के लिए अजित के पुराने विरोधियों को खींच-खींच कर सपा में लाने की कोशिश कर रही हैं.

ऐसे ही कांग्रेस में राजनीति के कई कोण हैं. किसी की धुरी केंद्रीय मंत्री सलमान ख़ुर्शीद हैं तो किसी की बेनी प्रसाद वर्मा, पीएल पुनिया और श्रीप्रकाश जायसवाल जैसे नेतागण. आम कांग्रेसी का टिकट काटकर वंशवाद की बेल आगे बढ़ाई जा रही है. रीता बहुगुणा जोशी, सांसद जगदंबिका पाल, बेनी प्रसाद वर्मा, सलमान ख़ुर्शीद जैसे कई दिग्गज नेता अपने भाई-बच्चों और बीवियों के चक्कर में आम कार्यकर्ता से दूर होते जा रहे हैं. इससे ज़मीन से जुड़े नेताओं और कार्यकर्ताओं में हताशा का माहौल है. कई कांग्रेसी नेता टिकट नहीं मिलने से नाराज़ होकर या तो घरों में बैठ गए हैं या फिर पार्टी उम्मीदवार को जिताने की बजाय हराने की मुहिम में जुटे हैं. नाराज़ कार्यकर्ताओं और नेताओं का ग़ुस्सा शांत करने की बजाय आलाकमान ने उनकी तरफ़ से आंखें ही मूंद ली हैं. समाजवादी पार्टी के घर की चूलें भी गुटबाज़ी और भाई भतीजावाद से बच नहीं पाई हैं,

feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कांग्रेस-लोकदल की सभाओं में दाढ़ी-टोपी वाले ज़्यादा दिख रहे हैं, तो पूर्वी उत्तर प्रदेश में सपा भारी दिख रही है.

चुनावी हलचल

भंवर में भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष

देवरिया में भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष सूर्य प्रताप शाही का पार्टी के कार्यकर्ताओं व उसके अनुशांगिक संगठन जैसे हिंदू युवा वाहिनी से दुराव होता जा रहा है. संगठन के ये लोग सूर्य प्रताप शाही को हराने के लिए मुहिम चलाने के लिए उतावले दिख रहे हैं. हिंदू युवा वाहिनी शाही के क्षेत्र से अपना प्रत्याशी उतारकर उन्हें हराने के मूड में हैं. हालांकि हिंदू युवा वाहिनी के मुखिया भाजपा सांसद योगी आदित्यनाथ इससे इंकार करते हैं, लेकिन ज़िला इकाई ने स्वयं निर्णय लेकर पत्थरदेवा विधानसभा से ज़िला पंचायत सदस्य राणा प्रताप को अपना प्रत्याशी बनाकर उतार दिया है. पत्थरदेवा विधानसभा से शाही लगातार दो बार चुनाव हार चुके हैं. इस बार वह अपनों से हारते दिख रहे हैं. बहरहाल भाजपा प्रदेश अध्यक्ष पार्टी में ख़ेमेबंदी से ख़ासे परेशान हैं.

दर्शन शर्मा, लखनऊ ब्यूरो

हवाई चुनाव प्रचार में रिकॉर्ड तोड़ ख़र्च

वर्ष 2007 में बसपा ने ख़र्च के जो आंकड़े चुनाव आयोग को दिए थे, उसके मुताबिक़ चुनाव पर कुल ख़र्च 5 करोड़ 84 लाख 42 हज़ार रुपये से अधिक था. इसमें से एक करोड़ दस लाख रुपये सिर्फ़ हवाई उड़ान पर ख़र्च हुए थे. इस चुनाव में सपा ने तो रिकॉर्ड ही तोड़ दिया था. कुल ख़र्च 41 करोड़ 86 लाख रुपये रहा. नेताओं की उड़ानों का ख़र्च 28 करोड़ 37 लाख रुपये से ज़्यादा था. हालांकि इस भारी भरकम ख़र्च के बाद भी सपा सरकार नहीं बना पाई थी. 2007 के ही गुजरात चुनाव में कांग्रेस ने 15 करोड़ 58 लाख रुपये से अधिक ख़र्च किए, इसमें एक बड़ा हिस्सा हवाई यात्रा पर ख़र्च हुआ था. वहीं भाजपा ने गुजरात चुनाव में 10 करोड़ 60 लाख 63 हज़ार रुपये ख़र्च कर डाले थे और इसमें से 2 करोड़ 30 लाख रुपये हेलीकॉप्टर से चुनाव प्रचार पर ख़र्च किए गए थे.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

मतदाताओं का रुझान समाजवादी पार्टी की तरफ़ बढ़ा

अमिताभ आकाश

आगामी विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी फ़ायदे में दिख रही है. इसका मुख्य कारण मतदाताओं की बसपा से नाराज़गी है. विकल्प के रूप में भाजपा को नकार चुके मतदाता सपा की ओर रूख़ कर सकते हैं. पिछले विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी की सरकार के विरूद्व मतदाताओं ने फ़ैसला सुनाया था, जिसका सबसे ज़्यादा फ़ायदा बसपा को हुआ. इस बार ऐसा ही कुछ होता दिखाई दे रहा है.

पिछले विधानसभा चुनाव में सत्ताधारी समाजवादी पार्टी दूसरे स्थान पर थी. जातिगत आधार पर बसपा ने पूर्ण बहुमत हासिल करके चुनाव पूर्व किए गए सारे कयासों को झुठला दिया था. मायावती की सोशल इंजीनियरिंग के फैक्टर ने सियासी दलों को पटखनी दे दी थी. बाह्मण, मुस्लिम और दलित वर्ग के सहारे लंबे समय तक शासन करने वाली कांग्रेस, मंडल आयोग की रिपोर्ट लागू होने के बाद धीरे–धीरे कमजोर होती चली गई. पिछड़ी जातियों के राजनीतिक उभार से राजनीतिक समीकरण गड़बड़ाने लगे और क्षेत्रिय दलों का उदय हुआ. क्षेत्रिय दलों के मुखिया के रूप में मुलायम सिंह यादव, मायावती और बिहार में लालू प्रसाद यादव व नीतिश कुमार के साथ पूरे देश में क्षेत्रिय दलों का उभार हुआ. क्षेत्रिय दलों के अस्तित्व में आने से गंठबंधन की राजनीति का दौर शुरू हो गया. इससे पूर्व क्षेत्रिय दलों का राजनीतिक चिंतन क्षेत्रिय मुद्दों पर ही आधारित था, लेकिन, गठबंधन की राजनीति के साथ क्षेत्रिय दलों का राष्ट्रीय मसलों पर राजनीतिक चिंतन का दौर शुरू हो गया.

कांग्रेस की नीति काफी हद तक प्रांसगिक बनी हुई थी,लेकिन मंडल कमीशन के लागू होने के बाद निकली नई सामाजिक ऊर्जा को ढालने में कांग्रेस को कुछ साल अवश्य लग गये, इसका फायदा उत्तर प्रदेश में सपा और बसपा ने भरपूर उठाया. दूसरी तरफ भाजपा का रूख शत प्रतिशत यथास्थितिवादी ही रहा.

भारत में तीन अलग–अलग विचारधाराओं दक्षिणपंथी, वामपंथी और मध्यममार्गीय राजनीतिक दलों के रूप में भाजपा, कम्यूनिस्ट पार्टियों और कांग्रेस को ही राष्ट्रीय मसलों पर चिंतन करते हुए देखा गया, लेकिन गठबंधन की राजनीति ने राष्ट्रीय दलों के इस एकाधिकार को छीन लिया तो दूसरी तरफ़ राष्ट्रीय दलों को भी जनता की क्षेत्रिय समस्याओं की ओर ध्यान देने के लिए मजबूर होना पड़ा. दरअसल, भारत में यह राजनीतिक बदलाव से पहले का फेस था. 1991 में पूर्व प्रधानमंत्री पीवी नरसिंह राव द्वारा शुरू की गई नई आर्थिक नीति के कारण तेजी से बदलते हालात जिम्मेदार थे. आर्थिक नीति के बदलाव से राजनीतिक बदलाव भी आना स्वाभाविक था. कांग्रेस की नीति काफ़ी हद तक प्रांसगिक बनी हुई थी, लेकिन मंडल कमीशन के लागू होने के बाद निकली नई सामाजिक ऊर्जा को ढालने में कांग्रेस को कुछ साल अवश्य लग गये, इसका फ़ायदा उत्तर प्रदेश में सपा और बसपा ने भरपूर उठाया. दूसरी तरफ़ भाजपा का रूख शत प्रतिशत यथास्थितिवादी ही रहा. बावजूद मंडल का जबाव कंमडल से देते हुये भाजपा ने फौरी तौर पर राजनीतिक लाभ जरूर लिया लेकिन इसकी नीति भविष्य के राजनीतिक स्वरूप को लेकर कतई नहीं थी. परिणाम यह हुआ, भाजपा रसातल में चली गई. सामाजिक विकास की गति के अनुसार स्वयं को ढालने में कमजोर रही कांग्रेस की स्थिति उत्तर प्रदेश सहित अन्य राज्यों में कमजोर बनी रही, लेकिन विकल्प के अभाव में केंद्रीय सत्ता की बागडोर मतदाताओं ने कांग्रेस को ही सौंपने में ही भलाई समझी. पिछले कुछ समय से कांग्रेस में पार्टी के संघीय ढांचे में बदलाव होने से पार्टी की स्थिति अपेक्षाकृत मजबूत होने लगी है. राहुल गांधी द्वारा कांग्रेस में युवाओं को आगे लाने की मुहिम ने पार्टी को ताक़त देने का काम किया. उत्तर प्रदेश और बिहार में कांग्रेस की दुर्गति को देखते हुए उन्होंने आम मतदाता से जुड़ने का सफल प्रयास किया. बावजूद, चुनाव परिणामों में उन्हें सफ़लता हासिल नहीं हुई. युवाओं को कांग्रेस से जोड़ने के राहुल गांधी के प्रयासों का असर पूरे देश की राजनीति पर पड़ा. लगभग सभी राजनीतिक दलों ने नए चेहरों को पार्टी में लाना शुरू कर दिया. वास्तव में यह राजनीतिक बदलाव का एक और चरण था.

मुलायम सिंह यादव ने उत्तर प्रदेश में अपने पुत्र अखिलेश यादव को प्रोजेक्ट कर संकेत दे दिया कि वह भी राजनीतिक बदलाव के दौर में पीछे नहीं हैं. स्वयं मुलायम सिंह यादव साईकिल यात्रा के माध्यम से मतदाताओं को पार्टी से जोड़ने का अभियान चलाते थे. अब यह काम अखिलेश यादव कर रहे हैं. उनकी साईकिल यात्राओं को मिले जनसमर्थन से साफ़ हो चुका है कि इस बार विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी फ़ायदे में रहेगी. उत्तर प्रदेश की सत्ता को हासिल करने के लिए पार्टी जी जान से जुटी हुई है.

feedback@chauthiduniya.com

फ़तेहाबाद में होगा त्रिकोणीय संघर्ष

आगरा ज़िले की फ़तेहाबाद विधानसभा सीट पर दो दशक से भी ज़्यादा समय से ठाकुरों का दबदबा रहा है. ठाकुर और ब्राह्मण बहुल विधानसभा में उम्मीदवारों की क़िस्मत का फ़ैसला दलित, पिछड़े ही करते आए हैं. पिछले 28 सालों से कांग्रेस इस सीट से जीत के लिए तरसती रही है. 1984 में यहां से कांग्रेस अंतिम बार विजयी रही थी. फ़तेहाबाद विधानसभा क्षेत्र में नगर पालिका और नगर पंचायत के अतिरिक्त 18 न्याय पंचायतें भी है. मतदाताओं की संख्या लगभग दो लाख साठ हज़ार है, इनमें महिला मतदाता लगभग सवा लाख हैं. इस क्षेत्र में बसपा का मुख्य वोट बैंक जाटव और सपा का मुख्य वोट यादवों की संख्या निर्णायक स्थिति में नहीं है. समाजवादी पार्टी ने विधायक राजेंद्र सिंह को टिकट देकर अपनी ताक़त में इज़ाफ़ा कर लिया है. बसपा ने पूर्व विधायक छोटेलाल वर्मा पर विश्वास जताया है. कांग्रेस समर्थित रालोद प्रत्याशी सतीश उपाध्याय चुनावी मैदान में भाग्य आज़मा रहे हैं. भाजपा ने गिरराज सिंह कुशवाहा को टिकट थमाकर जाति समीकरणों में सेंध लगाने का प्रयास किया है. 1989 में यहां से जनता दल से बहादुर सिंह चुने गए थे. 1991 में ही जनता दल से विजयपाल सिंह चुने गए. 1993 में भाजपा के छोटेलाल वर्मा को विजय मिली, वर्ष 1996 में जनता दल के विजयपाल सिंह दोबारा विधायक चुने गए. वर्ष 2002 और 2007 के विधानसभा चुनाव में भाजपा ने जीत हासिल की. भाजपा सीट से चुने गए विधायक राजेंद्र सिंह अब समाजवादी पार्टी से खड़े हुए हैं, जिससे भाजपा का गणित लड़खड़ा गया है. क्षत्रिय बहुल क्षेत्र में क्षत्रिय सपा प्रत्याशी के पक्ष में दिखाई पड़ रहा है, जिससे सपा ने इस सीट पर पहली बार बढ़त हासिल की है. भाजपा यहां से तीन बार चुनाव जीत चुकी है, लेकिन वह मुख्य संघर्ष में दिखाई नहीं दे रही है. क्षत्रिय मतदाताओं में भाजपा की स्थिति लगातार कमज़ोर हुई है. कुशवाहा वोटों के समर्थन से भाजपा बसपा प्रत्याशी के लिए ज़्यादा नुक़सानदेह साबित हो सकती है, क्योंकि यह वोट बसपा का समर्थक रहा है. रालोद प्रत्याशी सतीश उपाध्याय को बाह्मणों का अच्छा ख़ासा समर्थन मिल रहा है. कांग्रेस का समर्थन होने के कारण रालोद प्रत्याशी मुख्य संघर्ष में है. यह संभव भी है कि चुनाव बाद वह कोई अप्रत्याशित परिणाम भी दे सकते हैं.

इस क्षेत्र में बसपा का मुख्य वोट बैंक जाटव और सपा का मुख्य वोट यादवों की संख्या निर्णायक स्थिति में नहीं है. समाजवादी पार्टी ने विधायक राजेंद्र सिंह को टिकट देकर अपनी ताक़त में इज़ाफ़ा कर लिया है. बसपा ने पूर्व विधायक छोटेलाल वर्मा पर विश्वास जताया है.

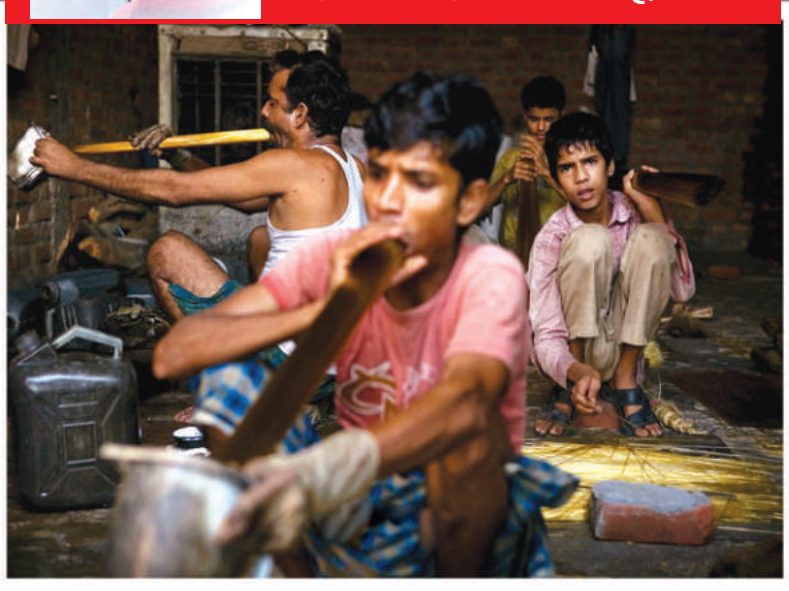

राजेश तोमर
feedback@chauthiduniya.com

मुस्लिम वोटर जज़्बात से उबरे वादों में उलझे

चुनावी समर में 19 फ़ीसदी से अधिक मुस्लिम आबादी को अपने पाले में खींचने के लिए सपा, कांग्रेस और बसपा सरीखे बड़े दल तो सक्रिय हैं ही, उलेमा काउंसिल, पीस पार्टी और क़ौमी एकता दल जैसे नए संगठन बड़ों का खेल बिगाड़ने में शिद्दत से लगे हैं. सियासी दलों ने काफी संख्या में मुस्लिम प्रत्याशी चुनाव मैदान में उतारे हैं. भाजपा ने सहसवान (बदायूं) सीट से शकील अहम सैफ़ी को प्रत्याशी बनाया है. दरअसल, सबकी टोकरी में इस समुदाय के लिए वादों के एक से एक लॉलीपॉप है. सबकी कोशिश सियासी बांसुरी से ऐसी धुन निकालने की है कि क़ौम इसके लिए झूम उठे.

मुस्लिम समुदाय आरक्षण, बटला कांड तथा प्रतिनिधित्व के अनुपात को लेकर हो रहे वादों और इरादों में उलझा नज़र आ रहा हैं. इलाक़े वार मुद्दे अलग-अलग हैं. आज़मगढ़, जौनपुर इलाक़ों में अगर बटला कांड मुसलमानों को उद्धेलित कर रहा है, तो बनारस के आस-पास के इलाक़ों में बुनकरों के बीच अब राहुल गांधी की भी चर्चा होने लगी है. गाज़ीपुर-मऊ में मुख्तार भाई की पार्टी के प्रति आकर्षण कम नहीं. पीस पार्टी के डॉ. अयूब गोरखपुर के आसपास अपनी रैलियों में अच्छी भीड़ जुटा रहे हैं. चुनावी रैलियों में मुस्लिमों की भागीदारी को राजनीतिक दलों के प्रति झुकाव की बानगी मानें, तो इसमें भी अलग-अलग रंग दिख रहे हैं. पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कांग्रेस-लोकदल की सभाओं में दाढ़ी-टोपी वाले ज़्यादा दिख रहे हैं, तो पूर्वी उत्तर प्रदेश में सपा भारी दिख रही है. मध्य उत्तर प्रदेश में कांग्रेस भी दौड़ में शामिल होती नज़र आ रही हैं, जिन सीटों पर बसपा का प्रत्याशी मुस्लिम है, वहां भाई की राह मज़बूत करने को क़ौम हाथी पर चढ़ने में गुरेज़ करती नहीं दिख रही है. साफ़ है, मुसलमान चुनावी जलसे में वोट बैंक की शक्ल में नहीं होगा. मुरादाबाद, अलीगढ़ और आज़मगढ़ जैसे मुस्लिम बहुल इलाक़ों में क़ौम का मिज़ाज टटोलने पर कमोबेश यही तस्वीर उभर रही है.पर यह साफ़ है कि हिंदुत्व के उफ़ान पर न होने की स्थिति में मुस्लिम जिस तरफ़ ज़्यादा झुकेगा, वही दल सत्ता की दौड़ में आगे होगा.

मुस्लिम वोट प्रतिशत

पार्टी	वर्ष 2007 विधानसभा	वर्ष 2009 लोकसभा
सपा	46 प्रतिशत	30 प्रतिशत
कांग्रेस	12 प्रतिशत	24 प्रतिशत
बसपा	20 प्रतिशत	19 प्रतिशत
भाजपा	02 प्रतिशत	06 प्रतिशत
अन्य	20 प्रतिशत	21 प्रतिशत

मुस्लिम समुदाय आरक्षण, बटला कांड तथा प्रतिनिधित्व के अनुपात को लेकर हो रहे वादों और इरादों में उलझा नज़र आ रहा हैं. इलाक़े वार मुद्दे अलग-अलग हैं. आज़मगढ़, जौनपुर इलाक़ों में अगर बटला कांड मुसलमानों को उद्वेलित कर रहा है, तो बनारस के आस-पास के इलाक़ों में बुनकरों के बीच अब राहुल गांधी की भी चर्चा होने लगी है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

अमर की बात आज़म ख़ां की चर्चा किए बिना अधूरी रहती है. कभी अमर के कारण आज़म बाहर थे और आज आज़म के कारण अमर अलग-थलग पड़े हुए हैं.

अप्रत्याशित होगा विधानसभा का चुनाव परिणाम

इस बार चंद्र भूषण राजभर बहुजन समाज पार्टी के प्रत्याशी हैं. उन्हें हरिजन बिरादरी का वोट तो मिल रहा है लेकिन ब्राह्मण मत नहीं मिल रहा है , उनकी बिरादरी राजभर में उनके वोटों में विभाजन की संभावना है क्योंकि भारतीय समाज पार्टी ने विनोद तिवारी को चुनाव लड़ाया है. संभावना यह भी है कि एक मात्र ब्राह्मण प्रत्याशी विनोद तिवारी के पक्ष में ब्राह्मणों का ध्रुवीकरण हो जाए और विनोद तिवारी ब्राह्मणों व राजभरों का वोट पाकर अच्छा प्रदर्शन करते हुए ख़ुद तो नहीं जीत पाएंगे लेकिन चंद्र भूषण राजभर को ज़रूर हरा देंगे.

बलिया उत्तर प्रदेश के पूर्वी हिस्से का एक छोटा-सा ज़िला है लेकिन राजनीतिक दृष्टि से काफ़ी महत्वपूर्ण माना जाता रहा है. पिछले चुनाव में ज़िले की आठ सीटों में से छ: पर बहुजन समाज पार्टी तथा दो पर समाजवादी पार्टी के प्रत्याशियों ने जीत हासिल की थी. यहां हर पार्टी के प्रत्याशियों के लिए समीकरण बदले हुए हैं. कुछ के चुनाव क्षेत्र बदले हुए हैं तो कुछ के चुनाव क्षेत्र में भौगोलिक परिवर्तन हुए हैं. इस चुनाव में भी जाति और धर्म की महत्वपूर्ण भूमिका होगी.

बलिया

यहां बहुजन समाज पार्टी के उम्मीदवार पहली बार चुनाव लड़ रहे हैं. ब्राह्मण मतों का ध्रुवीकरण नागेंद्र पांडेय के पक्ष में हो सकता हैं लेकिन अन्य बिरादरी के मतों का समर्थन न होने की वजह से सफलता नहीं के बराबर है. समाजवादी पार्टी ने इसी विधानसभा क्षेत्र एक भूमिहार प्रत्याशी नारद राय को अपना प्रत्याशी बनाया है. समाजवादी पार्टी से नाराज़ लोग सदर विधानसभा क्षेत्र से यादव या पिछड़ी जाति का प्रत्याशी चाहते थे. इस नाराज़ गुट का नेतृत्व समाजवादी पार्टी के पूर्व ज़िला अध्यक्ष डॉ. विश्राम यादव व विश्वनाथ चौधरी कर रहे हैं. दोनों का यादव बिरादरी में गहरी पैठ है जिसके चलते यादव बिरादरी का एक बड़ा हिस्सा इनके नेतृत्व में कौमी एकता दल के प्रत्याशी रामजी गुप्ता के साथ जा रहा है.

द्वाबा

इस विधानसभा का नाम बदल कर बैरिया विधानसभा क्षेत्र कर दिया गया है. यहां मुख्य मुक़ाबला कांग्रेस, बहुजन समाज पार्टी, समाजवादी पार्टी और भारतीय जनता पार्टी के बीच है. इस बार बहुजन समाज पार्टी ने सुभाष यादव को टिकट न देकर मुक्तेश्वर को दिया है. मुक्तेश्वर सिंह राजनीतिक क्षेत्र में बिल्कुल नए हैं और वहां भारतीय जनता पार्टी ने भरत सिंह को लड़ाया है. भरत सिंह इस क्षेत्र से कई बार विधायक व मंत्री रह चुके हैं, उन्हें स्वजातीय लोगों का समर्थन प्राप्त है. पिछली बार सुभाष यादव तीन जातियों का वोट पाकर चुनाव जीते थे और भरत सिंह दूसरे क्रम में थे. इस बार चूंकि तीनों में से ब्राह्मण न तो बसपा में जा रहे हैं और न ही सुभाष यादव के साथ जा रहे हैं. कांगेस प्रत्याशी सुभाष यादव और समाजवादी पार्टी के प्रत्याशी जय प्रकाश अंचल दोनों यादव मतों का विभाजन करके एक सीमा तक सीमट कर रह जाएंगे.

बांसडीह

अबकी बार शिव शंकर चौहान को टिकट न देकर बहुजन समाज पार्टी ने बड़े लाल मौर्य को लड़ाया है और शिव शंकर चौहान जनता दल यू के टिकट पर चुनाव लड़ रहे हैं. यहां बच्चा पाठक और राम गोबिंद चौधरी के बीच निर्णायक संघर्ष होगा. राम गोबिंद चौधरी चंद्र शेखर के काफ़ी निकट रहे हैं जिसकी वजह से राजपूत भी इनका समर्थन करते रहे हैं. इस आधार पर ये यादव, मुसलमान व राजपूत बिरादरी के कुछ लोगों का वोट पाकर जीत सकते हैं.

सिकंदरपुर

यहां मुक़ाबला मुहम्मद जियाउद्दीन रिजवी, चंद्रभूषणराजभर, राजधारी और सुदामा सिंह के बीच है. पिछली बार के चुनाव में बहुजन समाज पार्टी के भगवान पाठक ने ब्राह्मण व हरिजन बिरादरी का वोट पाकर जीत हासिल की थी. इस बार चंद्र भूषण राजभर बहुजन समाज पार्टी के प्रत्याशी हैं. उन्हें हरिजन बिरादरी का वोट तो मिल रहा है लेकिन ब्राह्मण मत नहीं मिल रहा है. उनकी बिरादरी राजभर में उनके वोटों में विभाजन की संभावना है क्योंकि भारतीय समाज पार्टी ने विनोद तिवारी को चुनाव लड़ाया है. संभावना यह भी है कि एक मात्र ब्राह्मण प्रत्याशी विनोद तिवारी के पक्ष में ब्राह्मणों का ध्रुवीकरण हो जाए और विनोद तिवारी ब्राह्मणों व राजभरों का वोट पाकर अच्छा प्रदर्शन करते हुए ख़ुद तो नहीं जीत पाएंगे लेकिन चंद्र भूषण राजभर को ज़रूर हरा देंगे. तब लड़ाई कांग्रेस प्रत्याशी राजधारी और समाजवादी पार्टी के मुहम्मद जियाउद्दीन रिजवी के बीच होगी लेकिन दो राजपूत प्रत्याशी राजधारी व भारतीय जनता पार्टी के सुदामा सिंह की वजह से राजपूत मतों में विभाजन होगा और दोनों हारेंगे ऐसी परिस्थिति में रिजवी की उम्मीदवारी सशक्त मानी जानी चाहिए. बेल्थरा रोड विधानसभा यहां समाजवादी पार्टी के गोरख पासवान की स्थिति मजबूत दिखती है.

रसड़ा व फेफना

रसड़ा से बहुजन समाज पार्टी से उमाशंकर सिंह, भारतीय जनता पार्टी से राम इकबाल सिंह, कांग्रेस से बब्बन राजभर, समाजवादी पार्टी से सनातन पांडेय और भारतीय समाज पार्टी से तारामणि की उम्मीदवारी है. यहां तारामणि का भविष्य दिख रहा है और फेफना की जहां तक स्थिति है वहां कौमी एकता दल से संग्राम सिंह यादव, कांग्रेस से सुधरी राय, समाजवादी पार्टी से अंबिका चौधरी और भारतीय जनता पार्टी से उपेंद्र तिवारी चुनाव लड़ रहे हैं. उपेंद्र तिवारी ने अपनी सक्रिय व संघर्षशील छवि बनाई है. जातिवादी समीकरण में मात खा जाएंगे. कुल मिलाकर देखा जाए तो अंतत: संग्राम सिंह यादव की अच्छी स्थिति दिख रही है.

अजय कुमार पाण्डेय
feedback@chauthiduniya.com

आगरा छावनी

जो जीता वही सिकंदर

आगरा छावनी क्षेत्र परिसीमन से पूर्व सामान्य सीट में था, जो अब सुरक्षित क्षेत्र हो गया है. यह इलाक़ा शहर के सबसे संवेदनशील इलाक़ों में एक माना जाता है. यहां हिंदु-मुस्लिमों की मिश्रित आबादी है. सांप्रदायिक तनाव के साथ सांप्रदायिक एकता की मिसाल दोनों का रूप समय-समय पर देखने को मिलता रहा है. कभी यह क्षेत्र कांग्रेस का गढ़ था. कांग्रेस के अवसान के बाद सांप्रदायिक राजनीति के कारण भाजपा ने भी यहां से जीत का परचम लहराया था. राम मंदिर के आंदोलन का मुद्दा थम जाने से भाजपा का सूपड़ा भी साफ़ हो गया है. 2002 के विधानसभा चुनाव में बसपा के चौधरी बशीर यहां से चुने गए थे. प्रदेश से अधिकतर विधायक युवा थे. अनुभवहीनता के कारण वे विवादों में घिर गए और उनके समर्थक दलित मतदाता ही उनके ख़िलाफ़ हो गए. 2007 में हुए विधानसभा चुनाव में बसपा ने चौधरी बशीर की जगह युवा व्यवसायी जुल्फ़िकार अहमद भट्टो को टिकट दे दी, इस बार दलितों ने उनका पुरज़ोर समर्थन किया और बसपा ने लगातार दूसरी बार छावनी सीट पर क़ब्ज़ा कर लिया.

नए परिसीमन के बाद छावनी सीट पर जातिगत समीकरणों में बदलाव आया है, लेकिन मुस्लिम, दलित मतदाताओं की स्थिति में ज़्यादा फ़र्क़ नहीं आ पाया है. इस क्षेत्र के काफ़ी हिस्से आगरा दक्षिण से जोड़ दिए गए हैं. सुरक्षित सीट बन जाने से दलित वोटों के बंट जाने का नुक़सान बसपा को होने की संभावना बन रही है, लेकिन बसपा इस विधानसभा में अभी भी बेहद मज़बूत स्थिति में दिखाई दे रही है. बसपा ने दक्षिण सुरक्षित सीट से विधायक गुटियारी लाल दुबेश को टिकट दी है. समाजवादी पार्टी ने दो बार पार्षद रह चुके चंद्रसेन टपलू को टिकट थमाई है. कांग्रेस ने व्यवसायी हरिकिशन पिप्पल को टिकट दी है, जबकि भाजपा ने अपने पुराने कार्यकर्ता डॉ. जी एस धर्मेश को भाग्य आज़माने को मौक़ा दिया है. बसपा विधायक गुटियारीलाल दुबेश का रिकॉर्ड संतोषजनक रहा है. सामान्य तौर पर अपने कार्यकाल के दौरान वह विवादों से दूर ही रहे हैं. उन्होंने अपने विधानसभा क्षेत्र में विकास कार्य भी कराए हैं एवं शहर की सामाजिक गतिविधियों में उपलब्धि भी दर्ज कराई है. कांग्रेस उम्मीदवार पिप्पल इससे पूर्व बसपा की टिकट से चुनाव लड़ चुके हैं. शहरी क्षेत्र मे व्यापारियों में अच्छी पकड़ होने के कारण कांग्रेस ने उनसे उम्मीद लगा रखी है. इस बार कांग्रेस प्रत्याशी की संभावनाएं मज़बूत है.

भाजपा के पास यहां फ़िलहाल वोट बैंक नहीं है. मुस्लिम, दलित मतदाता पार्टी के साथ नहीं है, जबकि सवर्ण कांग्रेस की तरफ़ झुकने लगा है. चुनाव पूर्व तक राहुल गांधी का दौरा आगरा भी होना तय हो गया है. राहुल के आगरा आगमन पर कांग्रेस प्रत्याशी के पक्ष में काफ़ी हद तक समर्थन जुट सकता है, जबकि भाजपा के स्टार प्रचारकों के आगमन के प्रति मतदाताओं में उत्साह भी देखने को नहीं मिल रहा है. कांग्रेस प्रत्याशी को यहां रालोद के समर्थन का आंशिक लाभ भी मिल सकता है. वहीं सपा प्रत्याशी का मुसलमानों का एकमुश्त समर्थन मिलने की संभावना लगने लगी है, क्योंकि भाजपा के ख़िलाफ़ वोट करने का दबाव इस सीट पर नहीं है. मुस्लिम वोट इस बार बसपा की जगह सपा को ही प्राथमिकता दे सकता है. सपा के सरकार बनने की संभावनाओं ने मुस्लिम मतदाताओं को अधिक उत्साहित किया है. बसपा और कांग्रेस भी इन मतों को हासिल करने में सफल होगी. बसपा को छावनी सीट पर झटका लग सकता है. सपा अच्छी स्थिति में है, कांग्रेस शहरी क्षेत्र होने के कारण भाजपा समर्थक मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित कर सकती है. छावनी सीट पर सपा, बसपा और कांग्रेस के बीच त्रिकोणीय मुक़ाबला है. साफ़तौर पर यह कहने की स्थिति नहीं है कि किसका पलड़ा भारी है.

अमिताभ आकाश
feedback@chauthiduniya.com

अब लोकमंच पर ही सुनाई देती है अमर वाणी

संजय सक्सेना

पिस पार्टी की तरह ही लोकमंच भी उत्तर प्रदेश के चुनाव में अपनी अलग बांसुरी बजा रहा है. इसके अगुवा अमर सिंह हैं, जो कभी मुलायम के छोटे भाई समान हुआ करते थे. मजाल थी कि कांग्रेस-बसपा या फिर भाजपा का कोई नेता मुलायम के लिए कोई अपशब्द बोल दे. मुलायम भी अमर पर आंख मूंद कर भरोसा करते थे. लोग तो यहां तक कहते थे कि अमर सिंह ने सपा हाईजैक कर ली है. कल्याण सिंह को समाजवादी पार्टी में लाने वाले भी वही थे. बड़ा नाम था उनका. बड़ी-बड़ी डीलिंग कराने में तो अमर को महारथ ही हासिल है. कई उद्योगपति उनकी मुट्ठी में रहते थे. बॉलीवुड तक में उनकी धमक सुनाई देती थी, एक पिक्चर भी कर चुके हैं, लेकिन जब अपने राम समान भाई (मुलायम सिंह) से रूठे तो उनको ही मिट्टी में मिला देने की बात करने लगे. रामजी से नाराज़गी का आलम यह रहा कि उसके सामने बसपा की बहनजी से नाराज़गी बौनी पड़ गई. मुलामय को नीचा दिखाने के लिए अब अमर बसपा की बहनजी की तारीफ़ में भी कसीदे

अपने प्रत्याशियों को जिताने के लिए अमर सिंह और जया प्रदा पूरे प्रदेश में जनसभाएं कर रहे हैं. उनकी जनसभाओं में भीड़ भी जुट रही है, लेकिन कोई विजन साफ़ नही है. इसलिए यह भीड़ वोटों में तब्दील हो पाएगी, इस बात की उम्मीद न के बराबर है. ठाकुरों और मुसलमानों से समर्थन की उम्मीद अमर सिंह काफ़ी लगाए बैठे हैं फिर भी चुनाव में लोकमंच का खाता भी खुल जाए तो बड़ी बात समझी जाएगी.

पढ़ने से परहेज़ नहीं करते हैं. शब्दों के धनी हैं. अपने शब्दकोष से ऐसे-ऐसे शब्द निकाल कर लाते हैं कि सामने वाला तिलमिला जाए. सपा ने अमर को बाहर का रास्ता दिखाया तो इस बड़बोले नेता ने कई राजनीतिक दलों के दरवाज़े खटखटाए, लेकिन किसी ने उनके लिए दरवाज़ा नहीं खोला. आरोप तो यह भी है कि संसद में हुए वोट के लिए नोट कांड की स्क्रिप्ट भी अमर सिंह ने ही लिखी थी, जिसके चलते उन्हें बीमारी की हालत में जेल भी जाना पड़ा. अमिताभ बच्चन को वह एक तरफ़ अपना भाई बताते रहे तो दूसरी तरफ़ पीठ पीछे उनका मज़ाक़ भी उड़ाते रहे. सपा से निकलने के बाद अमर ने कई दुश्वारियां झेलीं, बीमार भी पड़ गए. लोगों ने उनकी तरफ़ से मुंह मोड़ लिया, सिवाय फिल्म स्टार से नेता और सांसद बनीं बनी जयाप्रदा जैसे कुछ लोगों के. इस बीच अमर ने लोकमंच नाम का एक संगठन भी खड़ा कर लिया. इस मंच के माध्यम से पृथक पूर्वांचल की मांग को हवा देने लगे तो प्रदेश को चार राज्यों में बांटने की बसपा सुप्रीमो मायावती के फ़ैसले की खुलकर वकालत भी करने लगे. चुनाव क़रीब आया तो लोकमंच के प्रत्याशी उतारने की बात होने ही नहीं लगी, कई जगह प्रत्याशी उतार भी दिए गए.

आजकल अपने प्रत्याशियों को जिताने के लिए अमर सिंह और जयाप्रदा पूरे प्रदेश में जनसभाएं कर रहे हैं. उनकी जनसभाओं में भीड़ भी जुट रही है, लेकिन कोई विजन साफ़ नहीं है. इसलिए यह भीड़ वोटों में तब्दील हो पाएगी, इस बात की उम्मीद न के बराबर है. ठाकुरों और मुसलमानों से समर्थन की उम्मीद अमर सिंह काफ़ी लगाए बैठे हैं फिर भी चुनाव में लोकमंच का खाता भी खुल जाए तो बड़ी बात समझी जाएगी. अमर की बात आज़म ख़ां की चर्चा किए बिना अधूरी रहती है. कभी अमर के कारण आज़म बाहर थे और आज आज़म के कारण अमर अलग-थलग पड़े हुए हैं. आज़म को लेकर अमर का गुस्सा आज भी कम नहीं हुआ है. वह आज़म को घेरने का कोई मौक़ा छोड़ना नहीं चाहते हैं. पिछले दिनों वह मुरादाबाद और रामपुर के दौरे पर गए. वहां उन्होंने आज़म का ख़ूब खरी खोटी सुनाई. आवेश में आकर वह यहां तक कह गए कि मुसलमान का बच्चा ख़ूनी हो सकता है, डकैत हो सकता है, लेकिन भिखारी कभी नहीं हो सकता. इस बात को लेकर आज़म खां ने अमर को ख़ूब खरी खोटी भी सुनाई. मुसलमानों को लुभाने के लिए अमर कुछ न कुछ बोलते ही रहते हैं. पिछले दिनों वह सीतापुर अपने प्रत्याशी के प्रचार में पहुंचे तो वहां बड़ी संख्या में मुसलिमों की भागेदारी देखकर वह अपने आप को रोक हीं पाए और बोले कि पोखरन की मिट्टी लेकर आडवाणी जी पूरे देश में घूम-घूम लोगों को बताते रहे कि हमने परमाणु बम बना लिया है. यह बम बनाने वाला एक मुसलमान ही है और वह हिंदुस्तान का प्रथम नागरिक भी बना. बड़ी चतुराई से वह यह बात छिपा जाते हैं कि इस मुसलमान को प्रथम नागरिक बनाने में किसका योगदान सबसे अधिक रहा.

लोकमंच जगह-जगह सत्ता परिवर्तन रैली तो कर रहा है, लेकिन मंच चुनावी लड़ाई में दूर-दूर तक कहीं दिखाई नहीं दे रहा है, फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि लोकमंच के खाते में जितने भी वोट आएंगे, वह समाजवादी पार्टी को ही नुक़सान पहुंचाएंगे. अमर सिंह के लिए यह चुनाव जीवन-मरण का प्रश्न बना हुआ है. अगर वह जीते तो उनका नाम होगा और हारे तो उनके पास हरि नाम जपने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं बचेगा.

feedback@chauthiduniya.com

उत्तर प्रदेश के कई आईएएस अफ़सर ऐसे हैं, जो केंद्रीय प्रतिनियुक्ति पर जाने के लिए लालायित हैं. वे मौजूदा सरकार से एनओसी लेने की तैयारी कर रहे हैं.

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. DELHIN/2009/30467

आधी आबादी को अधूरा न्याय

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

संजय सक्सेना

वर्ष 2012 के विधानसभा चुनाव में महिलाएं भी मैदान में उतर आई हैं. संख्या में कम ही सही, लेकिन कोई भी राजनीतिक दल चुनावी जंग में आधी आबादी की अनदेखी नहीं कर पाया है. किसी दल में महिला नेत्री सुप्रीमो बनी है तो बहुत से दलों में महिला नेत्रियां स्टार प्रचारक के रूप में काम कर रही हैं. बसपा सुप्रीमो मायावती, कांग्रेस की राष्ट्रीय अध्यक्ष सोनिया गांधी और प्रदेश अध्यक्ष डॉ. रीता बहुगुणा जोशी, कांग्रेसी सांसद राजकुमारी रत्ना सिंह, प्रियंका गांधी, भाजपा की उमा भारती, कुसुम राय, मेनका गांधी, हेमा मालिनी, स्मृति ईरानी, सपा की अनुराधा चौधरी, लोकमंच की जयाप्रदा, अपना दल की अध्यक्ष अनुप्रिया पटेल, गुलाबी गैंग की संपत पाल चंद ऐसे नाम हैं, जो राजनीति के मैदान में पुरुषों से अधिक तेज़ी से चमक रहे हैं. इसमें से एक–दो को छोड़कर सभी को राजनीति विरासत में मिली है. आम महिला के लिए अभी भी राजनीति के दरवाज़े नहीं खुले हैं. वह किसी दल में शो पीस की तरह तो रह सकती है, लेकिन सांसद या विधायक बनकर नेता नहीं बन सकती. उसकी बारी जब आती है तो नेतागण ज़मीन से जुड़ी महिला नेत्रियों की जगह अपने परिवार या क़रीबी महिलाओं को ही मौक़ा देते हैं.

महिलाओं को राजनीति में आगे लाने के मामले में उत्तर प्रदेश ने अन्य राज्यों के सामने नज़ीर पेश की है. राजनीति में महिलाओं के पदार्पण की शुरुआत उत्तर प्रदेश से हुई. देश की पहली महिला प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से लेकर मुख्यमंत्री मायावती और कांग्रेस की वर्तमान अध्यक्ष सोनिया गांधी तक को राजनीति के मामले में उत्तर प्रदेश ख़ूब भाया. भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय इंदिरा गांधी की दोनों बहुएं इसी राज्य से लोकसभा में प्रतिनिधित्व कर रही हैं. प्रियंका भी यहां समय–समय पर राजनीति के मैदान में दिख जाती हैं. कभी भाई राहुल गांधी तो कभी मां सोनिया के लिए वह प्रचार करने आती हैं. बात शुरुआती दौर से की जाए तो उत्तर प्रदेश की पहली विधानसभा में 11 महिलाएं चुनकर आई थीं. उत्तर प्रदेश में जो पहला मंत्रिमंडल बना, उसमें कैबिनेट मंत्री के रूप में विजयलक्ष्मी पंडित को शामिल किया गया था. पूर्व प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू की बहन विजयलक्ष्मी का राजनीतिक सफ़र उत्तर प्रदेश से शुरू हुआ तो बाद में वह महाराष्ट्र की राज्यपाल और फिर संयुक्त राष्ट्र संघ की अध्यक्ष की कुर्सी पर विराजमान हुईं. विजयलक्ष्मी पंडित 1952 में लखनऊ 1967 में फूलपुर से लोकसभा के लिए चुनी गईं. किसी महिला को पहली बार राज्यपाल, मुख्यमंत्री और विधान परिषद में नेता मुख्यमंत्री बनाने का रिकॉर्ड भी उत्तर प्रदेश के नाम ही है. पहली महिला राज्यपाल सरोजनी नायडू और मुख्यमंत्री के रूप में सुचेता कृपलानी का नाम दर्ज है. सुचेता 1948–62 में मेहंदावल विधानसभा और 1967 में गोंडा से लोकसभा के लिए चुनी गईं. इससे पूर्व 1961 में विधान परिषद की सदस्य रहीं. मौजूदा सीएम मायावती जिस विधान परिषद सदस्य की हैसियत से प्रदेश की मुख्यमंत्री हैं. इसी सदन में महारानी दोहरे और सुशीला रोहतगी को नेता प्रतिपक्ष रहने का अवसर मिला. रोहतगी कांग्रेस की सरकारों में गृह जैसे महत्वपूर्ण विभागों की मंत्री रहीं. देश के अन्य राज्यों में जितनी भी महिलाएं मुख्यमंत्री हुईं, उनमें मायावती को छोड़कर कोई दूसरा नहीं है, जिसे चौथी बार किसी राज्य के प्रतिनिधित्व का मौक़ा मिला हो. संसद और विधानमंडल के दोनों सदनों की सदस्य रहीं मायावती अपना चौथा कार्यकाल विधान परिषद सदस्य के रूप में ही पूरा कर रही हैं.

वर्ष 2001 में सपा सदस्यों के सामूहिक इस्तीफ़ों के बाद नेता प्रतिपक्ष की कुर्सी बसपा के हिस्से में आई, लेकिन तब यह दायित्व मायावती ने स्वामी प्रसाद मौर्या को सौंप दिया था. मायावती सदन में जब भी आई मुख्यमंत्री के रूप में ही आई. 1996 में मायावती सहारनपुर की हरौड़ा और बदायूं की बिल्सी सीट से एक साथ चुनी गई. फिर 2002 के चुनाव में वह पुन: हरौड़ा के लिए चुनी गई. वर्तमान में वह विधान परिषद की सदस्य हैं. प्रधानमंत्री रहीं इंदिरा गांधी रायबरेली से ही 1967–71–80 में लोकसभा के लिए चुनी गई. गांधी नेहरू परिवार की इस परंपरागत सीट पर इस समय उनकी पुत्रवधू सोनिया गांधी क़ाबिज़ हैं. सोनिया 1999 में अमेठी और बेल्लारी से व 2004–09 में रायबरेली से चुनी गईं, जबकि 2006 में रायबरेली में हुए उपचुनाव में भी वहीं चुनी गई. सोनिया गांधी लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष भी रहीं हैं. वहीं मेनका गांधी एनडीए सरकार में राज्यमंत्री रहीं और वह उत्तर प्रदेश की पीलीभीत सीट से सांसद रहीं. 2009 में मेनका आंवला से लोकसभा सदस्य है. मेनका 1989–96 में जनता दल से 1998–99 में निर्दलीय, 2004 में भाजपा के टिकट पर निर्वाचित हुईं, जबकि मौजूदा नेता प्रतिपक्ष सुषमा स्वराज उत्तर प्रदेश से ही वर्ष 2000 में राज्यसभा की सदस्य बनी. दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित भी दिल्ली की राजनीति में सक्रिय होने से पहले उत्तर प्रदेश की कन्नौज लोकसभा सीट 1984 से सांसद रही हैं. भले ही उत्तर और इससे बाहर निकल कर यहां की महिला नेत्रियों ने ख़ूब नाम कमाया हो, लेकिन आधी आबादी का उत्तर प्रदेश की विधानसभा में आंकड़ा आठ प्रतिशत से अधिक नहीं पहुंच पाया. यह आंकड़ा महिलाओं को राजनीति में आगे लाने का ड्रामा करने वाले पुरुष नेताओं की हक़ीक़त बयां करने के लिए काफ़ी है. बात 1952 की जाए तो तब 347 सीटों की विधानसभा में 4 महिला प्रत्याशी जीत कर सदन तक पहुंच सकीं थीं. इसी प्रकार 1957 और 1962 में ज़रूर महिलाओं का प्रतिनिधित्व एकदम से क्रमश: 18 और 20 तक पहुंच गया. इसके बाद 1967 के चुनाव में 06, 1969 के चुनाव में 18, 1974 के चुनाव में 21,1977 के चुनाव में 11,1980 के चुनाव में 23,1985 के चुनाव में 31, 1989 के चुनाव में 18, 1993 के चुनाव में 14,1996 के चुनाव में 20,2002 के चुनाव में 26 और पिछले विधानसभा चुनाव में 23 महिलाएं ही जीत कर विधानसभा की चौखट तक पहुंच पाईं. यह और बात थी कि विभिन्न राजनीतिक दलों ने महिलाओं के वोट हासिल करने के लिए महिला प्रत्याशियों की संख्या तो बढ़ा दी, लेकिन उन्हें अक्सर ऐसी सीटों पर लड़ाया जाता जहां जीत की संभावनाएं पार्टी को कम होती थीं. इसलिए चुनावी जंग में कूदी महिला प्रत्याशियों की संख्या के मुक़ाबले उनकी जीत का अंतर काफ़ी कम होता था.

feedback@chauthiduniya.com

विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा घोषित महिला उम्मीदवार

2007 के विधानसभा चुनाव में उक्त दलों द्वारा कुल 124 महिला उम्मीदवारों को टिकट दिया गया था. निर्दलीय व अन्य छोटे दलों को मिलाकर यह संख्या 246 तक पहुंच गई थी, अबकी यह आंकड़ा पिछली बार से थोड़ा बेहतर रहने की उम्मीद है. अभी पूरी तरह से स्थिति साफ़ नहीं हो पाई है.

पार्टी	2012 महिला उम्मीदवार	2007 महिला उम्मीदवार
बसपा	30	14
भाजपा	45	34
कांग्रेस	28	34
समाजवादी	37	27
रालोद	12	15

बुकिंग फार्म रसीद सं. 501

लक्ष्मी मीडिया पब्लिकेशन

कार्यालय प्रबन्ध सम्पादक उ.प्र.एवं उत्तराखण्ड : सी–20, ट्रान्स यमुना,एन.एच.–2, आगरा

फोन : 0526–4064901, ई–मेल : chauthiduniyaup.uk@gmail.com

कृपया विवरण भरें और यह बुकिंग फार्म चौथी दुनिया प्रतिनिधि को दें.

☐ जी हां, मैं इस ऑफर और संलग्न नियमों के अंतर्गत बारह महीने की अवधि के लिए चौथी दुनिया अख़बार बुक कराना चाहता/चाहती हूं. बुकिंग राशि 250 रुपये नकद या चेक या डी.डी. तथा अपना आई.डी. प्रूफ लक्ष्मी मीडिया पब्लिकेशन के पक्ष में संलग्न करता/करती हूं.

श्री/श्रीमती.....

पता.....

.....

शहर.....पिन कोड.....

फोन नं० (घर).....(मोबाइल).....

ई-मेल.....

प्राप्त राशि (शब्दों में).....

द्वारा ड्राफ्ट नं०/चेक नं०.....

दिनांक.....से.....तक

हस्ताक्षर प्रतिनिधि

हस्ताक्षर पाठक

सत्ता परिवर्तन के इंतज़ार में आईएएस

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव दूसरे राज्यों के मुक़ाबले काफ़ी रोचक है. हर पांच साल में कोई नई सरकार आ जाती है. एक अरसे के बाद बहुजन समाज पार्टी बहुमत हासिल कर उत्तर प्रदेश के सिंहासन पर आरूढ़ हो पाई, लेकिन इस बार इसके भी त्रिशंकु की चपेट में आने की प्रबल संभावना बन रही है. बुद्धिजीवियों का कहना है कि कोई भी दल बहुमत प्राप्त करने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा है. दूसरी ओर मायावती सरकार के ब्यूरोक्रेट इस बात का अनुमान नहीं लगा पा रहे हैं कि आख़िर वे किसकी नांव पर सवार होंगे. मायावती सरकार में जिनकी पौ–बारह रही वे अब नया आक़ा तलाशने लग गए हैं. वहीं पांच साल पहले दिल्ली के लिए डेपुटेशन पर गए आईएएस लखनऊ लौटने की फ़िराक में हैं. दरअसल यूपी कैडर के कई आईएएस अफ़सरों की पांच साल की केंद्रीय प्रति नियुक्ति की अवधि ख़त्म होने को है. इनमें कुछ ऐसे हैं जो हवा का रुख़ भांपते हुए वर्ष 2006 व 2007 में केंद्रीय प्रतिनियुक्ति पर चले गए थे. अब वे लौटना तो चाहते हैं, लेकिन कोशिश है कि जिधर पलड़ा भारी दिखेगा वहीं संपर्क साधा जाएगा, क्योंकि जब उनका लखनऊ आगमन हो तो उनकी नियुक्ति कहीं उचित स्थान पर हो. दिल्ली में बैठे ये ब्यूरोक्रेट्स वहीं से यूपी की हवा का रुख़ भांपने लगे हैं. इनमें कुछ ऐसे भी आईएएस हैं, जिनकी अवधि पूरी हो चुकी थी, फिर भी दो साल की अतिरिक्त अवधि का विस्तार लेकर उसे पूरा करने वाले हैं. वहीं कुछ

ऐसे हैं जो व्यक्तिगत कारणों से लौटने के मूड में हैं. जिन अफ़सरों की पांच साल की अवधि पूरी हो चुकी है या दो चार महीने बचे हैं, उनमें 80 बैच की आराधना चौधरी, राजीव खेर, देवेंद्र पाल सिंह, 1981 बैच के अनिल स्वरूप, डॉ. हरिकृष्ण, आनंद मिश्रा, देवरकोंडा दीप्ति विलास, 82 बैच के प्रवीर कुमार, नीरज कुमार गुप्ता, 83 बैच के राहुल भटनागर, बीपी नीलरत्न, 84 बैच के अरुण आर्या, शालिनी प्रसाद, 87 बैच के अरुण सिंघल, लीना नंदन, देवाशीष पांडा, हेमंत राव, 88 बैच के टी. वेंकटेश, अरविंद कुमार, 89 बैच की मोनिका एस गर्ग, देवेश चतुर्वेदी 90 बैच की कल्पना अवस्थी प्रमुख हैं. वहीं उत्तर प्रदेश के कई आईएएस अफ़सर ऐसे हैं, जो केंद्रीय प्रतिनियुक्ति पर जाने के लिए लालायित हैं. वे मौजूदा सरकार से एनओसी लेने की तैयारी कर रहे हैं. उनकी संख्या में काफ़ी इज़ाफ़ा हुआ है. इनमें मुख्य सचिव अनूप मिश्रा से लेकर मुख्यमंत्री सचिवालय में तैनात अधिकांश अफ़सर दिल्ली जाना चाहते हैं. इनमें रवींद्र कुमार सिंह, दुर्गा शंकर मिश्र, आरपी सिंह, अनिल संत, यहां तक कि मौजूदा सरकार के बेहद क़रीबी व नियुक्ति कार्मिक व गृह विभाग के प्रमुख सचिव फ़तेह बहादुर सिंह तक का नाम शामिल है. सरकार के एक अन्य क़रीबी अफ़सर मो. मुस्तफ़ा भी इस फ़ेहरिस्त में शामिल हैं. वैसे कई ऐसे आईएएस भी हैं जो किसी भी सरकार में किसी भी हालात में रहने के लिए तैयार रहते हैं, लेकिन लखनऊ छोड़ना नहीं चाहते.

दर्शन शर्मा, लखनऊ ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com